श्री सेठिया जैन ग्रन्थमाला पुष्प नं० १३६

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों का
सप्तम भाग

चौवीसवाँ शतक
(थोकड़ा सं० १६६–गम्मा का थोकड़ा)

अनुवादक—
पं० घेवर चन्द्र बाँठिया 'वीरपुत्र'

प्रकाशक—
अगरचन्द भैरोंदान सेठिया
बीकानेर

प्रथमावृत्ति
१०००

फागुन सुदी ५
वीर सं० २४८७
विक्रम सं० २०१७

मूल्य
बासठ नये पैसे

सागरोपम। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—करोड़पूर्व १७ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ६८ सागरोपम। (९)नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—करोडपूर्व २२ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ८८ सागरोपम।

सातवीं नारकी से ९ गम्मे २२ सागरोपम, और ३३ सागरोपम से कह देने चाहिए—तिर्यंच से इसप्रकार कहने चाहिए—(१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—२ अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, ४ करोड़पूर्व ६६ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—दो अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ६६ सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक—और उत्कृष्ट—दो अन्तर्मुहूर्त तेतीस सागर, तीन करोड़ पूर्व ६६ सागरोपम। (४) जघन्य और ओघिक—दो अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त ६६ सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—दो अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त ६६ सागरोपम। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—दो अन्तर्मुहूर्त ३३ सागरोपम, तीन अन्तर्मुहूर्त ६६ सागरोपम। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—दो करोड़पूर्व २२ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ६६ सागरोपम। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—दो करोड़पूर्व २२ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ६६ सागरोपम। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—दो करोड़पूर्व ३३ सागरोपम, तीन करोड़पूर्व ६६ सागरोपम।

मनुष्य से ६ गम्मे इसप्रकार कहने चाहिए—(१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक-प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, करोड़पूर्व ३३ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य-प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, करोड़पूर्व २२ सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, करोड़पूर्व ३३ सागरोपम। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक-प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—करोड़ पूर्व २२ सागरोपम, करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—करोड़ पूर्व २२ सागरोपम, करोड़ पूर्व २२ सागरोपम। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम, करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम। यहाँ जो ऋद्धिके २० द्वार बताये हैं ये मनुष्य तिर्यंच के सारे भव की अपेक्षा से हैं।

पहला उद्देशा सम्पूर्ण। गम्मा १२५ नाणता (फर्क) ११९ (असन्नी तिर्यंचके ५, सन्नी तिर्यंचके ७० तथा मनुष्यके ४४ कुल ११९)।

दूसरा उद्देशा—घर १ असुरकुमार का—असंज्ञी तिर्यंच आकर उत्पन्न होता है। कितनी स्थिति में उत्पन्न होता है?

सागरोपम। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य-करोड़पूर्व १७ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ६८ सागरोपम (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—करोडपूर्व २२ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ८८ सागरोपम।

सातवीं नारकी से ९ गम्मे २२ सागरोपम, और ३३ सागरोपम से कह देने चाहिए—तिर्यंच से इसप्रकार कहने चाहिए-(१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—२ अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, ४ करोड़पूर्व ६६ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य-दो अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ६६ सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा-ओघिक-और उत्कृष्ट—दो अन्तर्मुहूर्त तेतीस सागर, तीन करोड़पूर्व ६६ सागरोपम। (४) जघन्य और ओघिक—दो अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त ६६ सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य-दो अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त ६६ सागरोपम। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—दो अन्तर्मुहूर्त ३३ सागरोपम, तीन अन्तर्मुहूर्त ६६ सागरोपम। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—दो करोड़पूर्व २२ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ६६ सागरोपम। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—दो करोड़पूर्व २२ सागरोपम, चार करोड़पूर्व ६६ सागरोपम। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—दो करोड़पूर्व ३३ सागरोपम तीन करोड़पूर्व ६६ सागरोपम।

मनुष्य से ९ गम्मे इसप्रकार कहने चाहिए—(१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, करोड़पूर्व ३३ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, करोड़पूर्व २२ सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, करोड़पूर्व ३३ सागरोपम। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—करोड़ पूर्व २२ सागरोपम, करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—करोड़ पूर्व २२ सागरोपम, करोड़ पूर्व २२ सागरोपम। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम, करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम। यहाँ जो ऋद्धिके २० द्वार बताये हैं ये मनुष्य तिर्यंच के सारे भव की अपेक्षा से हैं।

पहला उद्देशा सम्पूर्ण। गम्मा १३५ नाणता (फर्क) ११९ (असन्नी तिर्यंचके ५, सन्नी तिर्यंचके ७० तथा मनुष्यके ४४ कुल ११९)।

दूसरा उद्देशा—घर १ असुरकुमार का—असंज्ञी तिर्यंच आकर उत्पन्न होता है। कितनी स्थिति में उत्पन्न होता है?

तीन पल्योपम और तीन पल्योपम। (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-तीन पल्योपम दस हजार वर्ष, तीन पल्योपम दस हजार वर्ष। (९) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-तीन पल्योपम और तीन पल्योपम, तीन पल्योपम और तीन पल्योपम। ५×९=४५ गम्मा। नाणचा (फर्क) ३४ (असंज्ञी तिर्यंचके ५, संज्ञी तिर्यंचके १०, संज्ञी मनुष्य के ८, युगलिया तिर्यंच के ५, युगलिया मनुष्यके ६)। दूसरा उद्देशा सम्पूर्ण।

तीसरे से ग्यारहवें उद्देशे तक-नागकुमार से लेकर स्तनित-कुमार तक नवनिकायके ९ उद्देशे-असंज्ञी तिर्यंच आकर उपजता है। कितनी स्थितिमें उपजता है? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातवें भाग की स्थितिमें उपजता है। परिमाण, ऋद्धि, गम्मा, नाणचा आदि रत्नप्रभा नरक में असंज्ञी तिर्यंच उपजते जिनके कहे उस तरह कह देना चाहिए। संज्ञी तिर्यंच और संज्ञी मनुष्य आकर उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देश ऊणी दो पल्योपम की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण ऋद्धि गम्मा नाणचा रत्नप्रभा पृथ्वीमें उपजते संज्ञी तिर्यंच और संज्ञी मनुष्यमें कहे उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु देवताकी स्थिति जघन्य दसहजार वर्ष उत्कृष्ट देश ऊणी दो पल्योपम से कहनी चाहिए।

दो प्रकारके युगलिया आकर उपजते हैं। कितनी स्थितिमें उपजते हैं? जघन्य दसहजार वर्ष, उत्कृष्ट देश ऊणी दो पल्योपमकी

दो शब्द

पाठकों की सेवामें श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों का
भाग प्रस्तुत करते हुए बड़ा हर्ष होता है। इस भाग में श्री भ
के चौवीसवें शतक का गम्मा का थोकड़ा है। सरल और सु
में थोकड़े का सही और समीचीन विवेचन देने का हमारा प्र
है। इसी कारण इस भाग में थोकड़े जानने वालों में प्रचलि
भाषिक शब्दों का उपयोग करने में संकोच नहीं किया है। पल्यो
जगह पल और सागरोपम की जगह सागर भी कहीं कहीं प्रयो
गया है। शास्त्रीय विषय को यथार्थ रूप से उपस्थित करने का
करते हुए भी विषय की गहनता और दुरूहता के कारण कहीं
होना भी संभव है। अतः सुज्ञ पाठकों से हमारी प्रार्थना है कि इस
यदि तात्त्विक दृष्टि से कहीं गलती प्रतीत हो तो वे हमें अवश्य सूच
की कृपा करें ताकि आगामी आवृत्ति में संशोधन किया जा सके। प
की इस कृपा के लिये हम उनके कृतज्ञ होंगे।

प्रूफ संशोधन में पूरी सावधानी रखते हुए भी दृष्टिदोष से
प्रेसवालों की कृपा से इस भाग में कुछ गलतियां रह गई हैं जिस
लिये हमें खेद है। पाठकों से निवेदन है कि शुद्धिपत्र के अनुसा
सुधार लेने की कृपा करें।

इस सप्तम भाग के संकलन और संशोधन में परम श्रद्धेय पूज्य
श्री १००८ श्री गणेशीलालजी महाराज साहेब के सुशिष्य शास्त्र मर्मज्ञ
पंडितरत्न स्थविर मुनि श्री पन्नालालजी महाराज सा० ने अपना अमूल्य
समय देकर पूर्ण सहयोग दिया है बल्कि यह इन्हीं की कृपा है कि हम
यह भाग पाठकों की सेवामें उपस्थित करने में समर्थ हो सके हैं। अतः
हम पूज्य मुनि श्री के पूर्ण कृतज्ञ हैं। इस भाग के थोकड़े का अनुवाद
एवं संपादन श्रीमान् पं० घेवरचन्द्रजी बाँठिया 'वीरपुत्र' का किया हुआ
है अतः हम बाँठियाजी के प्रति आभार प्रदर्शित करते हैं।

निवेदक—
भैरोंदान सेठि

स्थिति में उपजते हैं। परिमाण, ऋद्धि, गम्मा, नाणत्ता (फर्क) असुरकुमार में उपजने वाले दो प्रकार के युगलियों में कहे उसी तरह कह देना चाहिये किन्तु तीसरे गम्मे में युगलियों की स्थिति देश ऊणी दो पल की कहनी चाहिये। अवगाहना मनुष्य युगलिया की देश ऊणी दो गाऊ की कहनी चाहिये। ५×९=४५ गम्मा। ३४ नाणत्ता हुए। असुरकुमार की तरह एक एक उद्देशे के ४५, ४५ गम्मा और ३४, ३४ नाणत्ता कह देना चाहियें। ४५×९=४०५ गम्मा हुए। ३४×९=३०६ नाणत्ता (फर्क) हुए।

बारहवां उद्देशा—घर एक पृथ्वीकाय का पांच स्थावर और असंज्ञी मनुष्य आकर उपजते हैं? कितनी स्थितिमें उपजते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट २२००० वर्ष की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण पांच स्थावर चार गम्मा आसरी (१-२-४-५) समय समय असंख्याता उपजते हैं। पांच गम्मा आसरी एक समय में १, २, ३ यावत् संख्याता असंख्याता उपजते हैं। असंज्ञीमनुष्य—एक समय में १, २, ३ यावत् संख्याता असंख्याता उपजते हैं। संहनन (संघयण)—पांच स्थावर असंज्ञी मनुष्य में एक छेवटिया (सेवार्त)। अवगाहना—चार स्थावर असंज्ञी मनुष्य की-जघन्य उत्कृष्ट अङ्गुल के असंख्यातवें भाग, वनस्पति काय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन झाझेरी होती है। संस्थान (संठाण) पृथ्वीकाय का

पृथ्वीकाय में उपजे-(३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त २२००० वर्ष, १२ अहोरात्रि ८८००० वर्ष । (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त और २२००० वर्ष, ४ अन्तर्मुहूर्त और ८८००० वर्ष । (७) सातवां गम्मा-उत्कृष्ट और ओघिक-३ अहोरात्रि और अन्तर्मुहूर्त, १२ अहोरात्रि ८८००० वर्ष । (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-३ अहोरात्रि अन्तर्मुहूर्त, १२ अहोरात्रि ४ अन्तर्मुहूर्त । (६) नववां गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-३ अहोरात्रि २२००० वर्ष, १२ अहोरात्रि ८८००० वर्ष ।

वायुकाय पृथ्वीकाय में उपजे-(३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त और २२००० वर्ष, १२००० वर्ष ८८००० वर्ष । (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त २२००० वर्ष, ४ अन्तर्मुहूर्त ८८००० वर्ष । (७) सातवां गम्मा- उत्कृष्ट और ओघिक-३००० वर्ष और अन्तर्मुहूर्त, १२००० वर्ष ८८००० वर्ष । (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-३००० वर्ष और अन्तर्मुहूर्त, १२००० वर्ष ४ अन्तर्मुहूर्त । (६) नववां गम्मा- उत्कृष्ट और उत्कृष्ट- ३ हजार वर्ष और २२ हजार वर्ष, १२ हजार वर्ष ८८ हजार वर्ष । वनस्पतिकाय पृथ्वीकाय में उपजे-(३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त और २२ हजार वर्ष, ४० हजार वर्ष ८८ हजार वर्ष । (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त और २२ हजार वर्ष, ४ अन्तर्मुहूर्त

८८ हजार वर्ष। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—१० हजार वर्ष और अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष ८८ हजार वर्ष। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—१० हजार वर्ष और अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष और ४ अन्तर्मुहूर्त। (९) नववां गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—१० हजार वर्ष और २२ हजार वर्ष, ४० हजार वर्ष ८८ हजार वर्ष।

असंज्ञी मनुष्य का काल ३ गम्मा का है— (१) पहला गम्मा—जघन्य और ओघिक—अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त और ८८ हजार वर्ष। (२) दूसरा गम्मा—जघन्य और जघन्य—अन्तर्मुहूर्त और अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त और चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—अन्तर्मुहूर्त २२ हजार वर्ष, चार अन्तर्मुहूर्त ८८ हजार वर्ष। पांच स्थावर के ४५ (५×९=४५) गम्मा, असंज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा हुए। पांच स्थावर के ३० नाणत्ता (फर्क) हुए। असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय और तीन विकलेन्द्रिय पृथ्वीकाय में आकर उत्पन्न होते हैं। कितनी स्थिति में उत्पन्न होते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण—४ (१—२—४—५) गम्मों में जघन्य उत्कृष्ट असंख्याता उपजते हैं और शेष ५ गम्मों में एक समय में १, २, ३ यावत् संख्याता असंख्याता उपजते हैं। संहनन—एक छेवटिया (सेवार्त)। अवगाहना—जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट बेइन्द्रिय की १२ योजन, तेइन्द्रिय की तीन

गाऊ, चौइन्द्रिय की ४ गाऊ; असंज्ञी तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय की एक हजार योजन की होती है। संथान (संठाण)- एक हुएडक। लेश्या ३ पहले की। दृष्टि २-सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि। ज्ञान-ज्ञान २ अज्ञान २। योग २। उपयोग २। संज्ञा ४। कषाय ४। इन्द्रिय-बेइन्द्रिय में २; तेइन्द्रिय में ३; चौइन्द्रिय में ४; असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में ५ होती हैं। समुद्घात ३ (वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक)। वेदना २-साता और असाता। वेद १ नपुंसक। आयुष्य-जघन्य अन्तमुहूर्त; उत्कृष्ट बेइन्द्रिय का १२ वर्ष, तेइन्द्रिय का ४६ दिन, चौइन्द्रिय का छह महिना, असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय का-करोड़ पूर्व का होता है। अध्यवसाय २ शुभ और अशुभ। अनुबन्ध-आयुष्य के अनुसार होता है। कायसंवेध के दो भेद-भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा-तीन विकलेन्द्रिय चार गम्मा आसरी-जघन्य दो भव उत्कृष्ट संख्याता भव करते हैं। पांच गम्मा आसरी-जघन्य दो भव उत्कृष्ट ८ भव करते हैं। असंज्ञी तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय-नव ही गम्मा आसरी दो भव आठ भव करता है। कालादेश की अपेक्षा-तीन विकलेन्द्रिय-जघन्य दो अन्तमुहूर्त उत्कृष्ट संख्याता काल का है। असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय-जघन्य दो अन्तमुहूर्त, उत्कृष्ट प्रत्येक करोड़ पूर्व वर्ष का है।

तीन विकलेन्द्रिय पृथ्वीकाय में जाकर उपजते हैं, उसके ६ गम्मा इस प्रकार हैं-(१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-जघन्य दो भव, उत्कृष्ट संख्याता भव, दो अन्तमुहूर्त और

कराना काल । इसी तरह दूसरा, चौथा और पांचवां गम्मा कह देना चाहिये । (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट अन्तमुहूर्त २२ हजार वर्ष, (बेइन्द्रिय का) ४८ वर्ष, (तेइन्द्रिय) का १९६ दिन, (चौरिन्द्रिय का) २४ महिना ८८ हजार वर्ष । (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–अन्तमुहूर्त २२ हजार वर्ष, ४ अन्तमुहूर्त ८८ हजार वर्ष । (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–(बेइन्द्रिय का) १२ वर्ष, (तेइन्द्रिय का) ४९ दिन (चौरिन्द्रिय का) छह महिना अन्तमुहूर्त, ४८ वर्ष १९६ दिन २४ महिना ८८ हजार वर्ष । (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–(बेइन्द्रिय का) १२ वर्ष (तेइन्द्रिय का) ४९ दिन (चौरिन्द्रिय का) छह महीना अन्तमुहूर्त, (बेइन्द्रिय का) ४८ वर्ष (तेइन्द्रिय का) १९६ दिन (चौरिन्द्रिय का) २४ महिना चार अन्तमुहूर्त (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–(बेइन्द्रिय का) १२ वर्ष (तेइन्द्रिय का) ४९ दिन (चौरिन्द्रिय का) छह महिना २२ हजार वर्ष, ४८ वर्ष १९६ दिन २४ महिना ८८ हजार वर्ष ।

असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय पृथ्वीकाय में आकर उपजता है, उसके ९ गम्मा इस प्रकार हैं– (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–अन्तमुहूर्त और अन्तमुहूर्त, चार करोड़पूर्व ८८ हजार वर्ष । (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–अन्तमुहूर्त और अन्तमुहूर्त, चार करोड़पूर्व और चार अन्तमुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–अन्तमुहूर्त और

२२ हजार वर्ष, चार करोड़पूर्व और ८८ हजार वर्ष । (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—अन्तर्मुहूर्त और अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त ८८ हजार वर्ष । (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—अन्तर्मुहूर्त और अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त और चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—अन्तर्मुहूर्त और २२ हजार वर्ष, चार अन्तर्मुहूर्त और ८८ हजार वर्ष । (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—करोड़पूर्व और अन्तर्मुहूर्त, चार करोड़पूर्व और ८८ हजार वर्ष । (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—करोड़पूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार करोड़पूर्व चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—करोड़पूर्व २२ हजार वर्ष, चार करोड़पूर्व ८८ हजार वर्ष ।

३+१=४×९=३६ गम्मा हुए । २७+९= ३६ नाणत्ता (फर्क) हुए ।

संज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय और संज्ञी मनुष्य पृथ्वीकाय में आकर उपजते हैं ? कितनी स्थिति में उपजते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष की स्थिति में उपजते हैं । परिमाण—एक समय में तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय १, २, ३ यावत् संख्याता असंख्याता, मनुष्य १, २, ३ यावत् संख्याता उपजते हैं । संहनन (संघयण)—६—६ । अवगाहना—जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय की १ हजार योजन की, मनुष्य की ५०० धनुष की होती है । संस्थान

(संठाण)–६–६ । लेश्या ६–६ । दृष्टि ३–३ । ज्ञान–तिर्यंच पंचेन्द्रिय में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना, मनुष्य में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । योग ३–३ । उपयोग २-२ । संज्ञा ४-४ । कषाय ४-४ । इन्द्रिय ५-५ । समुद्घात तिर्यंच पंचेन्द्रियमें ५ मनुष्य में ६ । वेदना २-२ साता असाता । वेद ३-३ । आयुष्य–दोनों का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड़पूर्व । अध्यवसाय २-२ शुभ अशुभ । अनुबन्ध—आयुष्य के अनुसार । कायसंवेध के दो भेद–भवादेश, कालादेश । भवादेश की अपेक्षा दोनों जघन्य दो भव, उत्कृष्ट ८ भव करते हैं । कालादेश की अपेक्षा काल ६ गम्मा का होता है । ये ६ गम्मा असंज्ञी तिर्यंच की तरह कह देना चाहिये ।

गम्मा २×६=१८ । नाणत्ता ११+१२=२३ ।

भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक तक के १४ प्रकार के देवता आकर पृथ्वीकाय में उत्पन्न होते हैं । कितनी स्थिति में उत्पन्न होते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष की स्थिति में उत्पन्न होते हैं । परिमाण–एक समय में १, २, ३ यावत् संख्याता असंख्याता । संहनन–नहीं होता, शुभ पुद्गल परिणमते हैं । अवगाहना–जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट ७ हाथ की । उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग, उत्कृष्ट एक लाख योजन की । संस्थान–एक समचतुरस्र, उत्तर वैक्रिय करे तो नाना प्रकार का । लेश्या–भवनपति वाणव्यन्तर में ४, ज्योतिषी पहले

दूसरे देवलोक में १ तेजोलेश्या। दृष्टि ३। ज्ञान–भवनपति वाणव्यन्तर में ३ ज्ञान की नियमा, ३ अज्ञान की भजना, ज्योतिषी पहले दूसरे देवलोक में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की नियमा। योग ३-३। उपयोग २–२। संज्ञा ४–४। कषाय ४–४। इन्द्रिय ५-५। समुद्घात ५-५। वेदना २-२। वेद २-२ स्त्रीवेद, पुरुषवेद। आयुष्य–भवनपति में असुर कुमार का जघन्य दस हजार वर्ष का, उत्कृष्ट एक सागर झाझेरा। नवनिकाय के देवता का–जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देश ऊणा दो पल्योपम। वाणव्यन्तर का जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल्योपम। ज्योतिषी का–जघन्य पल्योपम का आठवां भाग, उत्कृष्ट एक पल्योपम एक लाख वर्ष का। पहले देवलोक का–जघन्य एक पल्योपम उत्कृष्ट दो सागरोपम का। दूसरे देवलोक का–जघन्य एक पल्योपम झाझेरा, उत्कृष्ट २ सागरोपम झाझेरा। अध्यवसाय २–२ शुभ अशुभ। अनुबन्ध–आयुष्य के अनुसार। कायसंवेध के दो भेद–भवादेश, कालादेश भवादेश की अपेक्षा–जघन्य उत्कृष्ट २–२ भव करते हैं कालादेश की अपेक्षा–काल ९ गम्मा का–असुर कुमार से ९ गम्मा–इस प्रकार कह देना चाहिये–(१) पहला गम्मा ओघिक और ओघिक–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–दस हजा

वर्ष २२ हजार वर्ष, एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट –दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष, दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–एक सागरोपम झाझेरा, अन्तर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–एक सागरोपम झाझेरा अन्तर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा अन्तर्मुहूर्त (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष, एक सागरोपम झाझेरा २२००० वर्ष। बाकी देवताओं के गम्मे–अपनी अपनी स्थिति के साथ कह देने चाहिये।

गम्मा १४×९=१२६। नाणत्ता चार चार चौदह स्थानों के ४×१४=५६। कुल गम्मा–४५+३+३६+१८+१२६=२२८ हुए। नाणत्ता–३०+३६+२३+५६=१४५ हुए।

तेरहवां उद्देशा–घर एक अप्काय का २६ स्थानों से आकर जीव अप्काय में उपजते हैं, बाकी सब अधिकार पृथ्वीकाय की तरह कह देना चाहिये किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य अन्तर्मुहूर्त की स्थिति में और उत्कृष्ट ७ हजार वर्ष की स्थिति में उपजते हैं। इसी स्थिति से गम्मा कह देने चाहिये। गम्मा

दूसरे देवलोक में १ तेजोलेश्या। दृष्टि ३। ज्ञान–भवनपति वाणव्यन्तर में ३ ज्ञान की नियमा, ३ अज्ञान की भजना, ज्योतिषी पहले दूसरे देवलोक में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की नियमा। योग ३-३। उपयोग २–२। संज्ञा ४–४। कषाय ४–४। इन्द्रिय ५-५। समुद्घात ५-५। वेदना २-२। वेद २-२ स्त्रीवेद, पुरुषवेद। आयुष्य–भवनपति में असुर कुमार का जघन्य दस हजार वर्ष का, उत्कृष्ट एक सागर झाझेरा। नव निकाय के देवता का–जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देश ऊणा दो पल्योपम। वाणव्यन्तर का जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल्योपम। ज्योतिषी का–जघन्य पल्योपम का आठवां भाग, उत्कृष्ट एक पल्योपम एक लाख वर्ष का। पहले देवलोक का–जघन्य एक पल्योपम उत्कृष्ट दो सागरोपम का। दूसरे देवलोक का–जघन्य एक पल्योपम झाझेरा, उत्कृष्ट २ सागरोपम झाझेरा। अध्यवसाय २–२ शुभ अशुभ। अनुबन्ध–आयुष्य के अनुसार। कायसंवेध के दो भेद–भवादेश, कालादेश भवादेश की अपेक्षा–जघन्य उत्कृष्ट २–२ भव करते हैं। कालादेश की अपेक्षा–काल ६ गम्मा का–असुर कुमार से ६ गम्मा–इस प्रकार कह देना चाहिये–(१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–दस हजार

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	५-६	स्थान में जाता है	स्थान में
१३	१७	कर कर	मर कर
३३	८	अनंतर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
३७	२२	उत्पन्न	उत्पन्न
४०	८	नागकु ार	नागकुमार
४२	७	सस्थान	संस्थान
४२	३	ध्वजा पता।	ध्वजा पताका
४२	६	असज्ञी	असंज्ञी
४६	१	असज्ञी	असंज्ञी
५१	६	–दस जार	दस हजार
५४	२१	चवीं	पाँचवीं
५६	१६	श्रोघक	श्रोघिक
५६	२२	सागरोप	सागरोपम
७४	७	चार गा,	चार गाऊ
७८	८	गम्मा।	गम्मा–
८४	१	।म	–पम
१००	६	यन्तर	व्यन्तर

उपरोक्त अशुद्धियों के सिवा टाइप और मात्राओं के टूट जाने से कुछ अशुद्धियाँ मालूम होती हैं। जैसे 'स' 'म' की तरह, 'र' 'प' की तरह, 'च' 'व' की तरह, ए की मात्रा अनुस्वार की तरह, ई की मात्रा ओ की मात्रा की तरह दिखाई देते हैं। 'पं' की जगह 'पी' 'व' की जगह 'च' और 'प' की जगह 'व' भी कहीं कहीं दिया हुआ है। 'नाणत्ता' में भी कहीं कहीं संयुक्त त नहीं दिया हुआ है। इनके सिवा कुछ मात्राएं तथा 'क', 'ष', 'ज्ञ' 'ह' आदि अक्षर साफ नहीं उठे हैं। किन्तु विषय सम्बन्ध में पढ़ने में भूल होने की संभावना नहीं है अतः ऐसी अशुद्धियाँ यहाँ नहीं निकाली हैं।

वर्ष २२ हजार वर्ष, एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट –दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष, दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–एक सागरोपम झाझेरा, अन्तर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–एक सागरोपम झाझेरा अन्तर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा अन्तर्मुहूर्त (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष, एक सागरोपम झाझेरा २२००० वर्ष। बाकी देवताओं के गम्मे–अपनी अपनी स्थिति के साथ कह देने चाहियें।

गम्मा १४×९=१२६। नाणत्ता चार चार चौदह स्थानों के ४×१४=५६। कुल गम्मा–४५+३+३६+१८+१२६= २२८ हुए। नाणत्ता–३०+३६+२३+५६=१४५ हुए।

तेरहवां उद्देशा–घर एक अप्काय का २६ स्थानों से आकर जीव अप्काय में उपजते हैं, बाकी सब अधिकार पृथ्वीकाय की तरह कह देना चाहियें किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य अन्तर्मुहूर्त की स्थिति में और उत्कृष्ट ७ हजार वर्ष की स्थिति में उपजते हैं। इसी स्थिति से गम्मा कह देने चाहियें।

२२८ हुए। नाणत्ता १४५ हुए।

चौदहवां उद्देशा–घर एक तेउकाय का–१२ औदारिक के जीव आकर तेउकाय में उत्पन्न होते हैं। कितनी स्थिति में उत्पन्न होते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन अहोरात्रि की स्थिति में उत्पन्न होते हैं। सन्नी असन्नी मनुष्य भवादेश की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट २ भव करते हैं। बाकी सब अधिकार (ऋद्धि, नाणत्ता, गम्मा) पृथ्वीकाय की तरह कह देना चाहिये किन्तु काल के ९ गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त की स्थिति और उत्कृष्ट तीन अहोरात्रि की स्थिति से कहने चाहिये। गम्मा ११×९=९९। असंज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा=१०२ हुए। नाणत्ता ८९ हुए।

पन्द्रहवां उद्देशा–घर एक वायुकाय का—१२ औदारिक के जीव आकर उपजते हैं? कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ३००० वर्ष की स्थिति में उपजते हैं। बाकी सब अधिकार तेउकाय की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि काल के ९ गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त की स्थिति और उत्कृष्ट ३००० वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए। गम्मा १०२। नाणत्ता ८९ हुए।

सोलहवां उद्देशा–घर एक वनस्पतिकाय का—२६ स्थानों के जीव आकर वनस्पतिकाय में उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट दस हजार वर्ष की स्थिति में उपजते हैं। बाकी सब अधिकार (ऋद्धि आदि) पृथ्वीकाय

की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि काल के ६ गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त की स्थिति से और उत्कृष्ट दस हजार वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए। नवरं (इतना फर्क) वनस्पति वनस्पति में उत्पन्न होवे उसमें ४ गम्मा (१-२-४-५) में परिमाण—समय समय विरह रहित अनन्ता उपजते हैं। भवादेश की अपेक्षा जघन्य २ भव उत्कृष्ट अनन्त भव करते हैं कालादेश की अपेक्षा जघन्य २ अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनन्त काल। गम्मा २५×६= २२५, असंज्ञी मनुष्य के ३=२२८ हुए। नाणत्ता १४५ हुए।

सतरहवां उद्देशा—घर एक बेइन्द्रिय—का १२ औदारिक के जीव आकर बेइन्द्रिय में उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट १२ वर्ष की स्थिति में उपजते हैं। बाकी ऋद्धि आदि का अधिकार पृथ्वीकाय की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि काल के ६ गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट १२ वर्ष की स्थिति से कहने चाहियें। पांच स्थावर ३ विकलेन्द्रिय ये आठ बेइन्द्रिय में उत्पन्न होवे उसमें ४ गम्मा (१-२-४-५) में भवादेश की अपेक्षा जघन्य २ भव उत्कृष्ट संख्याता भव कालादेश की अपेक्षा जघन्य २ अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट संख्यात काल कहना चाहिए। गम्मा १०२ हुए। नाणत्ता ८६ हुए।

अठारहवां उद्देशा—घर एक तेइन्द्रिय का—१२ औदारिक के जीव आकर तेइन्द्रिय में उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ४६ दिन की स्थिति

में उपजते हैं। बाकी अधिकार (ऋद्धि आदि) बेइन्द्रिय के तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि काल के ६ गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट ४६ दिन की स्थिति से कहने चाहिए। गम्मा १०२ हुए। नाणत्ता ८६ हुए।

उन्नीसवां उद्देशा—धर एक चौइन्द्रिय का–१२ औदारिक के जीव आकर चौइन्द्रिय में उपजते हैं ? कितनी स्थिति में उपजते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट छह महीनों की स्थिति में उपजते हैं। बाकी अधिकार बेइन्द्रिय की तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि काल के ६ गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट ६ महीना की स्थिति से कहने चाहिए। गम्मा १०२ हुए। नाणत्ता ८६ हुए।

वीसवां उद्देशा—धर एक तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय का–सात नारकी के नेरीया आकर उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण—एक समय में १, २, ३ यावत् संख्याता असंख्याता उपजते हैं। संहनन–नारकी में संहनन नहीं होता, अशुभ पुद्गल परिणमते हैं। अवगाहना–जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट पहली नारकी की ७॥। धनुष ६ अंगुल की, दूसरी नारकी की १५॥ धनुष १२ अंगुल की, तीसरी नारकी की ३१। धनुष की, चौथी नारकी की ६२॥ धनुष की, पांचवीं नारकी की १२५ धनुष की, छठी नारकी की २५० धनुष की, सातवीं नारकी की ५०० धनुष की होती है। यदि

उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग, उत्कृष्ट –अपने अपने स्थान में जो अवगाहना कही है, उससे दुगुनी होती है। संस्थान (संठाण)–हुण्डक, उत्तर वैक्रिय करे तो भी हुण्डक। पहली दूसरी नारकी में एक कापोत लेश्या। तीसरी में कापोत और नील। चौथी में एक–नील लेश्या। पांचवीं में दो–नील और कृष्ण। छठीं में एक–कृष्ण। सातवीं में एक कृष्ण (महाकृष्ण)। दृष्टि ३। ज्ञान–पहली नारकी में ३ ज्ञान की नियमा, ३ अज्ञान की भजना। दूसरी से सातवीं नारकी तक तीन ज्ञान तीन अज्ञान की नियमा। योग ३। उपयोग २। संज्ञा ४। कषाय ४। इन्द्रिय ५। समुद्घात ४। वेदना २। वेद–एक (नपुंसक)। आयुष्य–पहली नारकी का–जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक सागरोपम, दूसरी नारकी का–जघन्य एक सागरोपम, उत्कृष्ट तीन सागरोपम, तीसरी नारकी का जघन्य तीन सागरोपम, उत्कृष्ट सात सागरोपम। चौथी नारकी का जघन्य ७ सागरोपम, उत्कृष्ट दस सागरोपम। पांचवीं नारकी का जघन्य दस सागरोपम उत्कृष्ट १७ सागरोपम। छठी नारकी का जघन्य १७ सागरोपम, उत्कृष्ट २२ सागरोपम। सातवीं नारकी का जघन्य २२ सागरोपम उत्कृष्ट ३३ सागरोपम का है। अध्यवसाय २–शुभ और अशुभ। अनुबन्ध–आयुष्य के अनुसार। कायसंवेध के दो भेद–भवादेश–कालादेश। भवादेश की अपेक्षा–पहली नारकी से छठी नारकी तक जघन्य दो भव उत्कृष्ट आठ भव करता है, सातवीं नारकी में ६ (पहले का) गम्मा आसरी दो भव और छह भव

करता है। तीन (पिछाड़ी का) गम्मा आसरी दो भव और चार भव करता है। कालादेश की अपेक्षा ९ गम्मा होते हैं। पहली नारकी से ९ गम्मा इस प्रकार कहने चाहिए-(१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक-दस हजार वर्ष अन्तमुहूर्त, चार सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य-दस हजार वर्ष अन्तमुहूर्त, चार सागरोपम चार अन्तमुहूर्त। (३) ओघिक और उत्कृष्ट-दस हजार वर्ष करोड़ पूर्व, चार सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (४) जघन्य और ओघिक-दस हजार वर्ष अन्तमुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व। (५) पाचवां गम्मा-जघन्य और जघन्य—दस हजार वर्ष अन्तमुहूर्त, ४० हजार वर्ष ४ अन्तमुहूर्त। (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट-दस हजार वर्ष करोड पूर्व, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व, (७) सातवां गम्मा-उत्कृष्ट और ओघिक-एक सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, चार सागरोपम चार करोडपूर्व। (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य एक सागरोपम अन्तमुहूर्त, चार सागरोपम चार अन्तमुहूर्त। (९) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-एक सागरोपम करोड़पूर्व, चार सागरोपम चार करोड़पूर्व।

दूसरी नारकी से ९ गम्मा-(१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-एक सागरोपम अन्तमुहूर्त, १२ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य-एक सागरोपम अन्तमुहूर्त, १२ सागरोपम चार अन्तमुहूर्त। (३) तीसरा

गम्मा-ओधिक और उत्कृष्ट-एक सागरोपम करोड़ पूर्व, १२ सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (४) चौथा गम्मा-जघन्य और ओधिक-एक सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, चार सागरोपम चार करोड़-पूर्व । (५) पांचवां गम्मा-जघन्य और जघन्य-एक सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, चार सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट-एक सागरोपम करोड़ पूर्व, चार सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (७) सातवां गम्मा-उत्कृष्ट और ओधिक-तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त । (६) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-तीन सागरोपम करोड़ पूर्व, १२ सागरोपम चार करोड़ पूर्व ।

तीसरी नारकी से ६ गम्मा-जघन्य तीन सागरोपम, उत्कृष्ट ७ सागरोपमकी स्थिति से कहने चाहिये । (१) पहला गम्मा-ओधिक और ओधिक-तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (२) दूसरा गम्मा-ओधिक और जघन्य-तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त; २८ सागरोपम ४ अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा-ओधिक और उत्कृष्ट-तीन सागरोपम करोड़ पूर्व, २८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (४) चौथा गम्मा-जघन्य और ओधिक-तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार करोड़-पूर्व । (५) पांचवां गम्मा-जघन्य और जघन्य-तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा

गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–तीन सागरोपम करोड़ पूर्व, ११ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–सात सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार करोड़-पूर्व। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–२८ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–सात सागरोपम करोड़ पूर्व, २८ सागरोपम चार करोड़पूर्व।

चौथी नारकी से ९ गम्मा–जघन्य सात सागरोपम, उत्कृष्ट दस सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिये–(१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–सात सागरोपम अन्तर्मुहूर्त ४० सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (२) ओघिक और जघन्य–सात सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट सात सागरोपम करोड़पूर्व, ४० सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–सात सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–सात सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–सात सागरोपम करोड़ पूर्व, २८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (९)

नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–दस सागरोपम करोड़ पूर्व ४० सागरोपम चार करोड़ पूर्व ।

पांचवीं नारकी से ६ गम्मा–जघन्य दस सागरोपम उत्कृष्ट १७ सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–दस सागरोपम करोड़ पूर्व, ६८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा– जघन्य और जघन्य–दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट– दस सागरोपम करोड़पूर्व, ४० सागरोपम ४ करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–१७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–१७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (६) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–१७ सागरोपम करोड़ पूर्व, ६८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व।

छठी नारकी से ६ गम्मा–जघन्य १७ सागरोपम उत्कृष्ट २२ सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–१७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ८८

सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–१७ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ८८ सागरोपम चार अन्तमुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–१७ सागरोपम करोड़ पूर्व, ८८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–१७ सागरोपम अन्तमुहूर्त ६८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–१७ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ६८ सागरोपम चार अन्तमुहूर्त । (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–१७ सागरोपम करोड़ पूर्व, ६८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–२२ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ८८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व । (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–२२ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ८८ सागरोपम चार अन्तमुहूर्त । (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–२२ सागरोपम करोड़ पूर्व, ८८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व ।

सातवीं नारकी से ९ गम्मा–जघन्य २२ सागरोपम उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिये । (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–२२ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ६६ सागरोपम तीन करोड़ पूर्व । (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–२२ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ६६ सागरोपम तीन अन्तमुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–२२ सागरोपम करोड़ पूर्व, ६६ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–२२ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ६६

ॐ

थोकड़ा नम्बर १६६

श्री भगवतीजी सूत्र के २४ वें शतक के २४ उद्दे
'गम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

उववाय परिमाणं संघयणुच्चत्तमेव संठाणं ।
लेस्सा दिट्ठि णाणे अण्णाणे जोग उवओगे ॥१॥
सण्णा कसाय इन्दिय समुग्घाया वेयणा य वेदे य ।
आउ अज्झवसाणा अणुबंधो कायसंवेहो ॥२॥
जीवपदे जीवपदे जीवाणं दंडगम्मि उद्देसो ।
चउवीसतिमम्मि सए चउवीसं होंति उद्देसा ॥३॥

अर्थ—१ उपपात (जन्म), २ परिमाण, ३ संहनन, ४ ऊंचाई अवगाहना, ५ संस्थान (आकार), ६ लेश्या, ७ दृष्टि, ८ ज्ञान अज्ञान, ९ योग, १० उपयोग, ११ संज्ञा, १२ कषाय, १३ इन्द्रिय, १४ समुद्घात, १५ वेदना, १६ वेद, १७ आयुष्य, १८ अध्यवसाय, १९ अनुबन्ध, २० कायसंवेध। ये वीस द्वार हैं।

एक एक दण्डक पर ये वीस द्वार कहे जावेंगे। इसप्रकार स चौवीसवें शतक में चौवीस उद्देशे हैं। शास्त्र में जिस प्रकार श्नोत्तर हैं उस तरह से न देकर इनको थोकड़े के रूप से या जाता है—

१— पहले बोले घर ४४— सात नारकी के ७ घर, दस

सागरोपम तीन करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–२२ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ६६ सागरोपम तीन अन्तमुहूर्त। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–२२ सागरोपम करोड़ पूर्व, ६६ सागरोपम तीन करोड़ पूर्व (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओधिक–३३ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६६ सागरोपम दो करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–३३ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ६६ सागरोपम दो, अन्तमुहूर्त। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–३३ सागरोपम करोड़ पूर्व, ६६ सागरोपम दो करोड़ पूर्व।

भवनपति से लेकर आठवें देवलोक तक के देवता (२० स्थानों के देवता) तिर्यंच पंचेन्द्रिय में उत्पन्न होते हैं। कितनी स्थिति में उत्पन्न होते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उत्पन्न होते हैं। परिमाण आदि सब अधिकार पृथ्वीकाय में उपजने वाले देवों का कहा उस तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि तीसरे चौथे पांचवें देवलोक में एक पद्मलेश्या कहनी चाहिए। छठे सातवें आठवें देवलोक में एक शुक्ल लेश्या कहनी चाहिए। तीसरे से आठवें देवलोक तक स्थिति अपने अपने स्थानके अनुसार कहनी चाहिए। कायसंवेध के दो भेद–भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा–जघन्य दो भव, उत्कृष्ट ८ भव करते हैं। कालादेश की अपेक्षा काल ९ गम्मा का होता है।

असुरकुमार से ९ गम्मा–जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट

एक सागर झाझेरा की स्थिति से कहने चाहिये। (१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार सागर झाझेरा चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार सागर झाझेरा चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—दस हजार वर्ष करोड़ पूर्व, चार सागर झाझेरा चार करोड़ पूर्व। (४) जघन्य और ओघिक—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—दस हजार वर्ष करोड़ पूर्व, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—एक सागर झाझेरा अन्तर्मुहूर्त, चार सागर झाझेरा चार करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—एक सागर झाझेरा अन्तर्मुहूर्त, चार सागर झाझेरा चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—एक सागर झाझेरा करोड़ पूर्व, चार सागर झाझेरा चार करोड़ पूर्व।

नवनिकाय से काल के ९ गम्मा—जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देश ऊणी दो पल की स्थिति से कहने चाहिये। (१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार करोड़ पूर्व। (२) ओघिक और जघन्य—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार अन्तर्मुहूर्त।

(३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—दस हजार वर्ष करोड़पूर्व, देशा ऊणा ८ पल चार करोड़ पूर्व । (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व । (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—दस हजार वर्ष करोड़ पूर्व, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व । (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—देश ऊणा दो पल अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार करोड़ पूर्व । (८) आठवां गम्मा उत्कृष्ट और जघन्य—देश ऊणा दो पल अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—देश ऊणा दो पल करोड़ पूर्व, देश ऊणा ८ पल चार करोड़ पूर्व ।

वाणव्यन्तर देवों से काल के ९ गम्मा—जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल की स्थिति से कहने चाहिये । (१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार करोड़ पूर्व । (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—दस हजार वर्ष करोड़ पूर्व, चार पल चार करोड़ पूर्व । (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार करोड़-पूर्व । (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा—

जघन्य और उत्कृष्ट दश हजार वर्ष करोड़ पूर्व, ४० हजार करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार करोड़ पूर्व। (८) आठवां उत्कृष्ट और जघन्य—एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—एक पल पूर्व, चार पल चार करोड़ पूर्व।

ज्योतिषी से कालके ९ गम्मा—जघन्य पल के आठवें उत्कृष्ट एक पल एक लाख वर्ष की स्थिति से कहने चाहिये। विमानवासी देवता से ९ गम्मा इसप्रकार हैं—जघन्य उत्कृष्ट एक पल एक लाख वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए। पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—पाव पल अन्तर्मुहूर्त पल चार लाख वर्ष चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा—और जघन्य—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार लाख अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट पल करोड़ पूर्व, चार पल चार लाख वर्ष चार करोड़ पूर्व। चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—पाव पल अन्तर्मु॰ पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवां जघन्य और जघन्य—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (… चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट पल करोड़पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व। सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—एक पल लाख वर्ष हूर्त, चार पल चार लाख वर्ष चार करोड़ पूर्व। (८)

(३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–दस हजार वर्ष करोड़पूर्व, देशा ऊणा ८ पल चार करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–दस हजार वर्ष करोड़ पूर्व, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–देश ऊणा दो पल अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा उत्कृष्ट और जघन्य–देश ऊणा दो पल अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–देश ऊणा दो पल करोड़ पूर्व, देश ऊणा ८ पल चार करोड़ पूर्व।

वाणव्यन्तर देवों से काल के ९ गम्मा–जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल की स्थिति से कहने चाहिये। (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–दस हजार वर्ष करोड़ पूर्व, चार पल चार करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार करोड़-पूर्व। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा–

जघन्य और उत्कृष्ट दश हजार वर्ष करोड़ पूर्व, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व । (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार करोड़ पूर्व । (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–एक पल करोड़ पूर्व, चार पल चार करोड़ पूर्व ।

ज्योतिषी से कालके ९ गम्मा–जघन्य पल के आठवें भाग, उत्कृष्ट एक पल एक लाख वर्ष की स्थिति से कहने चाहिये । चन्द्रमा विमानवासी देवता से ९ गम्मा इसप्रकार हैं–जघन्य पाव पल उत्कृष्ट एक पल एक लाख वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार लाख वर्ष चार करोड़ पूर्व । (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार लाख वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–पाव पल करोड़ पूर्व, चार पल चार लाख वर्ष चार करोड़ पूर्व । (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–पाव पल करोड़पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–एक पल लाख वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार लाख वर्ष चार करोड़ पूर्व । (८) आठवां

गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—एक पल एक लाख वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार लाख वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त (६) नवमां गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—एक पल एक लाख वर्ष करोड़ पूर्व, चार पल चार लाख वर्ष चार करोड़ पूर्व ।

सूर्य विमानवासी देवता से काल के ६ गम्मा—जघन्य पाव पल, उत्कृष्ट एक पल एक हज़ार वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व । (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—पाव पल करोड़ पूर्व, चार पल चार हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व । (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—पाव पल करोड़ पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—एक पल एक हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व । (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—एक पल एक हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (६) नवमां गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—एक पल हजार वर्ष करोड़ पूर्व, चार पल

चार हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व ।

ग्रह विमान वासी देवता से काल के ६ गम्मा–जघन्य पाव पल, उत्कृष्ट एक पल की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार करोड़ पूर्व । (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य-पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–पाव पल करोड़ पूर्व, चार पल चार करोड़ पूर्व । (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक-पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट—पाव पल करोड़ पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार करोड़ पूर्व । (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–एक पल करोड़ पूर्व, चार पल चार करोड़ पूर्व ।

नक्षत्र विमान वासी देवता से काल के ६ गम्मा–जघन्य पाव पल, उत्कृष्ट आधा पल की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार आधा पल (दो पल) चार करोड़ पूर्व । (२)

दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार आधा पल (दो पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—पाव पल करोड़ पूर्व, चार आधा पल (दो पल) चार करोड़ पूर्व । (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—पाव पल करोड़ पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—आधा पल अन्तर्मुहूर्त, चार आधा पल चार करोड़ पूर्व । (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—आधा पल अन्तर्मुहूर्त, चार आधा पल (दो पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—आधा पल करोड़ पूर्व, चार आधा पल (दो पल) चार करोड़ पूर्व ।

तारा विमान वासी देवता से काल के ९ गम्मा—जघन्य पल का आठवां भाग, उत्कृष्ट पाव पल की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—जघन्य पल का आठवां भाग अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—पल का आठवां भाग अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—पल का आठवां भाग करोड़ पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व ।

(४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—पल का आठवां भाग अन्तर्मुहूर्त, चार पल का आठवां भाग (आधा पल) चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—पल का आठवां भाग अन्तर्मुहूर्त, चार पल का आठवां भाग (आधा पल) चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—पल का आठवां भाग करोड़ पूर्व, चार पल का आठवां भाग (आधा पल) चार करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य-पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—पाव पल करोड़ पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व।

पहले देवलोक से काल के ९ गम्मा—जघन्य एक पल, उत्कृष्ट दो सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा—एक पल अन्तर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—एक पल अन्तर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—एक पल करोड़ पूर्व, आठ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल्योपम चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल्योपम चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—एक पल

भवनपतिके १० घर, वाणव्यन्तर का १ घर, ज्योतिषी का १ घर, बारह देवलोकों के १२ घर, नवग्रैवेयकका १ घर, चार अनुत्तरविमान का १ घर, सर्वार्थसिद्ध का १ घर, दस औदारिक (पाँच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय, मनुष्य) के १० घर-ये सब मिला कर ४४ घर हुये ।

२– दूसरे बोले जीव ४८ — चंवालीस तो ऊपर कहे वे, एक असंज्ञी तिर्यञ्च, एक असंज्ञी मनुष्य, एक युगलिया तिर्यञ्च, एक युगलिया मनुष्य-ये कुल ४८ हुए ।

तीसरे बोले स्थान (ठिकाणा) ३२१—घर पहला पहली नारकी में तीन स्थानों से जीव आते हैं — असंज्ञी तिर्यञ्च, संज्ञी तिर्यञ्च, संज्ञी मनुष्य । दूसरी नारकी से सातवीं नारकी तक छह घरों में दो दो स्थानों से जीव आते हैं –संज्ञी तिर्यञ्च और संज्ञी मनुष्य । दस भवनपति, एक वाणव्यन्तर इन ११ घरों में पांच पांच स्थानों से जीव आते हैं— असंज्ञी तिर्यञ्च, संज्ञी तिर्यञ्च, संज्ञी मनुष्य, युगलिया तिर्यञ्च, युगलिया मनुष्य, ११×५=५५, ये ५५ स्थान । ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक इन ३ घरों में चार चार स्थानों से जीव आते हैं संज्ञी तिर्यञ्च, संज्ञी मनुष्य, युगलिया तिर्यञ्च, युगलिया मनुष्य, ४×३=१२, ये १२ स्थान । तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक इन ६ घरों में दो दो स्थानों से जीव आते हैं — संज्ञी तीर्यञ्च, संज्ञी मनुष्य, ६×२=१२, ये १२ स्थान । ऊपर के चार देवलोकों (नववां, दसवां ग्यारहवां, बारहवां,) के ४ घर,

रोड़ पूर्व, चार पल्योपम चार करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–दो सागरोपम करोड़ पूर्व आठ सागरोपम चार करोड़ पूर्व।

दूसरे देवलोक से काल के ९ गम्मा–जघन्य एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट दो सागरोपम झाझेरी स्थिति से कहने चाहिए। पहले देवलोक के ९ गम्मा कहे उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य उत्कृष्ट दोनों स्थिति में झाझेरी (अधिक) कहनी चाहिए।

तीसरे देवलोक से काल के ९ गम्मा–जघन्य दो सागरोपम, उत्कृष्ट सात सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त २८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–दो सागरोपम करोड़ पूर्व २८ सागरोपम चार करोड पूर्व। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–दो सागरोपम करोड़ पूर्व आठ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (७) सातवां

गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–सात सागरोपम अन्तर्मुहूर्त २८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–सात सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–सात सागरोपम करोड़ पूर्व, २८ सागरोपम चार करोड़ पूर्व।

चौथे देवलोक से काल के ९ गम्मा–जघन्य दो सागरोपम झाझेरी, उत्कृष्ट सात सागरोपम झाझेरी स्थिति से कहने चाहिए। तीसरे देवलोक की तरह ९ गम्मा कह देने चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य उत्कृष्ट दोनों स्थिति झाझेरी कहनी चाहिए।

पांचवें छठे सातवें आठवें देवलोक से काल के ९ गम्मा–पांचवें देवलोक में जघन्य सात सागरोपम, उत्कृष्ट दस सागरोपम छठे देवलोक में जघन्य दस सागरोपम, उत्कृष्ट १४ सागरोपम, सातवें देवलोक में जघन्य १४ सागरोपम, उत्कृष्ट १७ सागरोपम, आठवें देवलोक में जघन्य १७ सागरोपम, उत्कृष्ट १८ सागरोपम से नौ नौ गम्मा कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–७, १०, १४, १७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४०, ५६, ६८, ७२ सागरोपम चार २ करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–७, १०, १४, १७ सागरोपम अन्तमुहूर्त, ४०, ५६, ६८, ७२, सागरोपम चार २ अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–७, १०, १४, १७ सागरोपम करोड़ पूर्व, ४०, ५६, ६८, ७२ सागरो-

म चार २ करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—७, १०, १४, १७, सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८, ४०, ५६, ६८ सागरोपम चार २ करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—७, १०, १४, १७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८, ४०, ५६, ६८ सागरोपम चार २ अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—७, १०, १४, १७ सागरोपम करोड़ पूर्व, २८, ४०, ५६, ६८ सागरोपम चार २ करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—१०, १४, १७, १८ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४०, ५६, ६८, ७२ सागरोपम चार २ करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—१०, १४, १७, १८ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४०, ५६, ६८, ७२, सागरोपम चार २ अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—१०, १४, १७, १८ सागरोपम करोड़ पूर्व, ४०, ५६, ६८, ७२ सागरोपम चार चार करोड़ पूर्व।

घर एक तिर्यञ्च का—पांच स्थावर और असंज्ञी मनुष्य आकर उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण आदि सारी ऋद्धि का अधिकार पृथ्वीकाय में उपजने वाले पांच स्थावर और असंज्ञी मनुष्य में कहा उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि—एक समय में १, २, ३ यावत् संख्याता असंख्याता उपजते हैं। कायसंवेध के दो भेद—भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव, उत्कृष्ट

आठ भव करता है। कालादेश की अपेक्षा—पांच स्थावर का काल ६ गम्मा का है और असंज्ञी मनुष्य का काल ३ गम्मा का है। पांच स्थावर की स्थिति जघन्य अन्तमुहूर्त, उत्कृष्ट पृथ्वीकाय की २२००० वर्ष की, अप्काय की ७००० वर्ष की, तेउकाय की ३ अहोरात्रि (दिन) की, वायुकाय की ३००० वर्ष की, वनस्पति काय की १०००० वर्ष की है। असंज्ञी मनुष्य की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तमुहूर्त की है।

पांच स्थावर से काल के ६ गम्मा इसप्रकार कहने चाहिए-(१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—अन्तमुहूर्त और अन्तमुहूर्त, ८८००० वर्ष, २८००० वर्ष, १२ अहोरात्रि १२००० वर्ष, ४०००० वर्ष चार चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—अन्तमुहूर्त, अन्तमुहूर्त ८८००० वर्ष, २८००० वर्ष, १२ अहोरात्रि (दिन), १२००० वर्ष, ४०००० वर्ष, चार चार अन्तमुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा ओघिक और उत्कृष्ट—अन्तमुहूर्त करोड़ पूर्व, ८८००० वर्ष २८००० वर्ष, १२ अहोरात्रि, १२००० वर्ष, ४०००० व चार चार करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक अन्तमुहूर्त अन्तमुहूर्त, चार २ अन्तमुहूर्त चार २ करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य अंतर्मुहूर्त अंतर्मुहूर्त चार २ अन्त र्मुहूर्त चार २ अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा-जघन्य औरउत्कृष्ट-अन्त मुहूर्त करोड़ पूर्व, चार २ अन्तमुहूर्त चार २ करोड़ पूर्व (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—२२००० वर्ष, ७००० वर्ष, ती

अहोरात्रि, ३००० वर्ष, १०००० वर्ष, अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, ८८००० वर्ष, २८००० वर्ष, १२ अहोरात्रि, १२००० वर्ष ४०००० वर्ष चार चार करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—२२००० वर्ष, ७००० वर्ष, तीन अहोरात्रि, ३००० वर्ष, १०००० वर्ष अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, ८८००० वर्ष, २८००० वर्ष, १२ अहोरात्रि, १२००० वर्ष, ४०००० वर्ष चार चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—२२००० वर्ष, ७००० वर्ष, तीन अहोरात्रि, ३००० वर्ष, १०००० वर्ष करोड़ करोड़ पूर्व, ८८००० वर्ष, २८००० वर्ष, १२ अहोरात्रि, १२००० वर्ष, ४०००० वर्ष चार चार करोड़ पूर्व।

असंज्ञी मनुष्य से काल के ३ गम्मा—जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा—जघन्य और ओघिक—अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त चार करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा—जघन्य और जघन्य—अन्तर्मुहूर्त और अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त चार अन्तर्मुहूर्त (३) तीसरा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व, चार अन्तर्मुहूर्त चार करोड़ पूर्व।

तीन विकलेन्द्रिय और असंज्ञी तिर्यञ्च आकर तिर्यंच में उत्पन्न होते हैं।—कितनी स्थिति में उत्पन्न होते हैं? तीन विकलेन्द्रिय जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उत्पन्न होते हैं। असंज्ञी तिर्यञ्च जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट पल के असं-

खयातवें भाग की स्थिति में उत्पन्न होते हैं। परिमाण एक समय में १, २, ३ यावत् संख्याता असंख्याता उत्पन्न होते हैं किन्तु इतनी विशेपता है कि तीसरे, नवमें गम्मा में असंज्ञी तिर्यञ्च संख्याता उत्पन्न होते हैं। संहनन (संघयण)–एक–सेवार्त (छेवटिया)। अवगाहना–तीन विकलेन्द्रिय की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट बेइन्द्रिय की १२ योजन, तेइन्द्रिय की तीन गाऊ, चौइन्द्रिय की चार गाऊ, असंज्ञी तिर्यञ्च की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन की है। संस्थान (संठाण) एक हुण्डक। लेश्या–तीन। दृष्टि २ (समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि), तीसरे नवमें गम्मा में असंज्ञी तिर्यञ्च मिथ्यादृष्टि। ज्ञान–दो ज्ञान दो अज्ञान किन्तु इतनी विशेपता है कि तीसरे नवमें गम्मे में असंज्ञी तिर्यञ्च में दो अज्ञान। योग–२। उपयोग–२। संज्ञा–४। कपाय–४। इन्द्रिय–अपनी अपनी। समुद्घात–३। वेदना–२ (साता, असाता)। वेद–एक नपुंसक। आयुष्य–जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट बेइन्द्रिय का १२ वर्ष का, तेइन्द्रिय का ४९ दिन का, चौइन्द्रिय का ६ महीना का, असंज्ञी तिर्यञ्च का करोड़ पूर्व का होता है। अध्यवसाय–२ (शुभ और अशुभ)। अनुबन्ध–आयुष्य के अनुसार। कायसंवेध के दो भेद–भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा–तीन विकलेन्द्रिय जघन्य दो भव, उत्कृष्ट ८ भव करते हैं। असंज्ञी तिर्यञ्च जघन्य दो भव, उत्कृष्ट ८ भव करता है किन्तु इतनी विशेपता है कि तीसरे नवमें

गम्मा में जघन्य उत्कृष्ट दो भव करता है। कालादेश से—काल के ६ गम्मा हैं किन्तु असंज्ञी तिर्यञ्च में पहले और सातवें गम्मे में युगलिया की भजना है और तीसरे नवमें गम्मे में युगलिया की नियमा है।

तीन विकलेन्द्रिय से काल के ६ गम्मा—जघन्य अन्तर्मुहूर्त की स्थिति और उत्कृष्ट बेइन्द्रिय की १२ वर्ष, तेइन्द्रिय की ४६ दिन, चौइन्द्रिय की ६ महीना की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, ४८ वर्ष, १६६ दिन, २४ महीना करोड़ पूर्व करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, ४८ वर्ष, १६६ दिन, २४ महीना चार चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व, ४८ वर्ष, १६६ दिन, २४ महीना चार चार करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार २ अन्तर्मुहूर्त चार २ करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा-जघन्य और जघन्य अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त चार २ अन्तर्मुहूर्त चार २ अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व चार २ अन्तर्मुहूर्त चार २ करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—१२ वर्ष, ४६ दिन, ६ महीना अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, ४८ वर्ष, १६६ दिन, २४ महीना चार चार करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—१२ वर्ष, ४६ दिन, ६ महीना अन्तर्मुहूर्त अन्त-

मुहूर्त, ४८ वर्ष, १६६ दिन २४ महीना चार चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–१२ वर्ष, ४६ दिन, ६ महीना करोड़ करोड़ पूर्व, ४८ वर्ष, १६६ दिन, २४ महीना चार चार करोड़ पूर्व ।

असंज्ञी तिर्यञ्च से ९ गम्मा–जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार करोड़ पूर्व तीन करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग। (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त चार करोड़ पूर्व चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त पल के असंख्यातवें भाग, करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त चार अन्तर्मुहूर्त चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त चार अन्तर्मुहूर्त चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व, चार अन्तर्मुहूर्त चार करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट औ ओघिक–करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार करोड़ पूर्व तीन करोड़ पू पल के असख्यातवें भाग। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट औ जघन्य–करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार करोड़ पूर्व चार अन्तर्मुहूर्त (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-करोड़ पूर्व पल वे असंख्यातवें भाग, करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग।

संज्ञी तिर्यञ्च और संज्ञी मनुष्य आकर तिर्यञ्च पंचेन्द्रियपं

पजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट
ीन पल्योपम की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण—एक समय में १,
:, ३ यावत् तिर्यञ्च असंख्याता, मनुष्य संख्याता उपजते हैं
केन्तु तीसरा और नवमां गम्मा में तिर्यञ्च संख्याता उपजते हैं।
iहनन—६। अवगाहना—तिर्यञ्च की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें
ाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन की, मनुष्य की जघन्य अंगुल के
असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट ५०० धनुष की किन्तु मनुष्य की
ीसरा गम्मा में जघन्य प्रत्येक अंगुल उत्कृष्ट ५०० धनुष की
नवमा गम्मा में जघन्य उत्कृष्ट ५०० धनुष की होती है।
ंस्थान—६—६। लेश्या—६—६। दृष्टि—३—३ किन्तु तीसरे
नवमें गम्मे में एक मिथ्यादृष्टि। ज्ञान—तिर्यञ्च में तीन ज्ञान
ीन अज्ञान की भजना। मनुष्य में चार ज्ञान तीन अज्ञान की
भजना है किन्तु तीसरा नवमा गम्मा में तिर्यञ्च मनुष्य दोनों
के दो अज्ञान की नियमा। योग—३—३। उपयोग—२—२।
ंज्ञा—४—४। कषाय—४—४। इन्द्रिय—५—५। समुद्घात
तिर्यञ्च में ५, मनुष्य में ६। वेदना—२—२ (शाता और अशाता)।
वेद—३—३। आयुष्य—जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड़ पूर्व किन्तु
मनुष्य के तीसरे गम्मे में जघन्य प्रत्येक मास का, नवमे गम्मे में
करोड़ पूर्व का होता है। अध्यवसाय—दो—शुभ और
अशुभ। अनुबन्ध—आयुष्य के अनुसार होता है। कायसंवेध
के दो भेद—भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा—
जघन्य दो भव, उत्कृष्ट ८ भव करते हैं किन्तु तीसरे नवमे

गम्मे में जघन्य उत्कृष्ट दो भव करते हैं। कालादेश की अपे
६ गम्मा होते हैं। संज्ञी तिर्यञ्च संज्ञी मनुष्य से ६ गम
कहने चाहिए। जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थि
से कहने चाहिए किन्तु मनुष्य के तीसरे गम्मे की स्थिति जघ
प्रत्येक मास की कहनी चाहिए। पहले सातवें गम्मे में युगलि
की भजना है, तीसरे नवमे गम्मे में युगलिया की नियमा है
(१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहू
चार करोड़ पूर्व तीन करोड़ पूर्व तीन पल्योपम। (२) दूसरा गम्मा
ओघिक और जघन्य—अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार करोड़ पू
चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट
अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास, तीन २ पल्योपम, करोड़ पूर्व तीन
पल्योपम। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक—अन्तर्मुहू
अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त चार करोड़ पूर्व। (५) पांचवा
गम्मा—जघन्य और जघन्य—अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार अन्त
र्मुहूर्त चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट
अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व, चार अन्तर्मुहूर्त चार करोड़ पूर्व। (७)
सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार
करोड़ पूर्व तीन करोड़ पूर्व तीन पल्योपम। (८) आठवां
गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार करो
पूर्व चार अन्तर्मुहूर्त। (६) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट औ
उत्कृष्ट—करोड़ पूर्व तीन पल्योपम करोड़ पूर्व तीन पल्योपम
पांच स्थावर के ४५ गम्मा, ३० नाणचा। असंज्ञी मनुष्य

नवग्रैवेयक का एक घर, चार अनुत्तर विमानों का एक घर, सर्वार्थसिद्ध का एक घर, इन ७ घरों में एक एक स्थान से जी आता है —संज्ञी मनुष्य, ७×१ = ७, ये ७ स्थान। पृथ्वीकाय, अप्काय, वनस्पतिकाय इन तीन घरों में २६-२६ स्थानों से जीव आते हैं — १४ वैक्रिय के, १२ औदारिक के (१० में असंज्ञी तिर्यञ्च और असंज्ञी मनुष्य बढ़े), ३×२६, = ७८, ये ७८ स्थान। तेउकाय, वायुकाय और तीन विकलेन्द्रिय इन पांच घरों में १२-१२ स्थानों से जीव आते हैं— १२ औदारिक के ऊपर कहे अनुसार, ५×१२=६०, ये ६० स्थान। तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय का एक घर, इसमें ३९ स्थानों से जीव आते हैं — २७ वैक्रिय के (पहली नारकी से आठवें-देवलोक तक) और १२ औदारिक के, २७ + १२ = ३९, ये ३९ स्थान। मनुष्य का एक घर, इसमें ४३ स्थानों से जीव आते हैं — ३३ वैक्रिय के (सातवीं नारकी को छोड़कर), १० औदारिक के (तेउकाय, वायुकाय को छोड़कर), ये ४३ स्थान। नारकी के १५ (३ + १२=१५), भवनपति वाणव्यन्तर के ५५, ज्योतिषी और पहले दूसरे देवलोक के १२, तीसरे से आठवें देवलोक तक १२, नववें देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक ७, ये वैक्रिय के १०१ स्थान हुए। पृथ्वी पानी वनस्पति के ७८, तेउकाय वायुकाय तीन विकलेन्द्रियके ६०, तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय के ३९, मनुष्य के ४३, ये औदारिक के २२० हुए। वैक्रिय और औदारिक के सब मिलाकर ३२१

गम्मा, नाणत्ता नहीं, तीन विकलेन्द्रिय असंज्ञी तिर्यञ्च के
६ गम्मा, ३६ नाणत्ता संज्ञी मनुष्य संज्ञी तिर्यञ्च के १८
म्मा, २३ नाणत्ता सात नारकी, दस भवनपति, वाणव्यन्तर,
गोतिषी, पहले से आठवें देवलोक तक इन २७ बोलों में ६—
गम्मा के हिसाब से २४३ गम्मा होते हैं और ४–४ नाणत्ता
हिसाब से १०८ नाणत्ता होते हैं। कुल गम्मा ३४५
४५+३+३६+१८+२४३=३४५) हुए और १८७ नाणत्ता
फर्क) (२०+०+३६+२३+१०८=१८७) हुए।

॥ बीसवां उद्देशा समाप्त ॥

उद्देशा २१ वां–घर एक मनुष्य का। पहली नारकी से
कर छठी नारकी तक के जीव आकर उत्पन्न होते हैं। कितनी
स्थिति में उत्पन्न होते हैं? पहली नारकी से निकला हुआ
रीया जघन्य प्रत्येक मास, दूसरी से छठी नारकी तक से
निकले हुए जघन्य प्रत्येक वर्ष, उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में
त्पन्न होते हैं*। परिमाण आदि का सारा अधिकार संज्ञी

* तिर्यञ्च के गम्मों में जहाँ जहाँ अन्तमुहूर्त कहा है वहां २ मनुष्य के गम्मों में पहली नरक में प्रत्येक मास और दूसरी से छठी नरक तक प्रत्येक वर्ष से कहना। जैसे पहली नरक का पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–१० हजार वर्ष प्रत्येक मास, चार सागरोपम चार करोड़ पूर्व। दूसरी नरक का पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–एक सागरोपम प्रत्येक वर्ष, बारह सागरोपम चार करोड़ पूर्व।

तिर्यञ्च में कहा उसी तरह से कह देना चाहिए। किन्तु इत
विशेषता है कि जघन्य १—२—३ यावत् संख्याता उपजते हैं

मनुष्य में २७ प्रकार के (ठिकाने के) देवता (दस भव
पति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, बारह देवलोक, नवग्रैवेयक, च
अनुत्तर विमान, सर्वार्थसिद्ध) आकर उपजते हैं। कित
स्थिति में उपजते हैं? भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक त
जघन्य प्रत्येक मास, तीसरे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक जघ
प्रत्येक वर्ष, उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उपजते हैं। प
माण १, २, ३ यावत् संख्याता उपजते हैं। संहनन—नह
देवता में शुभ पुद्गल परिणमते हैं। अवगाहना—भवधारणी
जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट अलग अलग है
भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक तक ७ हाथ की, तीसरे चौथे
देवलोक की ६ हाथ की पांचवें छठे की ५ हाथ की, सातवें
आठवें की ४ हाथ की नवमें दसवें ग्यारहवें बारहवें की ३-३
हाथ की, नवग्रैवेयक की २ हाथ की, पांच अनुत्तर विमान की
१ हाथ की होती है। यदि उत्तर वैक्रिय करे तो भवनपति से लेकर
बारहवें देवलोक तक जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग, उत्कृष्ट
एक लाख योजन की होती है। नवग्रैवेयक, चार अनुत्तर
विमान और सर्वार्थसिद्ध के देवता उत्तर वैक्रिय नहीं करते
हैं। संस्थान (संठाण)—समचतुरस्र (समचौरस), उत्तर
वैक्रिय करे तो नाना प्रकार का होता है। लेश्या—भवनपति
वाणव्यन्तर में लेश्या ४, ज्योतिषी पहले दूसरे देवलोक में

लेश्या–एक (तेजो लेश्या), तीसरे, चौथे, पांचवें देवलोक में लेश्या–एक (पद्मलेश्या), छठे देवलोक में तथा उसके आगे लेश्या–एक (शुक्ल लेश्या) होती है। दृष्टि–भवनपति से लेकर बारहवें देवलोक तक दृष्टि ३, नवग्रैवेयक में २, पांच अनुत्तर विमान में एक (समदृष्टि) होती है। ज्ञान–भवनपति से लेकर नवग्रैवेयक तक ३ ज्ञान, ३ अज्ञान, किन्तु भवनपति वानव्यन्तर में ३ अज्ञान की भजना, पांच अनुत्तर विमान में ३ ज्ञान की नियमा। योग ३। उपयोग–२। संज्ञा ४। कषाय–४। इन्द्रिय–५। समुद्घात–भवनपति से लेकर बारहवें देवलोक तक ५ समुद्घात, नवग्रैवेयक, चार अनुत्तर विमान और सर्वार्थसिद्ध में समुद्घात ३ होती हैं। वेदना २ (साता और असाता)। वेद–भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक तक वेद–२ (स्त्रीवेद, पुरुषवेद), तीसरे से बारहवें देवलोक, नवग्रैवेयक, चार अनुत्तर विमान और सर्वार्थसिद्ध में वेद–एक (पुरुष वेद)। आयुष्य–अपने अपने स्थान के अनुसार होता है। अध्यवसाय–२ (शुभ और अशुभ)। अनुबन्ध–आयुष्य के अनुसार होता है। कायसंवेध के दो भेद–भवादेश और कालादेश। भवनपति से लेकर आठवें देवलोक तक भव और काल के गम्मा आदि सब तिर्यञ्च की तरह कह देना चाहिए*।

* किन्तु इतनी विशेषता है कि भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक तक जघन्य गम्मे अन्तर्मुहूर्त के बदले प्रत्येक मास से और तीसरे से आठवें देवलोक तक प्रत्येक वर्ष से कहने चाहिए।

नवमे देवलोक से लेकर नवग्रैवेयक तक भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव उत्कृष्ट छह भव करते हैं। कालादेश की अपेक्षा ६ गम्मा होते हैं। चार अनुत्तर विमान के देवता भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव उत्कृष्ट चार भव करते हैं। कालादेश की अपेक्षा ६ गम्मा होते हैं। सर्वार्थसिद्ध के देवता भवादेश की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट दो भव करते हैं। कालादेश की अपेक्षा काल के ३ गम्मा (सातवां, आठवां, नवमा) होते हैं।

नवमें देवलोक से लेकर नवग्रैवेयक तक काल के ६ गम्मा कहने चाहिए। नवमें देवलोक की स्थिति जघन्य १८ सागरोपम उत्कृष्ट १६ सागरोपम, दसवें देवलोक की स्थिति जघन्य १६ सागरोपम उत्कृष्ट २० सागरोपम। इस तरह एक एक सागर बढ़ाते जाना चाहिए। नवमे ग्रैवेयक की स्थिति जघन्य ३० सागरोपम उत्कृष्ट ३१ सागरोपम से गम्मा कहने चाहिए।

नवमे देवलोक के कालसम्बन्धी ६ गम्मा–(१) पहला गम्मा–ओधिक और ओधिक–१८ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५७ सागरोपम तीन करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा–ओधिक और जघन्य–१८ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५७ सागरोपम तीन प्रत्येक वर्ष। (३) तीसरा गम्मा–ओधिक और उत्कृष्ट–१८ सागरोपम करोड़ पूर्व, ५७ सागरोपम तीन करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओधिक–१८ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५४ सागरोपम तीन करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–१८ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५४ सागरोपम तीन प्रत्येक

वर्ष। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–१८ सागरोपम करोड़ पूर्व, ५४ सागरोपम तीन करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओधिक–१६ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५७ सागरोपम तीन करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–१६ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५७ सागरोपम तीन प्रत्येक वर्ष। (६) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट १६ सागरोपम करोड़ पूर्व, ५७ सागरोपम तीन करोड़ पूर्व। इसी तरह नवग्रैवेयक तक अपनी अपनी स्थिति से ६–६–गम्मा कह देने चाहिए।

चार अनुत्तर विमानों से ६ गम्मा–स्थिति जघन्य ३१ सागरोपम, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा–ओधिक और ओधिक–३१ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६६ सागरोपम दो करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा–ओधिक और जघन्य–३१ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६६ सागरोपम दो प्रत्येक वर्ष। (३) तीसरा गम्मा–ओधिक और उत्कृष्ट–३१ सागरोपम करोड़ पूर्व, ६६ सागरोपम दो करोड़ पूर्व। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओधिक–३१ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६२ सागरोपम दो करोड़ पूर्व। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–३१ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६२ सागरोपम दो प्रत्येक वर्ष। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–३१ सागरोपम करोड़ पूर्व, ६२ सागरोपम दो करोड़ पूर्व। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओधिक–३३ सागरो-

–पम प्रत्येक वर्ष, ६६ सागरोपम दो करोड़ पूर्व। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–३३ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६६ सागरोपम दो प्रत्येक वर्ष। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–३३ सागरोपम करोड़ पूर्व, ६६ सागरोपम दो करोड़ पूर्व।

सर्वार्थसिद्ध से ३ गम्मा–३३ सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–३३ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ३३ सागरोपम करोड़ पूर्व। (२) दूसरा गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–३३ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ३३ सागरोपम प्रत्येक वर्ष। (३) तीसरा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट ३३ सागरोपम करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम करोड़ पूर्व।

पृथ्वीकाय अप्काय वनस्पतिकाय और असंज्ञी मनुष्य आकर मनुष्य में उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उपजते हैं। बाकी परिमाण आदि का सारा अधिकार तथा गम्मा नाणता (फर्क) आदि तिर्यञ्च में उपजते हुए कहे उसी तरह कह देने चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पृथ्वीकाय अप्काय वनस्पतिकाय तीसरे छठे नवमे गम्मे में जघन्य १–२–३ यावत् संख्याता उपजते हैं और असंज्ञी मनुष्य छठे गम्मे में जघन्य १–२–३ यावत् संख्याता उपजते हैं। पृथ्वीकाय अप्काय वनस्पतिकाय से काल के ९ गम्मा–स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथ्वीकाय की २२००० वर्ष, अप्काय की ७००० वर्ष,

वनस्पतिकाय की १०००० वर्ष की होती है।

(१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, ८८००० वर्ष, २८००० वर्ष ४०००० वर्ष चार करोड़ पूर्व। इस तरह उपयोग लगा कर ८ गम्मा और कह देना चाहिए। असंज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा संज्ञी तिर्यञ्च में कहे उसी तरह कह देने चाहिए।

तीन विकलेन्द्रिय और असंज्ञी तिर्यञ्च आकर मनुष्य में उपजते हैं। परिमाण, गम्मा नाणत्ता आदि सारा अधिकार संज्ञी तिर्यंच में कहा उसी तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीसरे, छठे, नवमे गम्मे में जघन्य १-२-३ यावत् संख्याता उपजते हैं।

संज्ञी तिर्यञ्च और संज्ञी मनुष्य आकर मनुष्य में उपजते हैं। परिमाण गम्मा नाणत्ता आदि सारा अधिकार संज्ञी तिर्यञ्च में संज्ञी तिर्यञ्च संज्ञी मनुष्य का कहा उसी तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि संज्ञी तिर्यञ्च तीसरे, छठे, नवमे गम्मे में जघन्य १-२-३ यावत् संख्याता उपजते हैं। और संज्ञी मनुष्य ६ ही गम्मों में जघन्य १-२-३ यावत् संख्याता उपजते हैं।

६ नारकी, १० भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, १२ देवलोक, नवग्रैवेयक, चार अनुत्तर विमान, इन ३२ स्थानों के ९-९ गम्मों के हिसाब से ३२×९=२८८ गम्मा हुए। चार चार नाणत्ता के हिसाब से ३२×४=१२८ नाणत्ता हुए।

सर्वार्थसिद्ध के ३ गम्मा, असंज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा, नाणत्ता नहीं। पृथ्वीकाय अप्काय वनस्पतिकाय में ९-९ गम्मा के हिसाब से ३×९=२७ गम्मा हुए। नाणत्ता पृथ्वीकाय में ६, अप्काय में ६, वनस्पतिकाय में ७, ये १९ नाणत्ता हुए। तीन विकलेन्द्रिय और असंज्ञी तिर्यञ्च में ९-९ गम्मा के हिसाब से ४×९=३६ गम्मा हुए और ९-९ नाणत्ता के हिसाब से ४×९=३६ नाणत्ता हुए। संज्ञी तिर्यञ्च, संज्ञी मनुष्य में ९-९ गम्मा के हिसाब से १८ गम्मा हुए। संज्ञी तिर्यञ्च के ११ नाणत्ता, संज्ञी मनुष्य के १२ नाणत्ता, ये २३ नाणत्ता हुए। कुल गम्मा ३७५ (२८८+६+२७+३६+१८=३७५) हुए। कुल नाणत्ता २०६ (१२८+१९+३६+२३=२०६) हुए। ॥ इक्कीसवां उद्देशा समाप्त ॥

उद्देशा २२ वां—घर एक वाणव्यन्तर देवता का। असंज्ञी तिर्यञ्च आकर उत्पन्न होता है। कितनी स्थिति में उत्पन्न होता है? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट पल के असंख्यातवें भाग की स्थिति में उत्पन्न होता है। बाकी परिमाण आदि का सारा अधिकार तथा गम्मा नाणत्ता आदि रत्नप्रभा पृथ्वी में उपजते हुए असंज्ञी तिर्यञ्च में कहे उसी तरह कह देना चाहिए। गम्मा ९, नाणत्ता ५ हुए।

संज्ञी तिर्यञ्च संज्ञी मनुष्य आकर उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल

की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण आदि सारा अधिकार तथा गम्मा नाणत्ता आदि रत्नप्रभा पृथ्वी में उपजते हुए संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य में कहे उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु देवता की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल की स्थिति से गम्मा कहने चाहिए। गम्मा १८ हुए, नाणत्ता १८ हुए।

तिर्यञ्च युगलिया और मनुष्य युगलिया, ये दो प्रकार के युगलिया उपजते हैं? कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण, गम्मा, नाणत्ता आदि सारा अधिकार असुरकुमार में उपजते हुए दो प्रकार के युगलियों में कहा उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल की स्थिति से गम्मा कहने चाहिए किन्तु तीसरे गम्मे में मनुष्य युगलिया की अवगाहना जघन्य एक गाऊ उत्कृष्ट तीन गाऊ की कहनी चाहिए। स्थिति तिर्यञ्च मनुष्य दोनों की जघन्य एक पल, उत्कृष्ट तीन पल्योपम से कहनी चाहिए। गम्मा १८ (२×६ =१८) हुए और नाणत्ता ११ (५+६=११) हुए।

कुल गम्मा ४५ (६+१८+१८=४५) हुए नाणत्ता ३४ (५+१८+११=३४) हुए।

॥ बाईसवां उद्देशा समाप्त ॥

तेईसवां उद्देशा—घर एक ज्योतिषी का। दो प्रकार के युगलिया आकर उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य पल के आठवें भाग, उत्कृष्ट एक पल एक लाख वर्ष की

स्थिति में उपजते हैं। परिमाण गम्मा नाणत्ता आदि स
अधिकार नागकुमार की तरह कह देना चाहिए किन्तु ती
गम्मे में मनुष्य की अवगाहना जघन्य एक गाऊ झाभे
उत्कृष्ट तीन गाऊ की कहनी चाहिए। स्थिति जघन्य एक प
लाख वर्ष, उत्कृष्ट तीन पल्योपम से कहनी चाहिए। बाकी
गम्मों में जघन्य स्थिति पल के आठवां भाग कहनी चाहिए
ज्ञान-नहीं, अज्ञान २। गम्मा ७ कहने चाहिए (चौथा, छ
नहीं कहना चाहिए)। तिर्यञ्च युगलियों के गम्मा-(१
पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-पल का आठवां भ
पल का आठवां भाग, तीन पल्योपम, एक पल लाख वर्ष
(२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य-पल का आठवां भा
पल का आठवां भाग, तीन पल्योपम पल का आठवां भाग
(३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-एक पल लाख वर्ष ए
पल लाख वर्ष; तीन पल्योपम, एक पल लाख वर्ष। (५) पांच
गम्मा-जघन्य और जघन्य-पल का आठवां भाग पल का आठ
भाग, पल का आठवां भाग पल का आठवां भाग। (७) सात
गम्मा-उत्कृष्ट और ओघिक-तीन पल्योपम पल का आठवां भा
तीन पल्योपम एक पल लाख वर्ष। (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट औ
जघन्य-तीन पल्योपम पल का आठवां भाग, तीन पल्योप
पल का आठवां भाग। (९) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट औ
उत्कृष्ट-तीन पल्योपम एक पल लाख वर्ष, तीन पल्योपम ए
पल लाख वर्ष। इसी तरह ७ गम्मा मनुष्य युगलियों के भी क

स्थान हुए। असंज्ञी

चौथे बोले भव के १६ स्थान—(१) तिर्यञ्च मर कर १२ स्थानों में जाता है—पहली नारकी, दस भवनपति, एक वाणव्यन्तर। कितनी स्थिति वाला जाता है? जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति वाला जाता है। वहाँ कितनी स्थिति पाता है? जघन्य दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातवें भाग। कितने भव करता है? जघन्य उत्कृष्ट दो।

(२) संज्ञी तिर्यञ्च मरकर २६ स्थानों में जाता है— ६ नारकी (पहले से छठी नारकी तक), भवन पति से आठवें देवलोक तक (दस भवनपति, १ वाणव्यन्त १ ज्योतिषी, ८ देवलोक-पहले से आठवें तक)। कितनी स्थिति वाला जाता है? जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति वाला जाता है। वहाँ कितनी स्थिति पाता है? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है। कितने भव करता है? जघन्य २, उत्कृष्ट ८ भव करता है।

(३) संज्ञी तिर्यञ्च मरकर सातवीं नरक में जाता है। कितनी स्थिति वाला जाता है? जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति वाला जाता है। वहाँ कितनी स्थिति पाता है? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है। कितने भव करता है? (तीजा, छठा, नवमा छोड़कर) ६ गम्मा आसरी जाने आसरी ३ भव और ७ भव। ६ गम्मा (सातवां आठवां,

देने चाहिए। गम्मा १४ हुए। नाणत्ता ११ हुए।

संज्ञी तिर्यञ्च और संज्ञी मनुष्य आकर ज्योतिषी में उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? जघन्य पल का आठवां भाग, उत्कृष्ट एक पल लाख वर्ष की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण आदि का सारा अधिकार रत्नप्रभा पृथ्वी में उपजते हुए संज्ञी तिर्यञ्च संज्ञी मनुष्य में कहा उसी तरह कह देना चाहिए। काल के ९ गम्मा संज्ञी तिर्यञ्च के इस तरह कहने चाहिए-(१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-अन्तर्मुहूर्त पल का आठवां भाग, चार करोड़ पूर्व चार पल्योपम चार लाख वर्ष। (२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य-अन्तर्मुहूर्त पल का आठवां भाग, चार करोड़ पूर्व, चार पल का आठवां भाग (आधा पल)। (३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त एक पल लाख वर्ष, चार करोड़पूर्व चार पल्योपम चार लाख वर्ष। (४) चौथा गम्मा-जघन्य और ओघिक-अन्तर्मुहूर्त पल का आठवां भाग, चार अन्तर्मुहूर्त चार पल्योपम चार लाख वर्ष। (५) पांचवां गम्मा-जघन्य और जघन्य-अन्तर्मुहूर्त पल का आठवां भाग, चार अन्तर्मुहूर्त चार पल्योपम का आठवां भाग। (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त एक पल लाख वर्ष, चार अन्तर्मुहूर्त चार पल्योपम चार लाख वर्ष। (७) सातवां गम्मा-उत्कृष्ट और ओघिक-करोड़ पूर्व पल का आठवां भाग, चार करोड़ पूर्व चार पल्योपम चार लाख वर्ष। (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-

करोड़पूर्व पल का आठवां भाग, चार करोड़ पूर्व चा पल का आठवां भाग। (६) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट औ उत्कृष्ट-करोड़ पूर्व एक पल लाख वर्ष, चार करोड़ पूर्व चा पल्योपम चार लाख वर्ष। इसी तरह ९ गम्मा संज्ञी मनुष्य के भ कह देने चाहिये किन्तु अन्तर्मुहूर्त की जगह प्रत्येक मास कहन चाहिए। गम्मा १८ (२×९=१८) हुए और नाणचा १८ (१०+८=१८) हुए। कुल गम्मा ३२ (१४+१८=३२) और नाणत्ता २९ (११+१८=२९) हुए।

॥ तेईसवां उद्देशा समाप्त ॥

चौवीसवां उद्देशा-घर एक वैमानिक देवता का। दो प्रकार के युगलिया आकर वैमानिक देवता में उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? पहले देवलोक में जघन्य एक पल की स्थिति में, दूसरे देवलोक में एक पल झाझेरी स्थिति में, उत्कृष्ट तीन तीन पल्योपम की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण आदि सारा अधिकार ज्योतिषी में उपजते तिर्यंच युगलिया और मनुष्य युगलिया में कहा उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु तीसरे गम्मे में मनुष्य युगलिया की अवगाहना तीन गाऊ कहनी चाहिए। स्थिति मनुष्य युगलिया और तिर्यंच युगलिया दोनों की तीन तीन पल्योपम की कहनी चाहिए, बाकी ६ गम्मों में स्थिति एक पल, एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट तीन तीन पल्योपम

उत्पन्न होते हैं उसके ७ गम्मा इस तरह से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—एक पल एक पल, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—एक पल एक पल, तीन पल्योपम एक पल। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—तीन पल्योपम तीन पल्योपम, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—एक पल एक पल, एक पल एक पल। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—तीन पल्योपम एक पल, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—तीन पल्योपम एक पल, तीन पल्योपम एक पल। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—तीन पल्योपम तीन पल्योपम, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। इसी तरह ७ गम्मा मनुष्य युगलिया के भी कह देने चाहिए। पहले देवलोक के कहे उसी तरह दूसरे देवलोक के कह देने चाहिए किन्तु इतना फर्क है कि दूसरे देवलोक में एक पल झाझेरा कहना। गम्मा २८ (२×७=१४×२=२८) हुए। नाणचा २२ (५+६=११×२=२२) हुए।

संज्ञी तिर्यञ्च आकर पहले देवलोक से आठवें देवलोक तक उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? पहले देवलोक में जघन्य एक पल उत्कृष्ट दो सागरोपम, दूसरे देवलोक में जघन्य एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट दो सागरोपम झाझेरी, तीसरे देवलोक में जघन्य दो सागरोपम उत्कृष्ट सात सागरोपम, चौथे

करोड़पूर्व पल का आठवां भाग, चार करोड़ पूर्व पल का आठवां भाग। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट उत्कृष्ट–करोड़ पूर्व एक पल लाख वर्ष, चार करोड़ पूर्व पल्योपम चार लाख वर्ष। इसी तरह ९ गम्मा संज्ञी मनुष्य के कह देने चाहिये किन्तु अन्तर्मुहूर्त की जगह प्रत्येक मास कह चाहिए। गम्मा १८ (२×९=१८) हुए और नाणता १ (१०+८=१८) हुए। कुल गम्मा ३२ (१४+१८=३२ और नाणत्ता २९ (११+१८=२९) हुए।

॥ तेईसवां उद्देशा समाप्त ॥

चौवीसवां उद्देशा–घर एक वैमानिक देवता का। प्रकार के युगलिया आकर वैमानिक देवता में उपजते हैं कितनी स्थिति में उपजते हैं ? पहले देवलोक में जघन्य एक पल की स्थिति में, दूसरे देवलोक में एक पल झाझेरी स्थिति में उत्कृष्ट तीन तीन पल्योपम की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण आदि सारा अधिकार ज्योतिषी में उपजते तिर्यंच युगलिया और मनुष्य युगलिया में कहा उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु तीसरे गम्मे में मनुष्य युगलिया की अवगाहना तीन गाऊ कहनी चाहिए। स्थिति मनुष्य युगलिया और तिर्यंच युगलिया दोनों की तीन तीन पल्योपम की कहनी चाहिए, बाकी ६ गम्मों में स्थिति एक पल, एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट तीन तीन पल्योपम कहनी चाहिए। दृष्टि–२ (समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि)। ज्ञान–२, अज्ञान २। गम्मा–७ तिर्यंच युगलिया पहले देवलोक में

उत्पन्न होते हैं उसके ७ गम्मा इस तरह से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-एक पल एक पल, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। (२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य-एक पल एक पल, तीन पल्योपम एक पल। (३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-तीन पल्योपम तीन पल्योपम, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। (५) पांचवां गम्मा-जघन्य और जघन्य-एक पल एक पल, एक पल एक पल। (७) सातवां गम्मा-उत्कृष्ट और ओघिक-तीन पल्योपम एक पल, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-तीन पल्योपम एक पल, तीन पल्योपम एक पल। (६) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-तीन पल्योपम तीन पल्योपम, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। इसी तरह ७ गम्मा मनुष्य युगलिया के भी कह देने चाहिए। पहले देवलोक के कहे उसी तरह दूसरे देवलोक के कह देने चाहिए किन्तु इतना फर्क है कि दूसरे देवलोक में एक पल झाझेरा कहना। गम्मा २८ (२×७=१४×२=२८) हुए। नाणचा २२ (५+६=११×२=२२) हुए।

संज्ञी तिर्यञ्च आकर पहले देवलोक से आठवें देवलोक तक उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? पहले देवलोक में जघन्य एक पल उत्कृष्ट दो सागरोपम, दूसरे देवलोक में जघन्य एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट दो सागरोपम झाझेरी, तीसरे देवलोक में जघन्य दो सागरोपम उत्कृष्ट सात सागरोपम, चौथे

करोड़पूर्व पल का आठवां भाग, चार करोड़ पूर्व चा
पल का आठवां भाग। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट औ
उत्कृष्ट—करोड़ पूर्व एक पल लाख वर्ष, चार करोड़ पूर्व चा
पल्योपम चार लाख वर्ष। इसी तरह ९ गम्मा संज्ञी मनुष्य के भ
कह देने चाहिये किन्तु अन्तर्मुहूर्त की जगह प्रत्येक मास कहन
चाहिए। गम्मा १८ (२×९=१८) हुए और नाणचा १
(१०+८=१८) हुए। कुल गम्मा ३२ (१४+१८=३२
और नाणत्ता २९ (११+१८=२९) हुए।

॥ तेईसवां उद्देशा समाप्त ॥

चौवीसवां उद्देशा—घर एक वैमानिक देवता का। दो
प्रकार के युगलिया आकर वैमानिक देवता में उपजते हैं।
कितनी स्थिति में उपजते हैं ? पहले देवलोक में जघन्य एक पल
की स्थिति में, दूसरे देवलोक में एक पल झाझेरी स्थिति में,
उत्कृष्ट तीन तीन पल्योपम की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण
आदि सारा अधिकार ज्योतिषी में उपजते तिर्यंच युगलिया औ
मनुष्य युगलिया में कहा उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु
तीसरे गम्मे में मनुष्य युगलिया की अवगाहना तीन गाऊ कहनी
चाहिए। स्थिति मनुष्य युगलिया और तिर्यंच युगलिया दोनों
की तीन तीन पल्योपम की कहनी चाहिए, बाकी ६ गम्मों में
स्थिति एक पल, एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट तीन तीन पल्योपम
कहनी चाहिए। दृष्टि—२ (समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि)। ज्ञान—२,
अज्ञान २। गम्मा—७ तिर्यंच युगलिया पहले देवलोक में

उत्पन्न होते हैं उसके ७ गम्मा इस तरह से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—एक पल एक पल, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—एक पल एक पल, तीन पल्योपम एक पल। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—तीन पल्योपम तीन पल्योपम, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—एक पल एक पल, एक पल एक पल। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—तीन पल्योपम एक पल, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—तीन पल्योपम एक पल, तीन पल्योपम एक पल। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—तीन पल्योपम तीन पल्योपम, तीन पल्योपम तीन पल्योपम। इसी तरह ७ गम्मा मनुष्य युगलिया के भी कह देने चाहिए। पहले देवलोक के कहे उसी तरह दूसरे देवलोक के कह देने चाहिए किन्तु इतना फर्क है कि दूसरे देवलोक में एक पल झाझेरा कहना। गम्मा २८ (२×७=१४×२=२८) हुए। नाणचा २२ (५+६=११×२=२२) हुए।

संज्ञी तिर्यञ्च आकर पहले देवलोक से आठवें देवलोक तक उपजते हैं। कितनी स्थिति में उपजते हैं? पहले देवलोक में जघन्य एक पल उत्कृष्ट दो सागरोपम, दूसरे देवलोक में जघन्य एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट दो सागरोपम झाझेरी, तीसरे देवलोक में जघन्य दो सागरोपम उत्कृष्ट सात सागरोपम, चौथे

देवलोक में जघन्य दो सागरोपम झाझेरी, उत्कृष्ट सात सागरोपम झाझेरी, पांचवें देवलोक में जघन्य ७ सागरोपम उत्कृष्ट दस सागरोपम, छठे देवलोक में जघन्य दस सागरोपम उत्कृष्ट चौदह सागरोपम, सातवें देवलोक में जघन्य चौदह सागरोपम उत्कृष्ट सतरह सागरोपम, आठवें देवलोक में जघन्य १७ सागरोपम उत्कृष्ट १८ सागरोपम की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण आदि का अधिकार रत्नप्रभा पृथ्वी में उपजते हुए संज्ञी तिर्यंच में कहा उसी तरह कह देना चाहिए। काय संवेध के दो :- भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव उत्कृष्ट ८ भव करता है। कालादेश की अपेक्षा काल के ६ गम्मा होते हैं, वे ऊपर कही हुई अलग अलग स्थिति से कह देने चाहिए। (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, सात सागरोपम, दस सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व आठ सागरोपम, आठ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चार पल्योपम, चार पल्योपम झाझेरी, ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, ४० सागरोपम, ५६

ागरोपम, ६८ सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक ौर उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, सागरोपम, ७ सागरोपम झाझेरी, दस सागरोपम, १४ ागरोपम, १७ सागरोपम, १८ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व ाठ सागरोपम, आठ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, २८ ागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ ागरोपम, ७२ सागरोपम। (४) जघन्य और ओघिक–न्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी दो सागरोपम, दो सागरोम झाझेरी, ७ सागरोपम, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, ७ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त आठ सागरोपम, ८ सागरोपम ाझेरी, २८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम। (५) ांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक ल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोम, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार पल्योपम, चार पल्योपम झाझेरी, ८ सागरोम, ८ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, ७ सागरोपम झाझेरी, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, १८ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी,

देवलोक में जघन्य दो सागरोपम झाझेरी, उत्कृष्ट सात सागरोपम झाझेरी, पांचवें देवलोक में जघन्य ७ सागरोपम उत्कृष्ट दस सागरोपम, छठे देवलोक में जघन्य दस सागरोपम उत्कृष्ट चौदह सागरोपम, सातवें देवलोक में जघन्य चौदह सागरोपम उत्कृष्ट सतरह सागरोपम, आठवें देवलोक में जघन्य १७ सागरोपम उत्कृष्ट १८ सागरोपम की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण आदि का अधिकार रत्नप्रभा पृथ्वी में उपजते हुए संज्ञी तिर्यंच में कहा उसी तरह कह देना चाहिए। काय संवेध के दो भेद-भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव उत्कृष्ट ८ भव करता है। कालादेश की अपेक्षा काल के ६ गम्मा होते हैं, वे ऊपर कही हुई अलग अलग स्थिति से कह देने चाहिए। (१) पहला गम्मा–ओधिक और ओधिक–अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, सात सागरोपम, दस सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व आठ सागरोपम, आठ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा–ओधिक और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चार पल्योपम, चार पल्योपम झाझेरी, ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, ४० सागरोपम, ५६

नववां, छोडकर) आने आसरी २ भव और ६ भव । ३ गम्मा (तीजा, छठा, नववां) आसरी-जाने आसरी ३ भव और ५ भव । ३ गम्मा (सातवां, आठवां, नववां) आने आसरी २ भव और ४ भव करता है ।

(४) संज्ञी मनुष्य मरकर १५ स्थान में जाता है—पहली नारकी, भवनपति से दूसरे देवलोक तक। कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य प्रत्येक मास (दो महीने से नौ महीने तक) और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है । कितने भव करता है ? जघन्य २ उत्कृष्ट ८ भव करता है ।

(५) संज्ञी मनुष्य मरकर ११ स्थानों में जाता है—५ नारकी (दूसरी से छठी तक), ६ देवलोक (तीसरे से आठवें तक) । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य प्रत्येक वर्ष और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है। कितने भव करता है ? जघन्य २ उत्कृष्ट ८ भव करता है ।

(६) संज्ञी मनुष्य मरकर ५ स्थानों में जाता है—४ देवलोक (नववें से बारहवें देवलोक तक), एक नवग्रैवेयक । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य प्रत्येक वर्ष और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है । कितने भव

सागरोपम, ६८ सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा—ओघिक और उत्कृष्ट—अन्तर्मुहूर्त दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, ७ सागरोपम झाझेरी, दस सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, १८ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व आठ सागरोपम, आठ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम। (४) जघन्य और ओघिक—अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त आठ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार पल्योपम, चार पल्योपम झाझेरी, ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, ७ सागरोपम झाझेरी, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, १८ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी,

२८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५
सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम। (७) सात
गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–करोड़पूर्व एक पल, एक प
झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोप
१० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार करो
पूर्व आठ सागरोपम, आठ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम
२८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६
सागरोपम, ७२ सागरोपम। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट औ
जघन्य–करोड़ पूर्व एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोप
दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, १० सागरोपम, १
सागरोपम, १७ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चार पल्योपम
चार पल्योपम झाझेरी, ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी
२८ सागरोपम, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरो
पम। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–करोड़पूर्व द
सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, ७ सागरोप
झाझेरी, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, १
सागरोपम, चार करोड़ पूर्व ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी
२८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५
सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम।

मनुष्य पहले देवलोक से आठवें देवलोक तक उपजते हैं,
उसके काल सम्बन्धी ९ गम्मा–तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय की तरह कह
देने चाहिए किंतु इतनी विशेषता है कि पहले दूसरे देवलोक में

घन्य स्थिति प्रत्येक मास की कहनी चाहिए। तीसरे से लेकर आठवें देवलोक तक जघन्य स्थिति प्रत्येक वर्ष की कहनी चाहिए। भवादेसेणं-दो भव, आठ भव करते हैं।

नवमें देवलोक से लेकर नवग्रैवेयक तक जो मनुष्य जाता है उसके ६ गम्मा कहने चाहिए। स्थिति अपने अपने देवलोक की कहनी चाहिए। जाने आसरी ३ भव और ७ भव होते हैं। काल के ६ गम्मा इस प्रकार कहने चाहिए-(१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-प्रत्येक वर्ष १८ सागरोपम, १६ सागरोपम, २० सागरोपम, २१ सागरोपम, २२ सागरोपम, २३ सागरोपम, २४ सागरोपम, २५ सागरोपम, २६ सागरोपम, २७ सागरोपम, २८ सागरोपम, २६ सागरोपम, ३० सागरोपम, चार करोड़ पूर्व ५४ सागरोपम, ५७ सागरोपम, ६० सागरोपम, ६३ सागरोपम, ६६ सागरोपम, ६६ सागरोपम, ७२ सागरोपम, ७५ सागरोपम, ७८ सागरोपम, ८१ सागरोपम, ८४ सागरोपम, ८७ सागरोपम, ६० सागरोपम, ६३ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य-प्रत्येक वर्ष १८ सागरोपम से लेकर एक एक सागर चढ़ाते हुए ३० सागरोपम तक कह देना चाहिए। चार प्रत्येक मास ५४ सागरोपम से लेकर तीन तीन सागरोपम बढ़ाते हुए ६० सागरोपम तक कह देना चाहिए। (३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-प्रत्येक वर्ष १६ सागरोपम से लेकर एक एक बढ़ाते हुए ३१ सागरोपम तक; चार करोड़ पूर्व ५७ सागरोपम

पम से लेकर तीन तीन सागरोपम बढाते हुए ६३ सागरोपम तक कह देना चाहिए। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओधिक-प्रत्येक वर्ष १८ सागरोपम से लेकर एक एक सागर बढाते हुए ३० सागरोपम तक; चार प्रत्येक वर्ष ५७ सागरोपम से ६३ सागरोपम तक तीन तीन सागरोपम बढाते हुए कहना चाहिए। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य-प्रत्येक वर्ष १८ सागरोपम से एक एक सागर बढाते हुए ३० सागरोपम तक; चार प्रत्येक वर्ष ५४ सागरोपम से ६० सागरोपम तक तीन तीन सागरोपम बढाते हुए कहना चाहिए। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट-प्रत्येक वर्ष १९ सागरोपम से एक एक सागर बढाते हुए ३१ सागरोपम तक; चार प्रत्येक वर्ष ५७ सागरोपम से लेकर ६३ सागरोपम तक तीन तीन सागरोपम बढाते हुए कहना चाहिए। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओधिक-करोड़ पूर्व १८ सागरोपम से लेकर एक एक सागर बढाते हुए ३० सागरोपम तक; चार करोड़ पूर्व ५७ सागरोपम से लेकर ६३ सागरोपम तक तीन तीन सागरोपम बढाते हुए कहना चाहिए। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य-करोड़ पूर्व १८ सागरोपम से लेकर ३० सागरोपम तक; चार करोड़ पूर्व ५४ सागरोपम से लेकर ६० सागरोपम तक तीन तीन सागरोपम बढाते हुए कहना चाहिए। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-करोड़ पूर्व १९ सागरोपम से लेकर एक एक बढाते हुए ३१ सागरोपम तक; चार करोड़ पूर्व ५७ सागरोपम से लेकर

६३ सागरोपम तक तीन तीन सागरोपम बढ़ाते हुए कहना चाहिये।

चार अनुत्तरविमान से ६ गम्मा-स्थिति जघन्य ३१ सागरोपम, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम, जाने आसरी ३ भव ५ भव करते हैं। (१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-प्रत्येक वर्ष ३१ सागरोपम, तीन करोड़ पूर्व ६६ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य-प्रत्येक वर्ष ३१ सागरोपम, तीन करोड़ पूर्व ६२ सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, तीन करोड़ पूर्व ६६ सागरोपम। (४) चौथा गम्मा-जघन्य और ओघिक-प्रत्येक वर्ष ३१ सागरोपम, तीन प्रत्येक वर्ष ६६ सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा-जघन्य और जघन्य-प्रत्येक वर्ष ३१ सागरोपम, तीन प्रत्येक वर्ष ६२ सागरोपम। (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट-प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, तीन प्रत्येक वर्ष ६६ सागरोपम। (७) सातवां गम्मा-उत्कृष्ट और ओघिक-करोड़ पूर्व ३१ सागरोपम, तीन करोड़ पूर्व ६६ सागरोपम। (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-करोड़ पूर्व ३१ सागरोपम, तीन करोड़ पूर्व ६२ सागरोपम। (९) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम, तीन करोड़ पूर्व ६६ सागरोपम।

सर्वार्थसिद्ध से ३ गम्मा-तेतीस सागरोपम की स्थिति से कहना चाहिए। तीसरा छठा और नवमा-ये तीन गम्मा होते

हैं। जाने आसरी तीन भव करते हैं। (३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट दो प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, दो करोड़ पूर्व तेतीस सागरोपम। (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट-दो प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, दो प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम। (९) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-दो करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम, दो करोड़ पूर्व ३३ सागरोपम।

पहले देवलोक के युगलियों के गम्मा-१४ (२×७=१४), मनुष्य तिर्यञ्च के १८ (२×९=१८), ये ३२ गम्मा (१४+१८=३२) हुए। इसी तरह दूसरे देवलोक के भी ३२ गम्मा हुए। तीसरे से आठवें देवलोक तक तिर्यञ्च के ५४ (६×९=५४), मनुष्य के ५४ ये १०८ गम्मा (५४+५४=१०८) हुए। नवमें देवलोक से चार अनुत्तर विमान तक छह घर होते हैं इसलिए मनुष्य के ५४ गम्मा (६×९=५४) हुए। सर्वार्थसिद्ध के ३ गम्मा हुए। ये सब २२९ गम्मा (३२+३२+१०८+५४+३=२२९) हुए। नाणत्ता-पहले देवलोक में २९ नाणत्ता, दूसरे देवलोक में २९ नाणत्ता। तीसरे से आठवें देवलोक तक हरेक में १६-१६ नाणत्ता होने से ९६ नाणत्ता (६×१६=९६) हुए। नवमे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक सात घर होते हैं। हरेक में ६-६ नाणत्ता होने से ४२ (७×६=४२) नाणत्ता हुए। ये सब १९६ नाणत्ता (२९+२९+९६+४२=१९६) नाणत्ता हुए।

सब गम्मा और नाणत्ता की जोड़:—

	गम्मा	नाण
२४ वें शतक का पहला उद्देशा, घर एक नारकी का	१३५	११६
२४ वें शतक के दूसरे से ग्यारहवें उद्देशे तक, घर १० भवनपति का	४५०	३४०
२४ वें शतक का बारहवां उद्देशा, घर एक पृथ्वी-काय का	२२८	१४५
२४ वें शतक का तेरहवां उद्देशा घर एक अप्काय का	२२८	१४५
२४ वें शतक का १४ वां उद्देशा, घर एक तेउकाय का	१०२	८६
२४ वें शतक का १५ वां उद्देशा, घर एक वायुकाय का	१०२	८६
२४ वें शतक का १६ वां उद्देशा, घर एक वनस्पति-काय का	२२८	१४५
२४ वें शतक का १७ वां उद्देशा, घर एक बेइन्द्रिय का	१०२	८६
२४ वें शतक का १८ वां उद्देशा, घर एक तेइन्द्रिय का	१०२	८६
२४ वें शतक का १६ वां उद्देशा, घर एक चौइन्द्रिय का	१०२	८६
२४ वें शतक का २० वां उद्देशा, घर एक तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय का	३४५	१६७
२४ वें शतक का २१ वां उद्देशा, घर एक मनुष्य का	३७५	२०६
२४ वें शतक का २२ वां उद्देशा, घर एक वाणव्यन्तर देव का	४५	३४
२४ वें शतक का २३ वां उद्देशा, घर एक ज्योतिषी देव का	३२	२६
२४ वें शतक का २४ वां उद्देशा, घर एक वैमानिक देव का	२२६	१६३
	२८०५	१६६८

ये सब गम्मा २८०५ हुए और नाणत्ता १६६८ हुए।

६५० गम्मे संख्याता उपजने के—

मनुष्य ३४ स्थान—७ नारकी, १० भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी, १२ देवलोक, ग्रैवेयक, अनुत्तर विमान और सर्वार्थसिद्ध—में जाता है और ३३ स्थान (सातवीं नरक के सिवाय) से आता है ये ६७ हुए इनको ६ से गुणा करने से ६०३ हुए इनमें सर्वार्थसिद्ध के ६ गम्मे जाने के और ६ गम्मे आने के ये १२ गम्मे घटा देने से ५९१ गम्मे रहे। मनुष्य युगलिया और तिर्यंच युगलिया मर कर १४ स्थान (१० भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक) में जाते हैं इनके १४×२=२८×९=२५२ गम्मे हुए इनमें से ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक इन ३ स्थानों में मनुष्य युगलिया और तिर्यंच युगलिया जाने के ६+६=१२ गम्मे (चौथा और छठा) कम कर देने से २४० गम्मे रहे। मनुष्य मरकर ९ स्थान में (५ स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय) जाता है उसके ९×९=८१ गम्मे हुए। मनुष्य में ८ स्थान से (पृथ्वी, पानी, वनस्पति, ३ विकलेन्द्रिय, असन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय, सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय) आते हैं इनके तीन तीन गम्मे (तीजा, छठा, नवमा) ८×३=२४ हुए। मनुष्य में असन्नी मनुष्य आता है इसका १ छठा गम्मा। मनुष्य में सन्नी मनुष्य आता है उसके ९ गम्मे हुए। सन्नी तिर्यंच में सन्नी और असन्नी तिर्यञ्च आते हैं उनके २—२ गम्मे (तीसरा और नवमा) २×२=४ गम्मे हुए। इस प्रकार ५९१+२४०+८१+२४+

१+६+४=६५० गम्मे संख्याता उपजने के हुए।
१८५१ गम्मे असंख्याता उपजने के—

असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय मर कर १२ स्थान (१ भवनपति, व्यन्तर, पहली नरक) में जाता है। सन्नी तिर्य पंचेन्द्रिय २७ स्थानों (१० भवनपति, व्यन्तर, ज्योति पहले से आठवां देवलोक, ७ नरक) में जाता है और इन २७ स्थानों से आता है। ये २७+२७=५४ स्थान हुए पृथ्वी पानी वनस्पति में १४ प्रकार के देवता (१० भवनपति व्यन्तर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक) आते हैं। ये ३×१ =४२ स्थान हुए। पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तिर्यञ्च पञ्चे न्द्रिय इन ६ स्थानों में १० स्थान (पाँचस्थावर, तीः विकलेन्द्रिय, सन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय, असन्नी तिर्यञ्च पञ्चे न्द्रिय) के आते हैं। ये ६×१०=६० स्थान हुए। इन १२+ ५४+४२+६०=१६८ स्थानों के नौ नौ गम्मे होने से १६८× ६=१७८२ गम्मे हुए। उपरोक्त ६ स्थानों में असन्नी मनुष्य आता है उसके तीन गम्मे (४-५-६) होते हैं। ये ६×३= २७ गम्मे हुए। मनुष्य में ८ स्थान (पृथ्वी पानी वनस्पति, ३ विकलेन्द्रिय, असन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय, सन्नी तिर्यञ्च पंचे- न्द्रिय) आते हैं। इनके ६-६ गम्मे (१, २, ४, ५, ७, ८) होने से ८×६=४८ गम्मे हुए। मनुष्य में असन्नी मनुष्य आता है उसके २ गम्मे (४, ५) होते हैं। इस प्रकार ये—१७८२ +२७+४८+२=१८५६ गम्मे हुए।

सन्नी तिर्यञ्च में सन्नी तिर्यञ्च और असन्नी तिर्यंच आते हैं उनके दो दो गम्मे (३–६) २×२=४ (युगलिया होने से) संख्याता में गिनाये हैं। तथा वनस्पति मर कर वनस्पति में उत्पन्न होती है उसके चार गम्मे (१–२–४–५) दो भव अनन्त भव के हैं। इस प्रकार ये ८ गम्मे कम कर देने से १८५६–८=१८५१ गम्मे असंख्याता उपजने के हुए।

चार गम्मे अनन्ता उपजने के

वनस्पति मर कर वनस्पति में उपजती है उसके चार गम्मे (१–२–४–५) अनन्ता उपजने के हैं।

संख्याता के ९५०, असंख्याता के १८५१ और अनन्ता ४ इस प्रकार कुल ९५०+१८५१+४=२८०५ गम्मे हुए।

ज्योतिषी, पहला दूजा देवलोक) के देवता मरकर पृथ्वी पानी वनस्पति में उत्पन्न होते हैं। कितनी स्थिति वाले उत्पन्न होते हैं? अपने स्थान के अनुसार स्थिति वाले उत्पन्न होते हैं। वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते हैं। कितने भव करते हैं? जघन्य उत्कृष्ट दो भव करते हैं।

(१२) पृथ्वीकाय मरकर पांच स्थावर में उत्पन्न होते हैं। अप्काय मरकर पांच स्थावर में उत्पन्न होते हैं। तेउकाय मरकर पांच स्थावर में उत्पन्न होते हैं। वायुकाय मरकर पांच स्थावर में उत्पन्न होते हैं। वनस्पति काय मरकर चार स्थावर में उत्पन्न होते हैं। वनस्पतिकाय मरकर वनस्पतिकाय में उत्पन्न होते हैं। इनमें से पहले के २४ बोलों में चार गम्मा (पहला, दूसरा, चौथा, पांचवां), आसरी दो भव और असंख्याता भव करते हैं। दो अन्तर्मुहूर्त और असंख्याता काल। वनस्पति मरकर वनस्पति में उत्पन्न होते हैं ४ गम्मा (पहला, दूसरा, चौथा, पांचवां) आसरी दो भव और अनन्ता भव करते हैं। दो अन्तर्मुहूर्त और अनन्ताकाल पांच स्थावर पांच स्थावर में ५ गम्मा (तीसरा, छठा, सातवां, आठवां, नवमा) दो भव और ८ भव करते हैं।

(१३) तीन विकलेन्द्रिय मरकर तीन विकलेन्द्रियों में उत्पन्न होते हैं। तीन विकलेन्द्रिय मरकर पांच स्थावर में उत्पन्न होते हैं। पांच स्थावर मरकर तीन विकलेन्द्रियों में उत्पन्न होते हैं। कितनी स्थिति वाले जावे हैं अपने अपने

		ओघिक	जघन्य	उत्कृष्ट	कुल गम्मे
	जघन्य उत्कृष्ट २ भव के	२६१	२४९	२६४	७७४
	जघन्य २ भव उत्कृष्ट ८ भव के	४९६	५२६	६२४	१६४६
	जघन्य २ भव उत्कृष्ट असंख्याता भव के	४८	४८	०	९६
	जघन्य २ भव उत्कृष्ट अनन्ता भव के	२	२	०	४
	जघन्य २ भव उत्कृष्ट संख्याता भव के	७८	७८	०	१५६
	जघन्य ३ भव उत्कृष्ट ७ भव के	१७	१७	१७	५१
	जघन्य २ भव उत्कृष्ट ६ भव के	१८	१८	१५	५१
	जघन्य ३ भव उत्कृष्ट ५ भव के	४	४	४	१२
	जघन्य २ भव उत्कृष्ट ४ भव के	३	३	६	१२
०	जघन्य उत्कृष्ट ३ भव के	१	१	१	३
		९२८	९४६	९३१	२८०५

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

श्री सेठिया जैन ग्रन्थमाला से प्रकाशित

श्री जैन सिद्धान्त बोल संग्रह भाग
१से७ प्रत्येक ३॥) पूरा सेट २४॥)
उत्तराध्ययन सूत्र सार्थ ५॥)
आचारांगसूत्र प्र. श्रुतस्कंध सार्थ ३॥)
प्रश्न व्याकरण सूत्र सार्थ ३।≈)
उत्तराध्ययन सूत्र सार्थ १-४ अ. १)
दश वैकालिक सूत्र श्लोक ।)
उत्तराध्ययन सूत्र श्लोक ॥≈)
नमिपव्वज्जा सार्थ ।)
महावीर स्तुति सार्थ –)॥।
नंदी सूत्र मूल ।≈)
भगवतीसूत्रकेथोकड़ोंका भाग १ ॥)
" " २ ॥≈)
" " ३ ॥≈)
" " ४ ॥≈)
" " ५ ॥≈)
" " ६ ८२
" " ७ ६२
पन्नवणासूत्रके थोकड़ोंका भाग १ ॥)
" भाग २ ॥)
" भाग ३ ॥)
प्रस्तार रत्नावली २।≈)
प्रकरण थोकड़ासंग्रह दूसरा भाग १॥)
गणधरवाद भाग १ २ ३ प्रत्येक –)॥
आर्हत प्रवचन १।)
मुक्ति के पथ पर १)
अपरिचिता १)
सरल बोधसार संग्रह ॥–)
शिक्षा सार संग्रह ।)

शिक्षा संग्रह पहला भाग
कर्त्तव्य कौमुदी दूसरा भाग
नीति दीपक शतक
सूक्ति संग्रह
उपदेश शतक
जैन सिद्धान्त कौमुदी
अर्धमागधी धातु रूपावलि
" शब्द रूपावलि
सामायिक प्रतिक्रमण मूल १६
सामायिक सूत्र सार्थ
प्रतिक्रमण सूत्र सार्थ
आनुपूर्वी
तेतीस बोल का थोकड़ा
पचीस बोलका थोकड़ा
ज्ञान लब्धिका थोकड़ा
अट्ठाणु बोलका बासठिया
मांगलिक स्तवन संग्रह दू. भाग
शीलरत्न सार संग्रह
सामायिक नित्य नियम
वृहदालोयणा
जैन विविध ढाल संग्रह
संक्षिप्त कानून संग्रह
प्रार्थना
गुणविलास
जैनागमतत्त्व दीपिका
धीलाल नाममाला
पृच्छबोध
धर्ममूर्ति आनन्दकुमारी

पता—अगरचन्द भैरोंदान सेठिया

जैन पारमार्थिक संस्था, मरोटी सेठियों का मोहल्ला

बीकानेर (राजस्थान)

श्री सेठिया जैन ग्रन्थमाला पुष्प नं० १३७

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों का

अष्टम भाग

(पचीसवाँ शतक)

प्रकाशक—
अगरचन्द भैरोंदान सेठिया
बीकानेर

भगवती सूत्र के थोकड़ों का

अष्टम भाग

पचीसवाँ शतक

(थोकड़ा सं० १६७ से १९२ तक)

अनुवादक—

पं० घेवरचन्द्र बाँठिया 'वीरपुत्र'

प्रकाशक—

अगरचन्द भैरोंदान सेठिया

बीकानेर

प्रथमावृत्ति १०००

फाल्गुन सुदी ५
वीर सं० २४८८
वि० सं० २०१८

मूल्य ८५ नये पैसे

प्रकाशक—
अगरचन्द भैरोंदान सेठिया
बीकानेर

मूल्य ८५ नये पैसे

प्राप्तिस्थान—
अगरचन्द भैरोंदान सेठिया
जैन पारमार्थिक संस्था
मरोटी सेठियों का मोहल्ला,
बीकानेर (राजस्थान)

मुद्रक—
नेमीचन्द बाकलीवाल
कमल प्रिन्टर्स
मदनगंज-किशनगढ़ (राज०)

दो शब्द

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों का आठवां भाग पाठकों की सेवा में उपस्थित करते हुए हमें बड़ा हर्ष और सन्तोष होता है। इस भाग में श्री भगवती सूत्र के पचीसवें शतक के छब्बीस थोकड़े (थोकड़ा नं० १६७ से १९२ तक) संगृहीत हैं। यह तो पाठकों को विदित ही है कि श्री भगवती सूत्र का द्रव्यानुयोग संबंधी विषय अतिशय गहन और दुरूह है। शास्त्रीय विषय को सरल और सुबोध भाषा में यथार्थ रूप से विवेचन करने का हमारा प्रयास रहा है। इसीलिये थोकड़े सीखने सिखाने वालों में प्रचलित प्राकृत भाषा के शब्दों का प्रयोग करने में भी हमने संकोच नहीं किया है। हम अपने प्रयास में कहाँ तक सफल हुए हैं, यह निर्णय करना पाठकों का काम है। पर हम अपने सुज्ञ पाठकों से यह निवेदन करना आवश्यक समझते हैं कि वे इस भाग में विषय विवेचन में यदि कहीं त्रुटि या किसी प्रकार की कमी अनुभव करें तो हमें सूचित करने का कष्ट करें ताकि हम अपनी भूल सुधार लें तथा नई आवृत्ति में आवश्यक संशोधन किया जा सके।

इस भाग में पचीसवें शतक के सभी थोकड़े दिये गये हैं अतः इस भाग का कलेवर काफी बढ़ गया है और तदनुसार इसके मूल्य में वृद्धि करनी पड़ी है। आशा है पाठकगण इसका ख्याल न करेंगे।

पहले के सात भागों की तरह इस भाग के संकलन संशोधन में भी श्रीमान् परमप्रतापी पूज्य श्री १००८ श्री गणेशीलालजी महाराज साहेब के सुशिष्य शास्त्रमर्मज्ञ पंडित रत्न स्थविर मुनि श्री पन्नालालजी महाराज साहेब का पूर्ण सहयोग रहा है। बल्कि कहना तो यह चाहिये कि यह आपकी महती कृपा और परिश्रम का फल है कि हम पाठकों की सेवामें इस भाग को इस रूप में प्रस्तुत कर सके हैं। अतः हम पूज्य मुनि श्री के प्रति विनम्रभाव से कृतज्ञता प्रगट करते हैं। थोकड़ों का अनुवाद एवं संपादन श्रीमान् पं० घेवरचन्द्रजी बाँठिया 'वीरपुत्र' ने किया है अतः हम उनके प्रति भी आभार प्रदर्शित करते हैं।

निवेदक—जेठमल सेठिया

विषयानुक्रमणिका

स्थान के अनुसार स्थिति वाले जाते हैं। वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते हैं। कितने भव करते हैं? ४ गम्मा आसरी दो भव और संख्याता भव करते हैं। ५ गम्मा आसरी दो भव और आठ भव करते हैं।

(१४) संज्ञी असंज्ञी तिर्यञ्च मरकर १० स्थान में ~~जाता है~~ (पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय और मनुष्य) जाते हैं। कितनी स्थिति वाले जाते हैं? जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति वाले जाते हैं। वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते हैं। कितने भव करते हैं? जघन्य दो और उत्कृष्ट ८ भव करते हैं।

(१५) संज्ञी असंज्ञी मनुष्य मर कर ८ औदारिक (पृथ्वी, पानी, वनस्पति, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय मनुष्य) में जाते हैं। कितनी स्थिति वाले जाते हैं? अपने स्थान के अनुसार स्थिति वाले जाते हैं। वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं। अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते हैं। कितने भव करते हैं? जघन्य २, उत्कृष्ट ८ भव करते हैं।

(१६) संज्ञी मनुष्य असंज्ञी मनुष्य मरकर तेउकाय वायुकाय में जाते हैं। कितनी स्थिति वाले जाते हैं? अपने २ स्थान के अनुसार स्थिति वाले जाते हैं। वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते हैं। कितने भव करते हैं? २ भव करते हैं।

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१६	उत्कृप्ट	उत्कृष्टः
४	१८, २०	असख्यात	असंख्यात
१३	११	श्वास च्छ्वासपणे	श्वासोच्छ्वासपणे
१५	१७		थोड़ा
१२	२२	प्रदेशावमाही	प्रदेशावगाही
१७	२४	अल्प	अल्प
१८	२४	इ ।	इसी
२१	६	एक	भेद
४३	१३	विहाए देश	विहाएदेश
४५	२३	है	हैं
५६	८	अनन्त देशी	अनन्त प्रदेशी
५७	१	कित ो	कितने
६०	१	स्कन्ध	स्कन्ध सेया
६०	२१-२२	असंख्य त	असंख्यात
६५	१२	कम्‍ ामान	कम्पमान
८४	११	हाता	होता
८६	१५	····द्ध	शुद्धि
८६	२२	निर्ग्रन्य	निर्ग्रन्थ
६०	१०-११	छट्ठाए वडिया	छट्ठाए वडिया
६०	१५	लाक	लोक
६३	१४	भगवति	भगवती
६८	८	असंयन	असंयम
६६	३	न सन्नोवउत्ता	नोसन्नोवउत्ता
१०२	१३	भाव	भव
१०४	३	कपाय	कपाय

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११४	११	छेदोपस्थानीय	छेदोपस्थापनीय
११४	१८	सूक्ष्म संपराय	सूक्ष्म सम्पराय
११८	२	इसो	इसी
१२८	२२	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट

उपरोक्त अशुद्धियों के सिवा अक्षर और मात्राओं के टाइप टूटे और घिसे होने से कुछ अशुद्धियाँ मालूम होती हैं। जैसे 'स' 'म' की तरह, 'र' 'उ' की तरह, 'क' 'व' की तरह और 'प' 'र' की तरह दिखाई देता है। इसी तरह ए की मात्रा अनुस्वार की तरह, ओ की मात्रा 'ां' की तरह दिखाई देती है। इ ई की मात्राएं, 'ॅ' ए, प्र, अ, फ, त आदि कई अक्षर भी बराबर नहीं उठे हैं। 'से' में ए की मात्रा कई जगह नहीं उठी है। कहीं २ 'व' के स्थान पर 'थ' और 'थ' के स्थान पर 'व' छप गया है। किन्तु हमने ऐसी अशुद्धियां शुद्धिपत्र में नहीं निकाली हैं क्योंकि पूर्वापरसम्बन्ध का ख्याल रखने से पढ़ने में भूल होने की संभावना नहीं है।

थोकड़ा नं० १६७

श्री भगवतीजी सूत्र के पचीसवें शतक के पहले उद्देशे में २८ बोलों की योगों की अल्पाबहुत्व चलती है सो कहते हैं–

१—अहो भगवन्! संसारी जीव कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! संसारी जीव १४ प्रकार के हैं—१ अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय, २ पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय, ३ अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय, ४ पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय, ५ अपर्याप्त बेइन्द्रिय, ६ पर्याप्त बेइन्द्रिय, ७ अपर्याप्त तेइन्द्रिय, ८ पर्याप्त तेइन्द्रिय, ९ अपर्याप्त चौइन्द्रिय, १० पर्याप्त चौइन्द्रिय, ११ अपर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय, १२ पर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय, १३ अपर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय, १४ पर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय।

२—अहो भगवन्! इन चौदह प्रकार के जीवों में जघन्य उत्कृष्ट योग आसरी कौन किससे कम ज्यादा (अल्प बहुत्व) है? हे गौतम!

१–*सबसे थोड़ा अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का जघन्य योग

*आत्म प्रदेशों के परिस्पन्दन (कम्पन) को योग कहते हैं। वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम की विचित्रता से योग अनेक प्रकार का होता है। किसी एक जीव में दूसरे जीव की अपेक्षा से अल्पयोग होता है, और किसी दूसरे

२–उससे अपर्याप्त बादरएकेन्द्रियका जघन्य योग असंख्यात गुणा

३–उससे अपर्याप्त बेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यातगुणा

४–उससे अपर्याप्त तेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

५–उससे अपर्याप्त चौइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

६–उससे अपर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

७–उससे अपर्याप्त संज्ञीपञ्चेन्द्रियका जघन्य योग असंख्यात गुणा

८–उससे पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

९–उससे पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१०–उससे अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

जीव की अपेक्षा से उत्कृष्ट योग होता है। जीव के चौदह भेदों की अपेक्षा से प्रत्येक में जघन्य योग और उत्कृष्ट योग की गिनती करने से योग के २८ भेद होते हैं।

सूक्ष्म अपर्याप्त एकेन्द्रिय का जघन्य योग सबसे अल्प होता है क्योंकि उसका शरीर सूक्ष्म होने से और अपर्याप्त होने से अधूरा है इसलिये उसका योग सबसे अल्प है। इसके यह उपपाद योग कार्मण शरीर के द्वारा औदारिक पुद्गलों के ग्रहण करने के प्रथम समय में होता है। इसके बाद समय समय उसके योग की वृद्धि होती है जो कि उत्कृष्ट योग तक बढ़ती जाती है।

११–उससे अपर्याप्त बादरएकेन्द्रियका उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

१२–उससे पर्याप्त सूक्ष्मएकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

१३–उससे पर्याप्त बादरएकेन्द्रियका उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

१४–उससे पर्याप्त बेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१५–उससे पर्याप्त तेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१६–उससे पर्याप्त चौइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१७–उससे पर्याप्त असंज्ञीपञ्चेन्द्रियका जघन्य योग असंख्यात गुणा

१८–उससे पर्याप्त संज्ञीपञ्चेन्द्रियका जघन्य योग असंख्यात गुणा

१९–उससे अपर्याप्त बेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२०–उससे अपर्याप्त तेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२१–उससे अपर्याप्त चौइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणा

२२–उससे अपर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२३–उससे अपर्याप्त संज्ञीपञ्चेन्द्रियका उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२४–उससे पर्याप्त बेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२५–उससे पर्याप्त तेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२६—उससे पर्याप्त चौइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा
२७—उससे पर्याप्त असंज्ञीपञ्चेन्द्रियका उत्कृष्टयोग असंख्यातगुः
२८—उससे पर्याप्त संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का *उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

सेवं भंते ! सेवं भंते ! !

थोकड़ा नं० १६८

श्री भगवतीजी सूत्र के २५वें शतक के पहले उद्देशे में 'समयोगी विषमयोगी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन् ! प्रथम समय में उत्पन्न दो नैरयिक क्या समयोगी होते हैं या विषमयोगी होते हैं ? हे गौतम ! वे दोनों सिय (कदाचित्) समयोगी होते हैं और सिय (कदाचित्) विषमयोगी होते हैं । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! ×आहारक नैरयिक की अपेक्षा अनाहारक

---

*कम्मपयडी (कर्म प्रकृति) में इनके ८ भेद अधिक करके अल्पबहुत्व किया है—२९ उससे पर्याप्त अनुत्तर विमान के देवता का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३० उससे पर्याप्त ग्रैवेयक के देवता का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३१ उससे पर्याप्त युगलिया तिर्यंच मनुष्य का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३२ उससे पर्याप्त आहारक शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३३ उससे पर्याप्त बाकी के देवता का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३४ उससे पर्याप्त नारकी के नैरयिकों का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३५ उससे पर्याप्त तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३६ उससे पर्याप्त मनुष्य का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ।

×आहारक नारक की अपेक्षा अनाहारक नारक हीन योग वाला होता है

नैरयिक और अनाहारक नैरयिक की अपेक्षा आहारक नैरयिक सिय हीनयोगी (क्षीणयोगी), सिय तुल्य योगी, सिय अधिक योगी होता है अर्थात् आहारक नैरयिक की अपेक्षा अनाहारक नैरयिक हीन योगी होता है। अनाहारक नैरयिक की अपेक्षा आहारक नैरयिक अधिक योगी होता है। दो आहारक नैरयिक अथवा दो अनाहारक नैरयिक समयोगी (तुल्य योग वाले) होते हैं।

जो हीन योगी होते हैं, वे असंख्यात भाग हीन या संख्यात भाग हीन, या असंख्यात गुण हीन, या संख्यात गुण हीन, इस तरह *चौट्ठाण वड़िया होते हैं। जो अधिक योगी होते

क्योंकि जो नारक ऋजु गति से आकर आहारक पने उत्पन्न होता है वह निरन्तर आहारक होने से पुद्गलों से उपचित (पुष्ट) होता है, इसलिये वह अधिक योग वाला होता है। जो नारक विग्रह गति से अनाहारकपने उत्पन्न होता है, वह अनाहारक होने से पुद्गलों से उपचित नहीं होता है, इसलिये वह हीन योग वाला होता है। जो नारक समान समय की विग्रहगति से अनाहारकपने उत्पन्न होते हैं, अथवा ऋजुगति से आकर आहारकपने उत्पन्न होते हैं, वे दोनों एक दूसरे की अपेक्षा समान योग वाले होते हैं।

* प्रथम समय के उत्पन्न दो नैरयिक में योगों का तारतम्य चौट्ठाण वड़िया इस प्रकार समझना चाहिये—

(१) एक जीव एक समय का आहारक मंडूक गति से आया है और दूसरा जीव एक समय का आहारक इलिका गति से आया है। इन दोनों के योग असंख्यात भाग न्यूनाधिक हैं।

(२) एक जीव एक समय का आहारक मंडूक गति से आया है और दूसरा जीव दो समय का आहारक वक्रगति से आया है। इन

हैं वे भी असंख्यात भाग अधिक या संख्यात भाग अधिक या असंख्यात गुण अधिक या संख्यात गुण अधिक, इस तरह चौट्ठाणवड़िया अधिक होते हैं। इस कारण से नैरयिक सिय समयोगी सिय विषमयोगी होते हैं। इसी तरह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिये।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १६६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के पहले उद्देशे में 'पन्द्रह योगों का अल्पबहुत्व' चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन्! योग कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! योग १५ प्रकार के हैं—१ सत्य मन योग, २ असत्य मन योग, ३ सत्यमृषा (मिश्र) मन योग, ४ असत्यामृषा (व्यवहार) मन योग। ५ सत्य वचन योग, ६ असत्य वचन योग, ७ सत्यमृषा (मिश्र) वचन योग, ८ असत्यामृषा (व्यवहार) वचन योग। ९ औदारिक काय योग, १० औदारिक मिश्र काय योग, ११ वैक्रिय काय योग, १२ वैक्रिय मिश्र काय योग, १३ आहारक काय योग, १४ आहारक

दोनों के योग संख्यात भाग न्यूनाधिक है।

(३) एक जीव एक समय का आहारक मंडूक गति करके आया है और दूसरा जीव एक समय का अनाहारक एक वक्र गति करके आया है। इन दोनों के योग संख्यात गुण न्यूनाधिक हैं।

(४) एक जीव एक समय का आहारक मंडूक गति से आया है और दूसरा जीव दो समय का अनाहारक दो वक्र गति से आया है इन दोनों के योग असंख्यात गुण न्यूनाधिक हैं।

मिश्र काय योग, १५ कार्मण काय योग।

२—अहो भगवन्! इन पन्द्रह योगों में जघन्य और उत्कृष्ट की अपेक्षा कौन किससे कम, ज्यादा या विशेषाधिक है?

हे गौतम!

१–कार्मण शरीर का जघन्य योग सबसे थोड़ा है

२–उससे औदारिक मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुणा

३–उससे वैक्रिय मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुणा

४–उससे औदारिक शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुणा

५–उससे वैक्रिय शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुणा

६–उससे कार्मण शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

७-उससे आहारक मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुणा

८–उससे आहारक मिश्र का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

९–१०– उससे औदारिक मिश्र और वैक्रिय मिश्र का उत्कृष्ट योग परस्पर तुल्य असंख्यात गुणा

११–उससे व्यवहार (असत्यामृषा) मनयोग का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१२–उससे आहारक शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१३ से १९–उससे तीन प्रकार के मनयोग और चार प्रकार का वचनयोग, इन सात परस्पर तुल्य का जघन्य योग असंख्यात गुणा

२०–उससे आहारक शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२१ से ३०–उससे औदारिक शरीर, वैक्रिय शरीर चार प्रकार

के मनयोग और चार प्रकार के वचन योग, इन दस परस्पर तुल्य का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १७०

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के दूसरे उद्देशे में 'जीव द्रव्य अजीव द्रव्य' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं-

१-अहो भगवन्! द्रव्य कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! द्रव्य दो प्रकार के हैं-जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य।

२-अहो भगवन्! अजीव द्रव्य कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! दो प्रकार के हैं-रूपी अजीव द्रव्य और अरूपी अजीव द्रव्य।

३-अहो भगवन्! रूपी अजीव द्रव्य के कितने भेद हैं? हे गौतम! चार भेद हैं-स्कन्ध, देश, प्रदेश, परमाणु पुद्गल।

४-अहो भगवन्! अरूपी अजीव द्रव्य के कितने भेद हैं? हे गौतम! दस भेद हैं-धर्मास्तिकाय का स्कन्ध, देश और प्रदेश, अधर्मास्तिकाय का स्कन्ध, देश और प्रदेश, आकाशास्तिकाय का स्कन्ध, देश और प्रदेश और दसवां काल द्रव्य।

५-अहो भगवन्! क्या रूपी अजीव द्रव्य संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं? हे गौतम! संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, किन्तु अनन्त हैं। अहो भगवन्! इसका क्या कारण है? हे गौतम! परमाणु पुद्गल अनन्त हैं, दो प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं यावत् दस प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं। संख्यात प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं। असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध

होते हैं। इसी तरह बाकी ४ स्थावर और ३ विकलेन्द्रिय के भी ७०-७० गम्मा कह देने चाहिए। इसप्रकार ७०×८=५६० गम्मा हुए। इनमें से तेउकाय और वायुकाय संज्ञीमनुष्य और असंज्ञी मनुष्य में नहीं आते जिसके २४ गम्मा (९+३=१२ ×२=२४) कम कर देने से ५३६ गम्मा रहे।

घर एक तिर्यञ्च का—तिर्यञ्च में १२ औदारिक के आते हैं जिनमें से पांच स्थावर और तीन विकलेन्द्रिय इन आठ के ९-९ गम्मा करने से ७२ गम्मा हुए। संज्ञी तिर्यञ्च, संज्ञी मनुष्य और असंज्ञी तिर्यञ्च, इनके ७-७ गम्मा (तीसरा नवमा गम्मा वर्जकर) करने से २१ गम्मा हुए। असंज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा (४-५-६) हुए। ७२+२१+३=९६ गम्मा हुए।

घर एक मनुष्य का—मनुष्य में १० औदारिक के (तेउकाय वायुकाय छोड़ कर) आते हैं जिनमें से पृथ्वीकाय, अप्काय और वनस्पतिकाय तथा तीन विकलेन्द्रिय, इन छह स्थानों के ९-९ गम्मा करने से ५४ गम्मा होते हैं। संज्ञी तिर्यञ्च संज्ञी मनुष्य और असंज्ञी तिर्यञ्च, इनके ७-७ गम्मा (तीसरा, नवमा वर्जकर) करने से २१ गम्मा होते हैं। असंज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा (चौथा, पांचवां, छठा) होते हैं। ये सब मिलाकर ७८ गम्मा (५४+२१+३=७८) होते हैं। आगे के सब गम्मा मिलाकर १६४६ (९३६+५३६+९६+७८=१६४६) गम्मा होते हैं।

(३) दो भव और असंख्याता भव के ९६ गम्मा होते हैं—चार स्थावर मर कर पांच स्थावर में जाते हैं और वनस-

न्त हैं, अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं। इस कारण से रूपी
ीव द्रव्य अनन्त हैं।

६–अहो भगवन्! क्या जीव द्रव्य संख्यात हैं, असंख्यात
या अनन्त हैं? हे गौतम! जीव द्रव्य संख्यात नहीं, असं-
ात नहीं, किन्तु अनन्त हैं। अहो भगवन्! इसका क्या
रण है? हे गौतम! तेईस दण्डक के जीव असंख्यात हैं
र वनस्पतिकाय के जीव तथा सिद्ध भगवान् अनन्त हैं।

७–अहो भगवन्! क्या जीव द्रव्य अजीव द्रव्य के काम
आता है या अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आता है?
गौतम! अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आता है किंतु
व द्रव्य अजीव द्रव्य के काम में नहीं आता है*। जीव
य अजीव द्रव्यों को ग्रहण करके १४ बोलों में परिणमाता
—५ शरीर, ५ इन्द्रिय, ३ योग, १ श्वासोच्छ्वास। नारकी
र देवता ये १४ दण्डक के जीव १२ बोलों में परिणमाते हैं
औदारिक और आहारक ये दो शरीर इनके नहीं होते हैं)।
र स्थावर के जीव ६ बोलों में परिणमाते हैं (३ शरीर,
इन्द्रिय, १ योग, १ श्वासोच्छ्वास)। वायुकाय के जीव ७
लों में परिणमाते हैं (वैक्रिय शरीर बढा)। बेइन्द्रिय जीव ८
लों में परिणमाते हैं (३ शरीर, २ इन्द्रिय, २ योग, १ श्वा-

---

*जीव द्रव्य सचेतन होने से अजीव द्रव्यों को ग्रहण करके शरीरादि रूप
उनका परिभोग करता है। इसलिये जीव भोक्ता है। अजीव द्रव्य अचेतन
ने से ग्राह्य (ग्रहण करने योग्य) है इसलिये यह जीव का भोग्य है।

सोच्छ्वास)। तेइन्द्रिय जीव ६ बोलों में (एक इन्द्रिय बढ़ी) प
चौइन्द्रिय जीव १० बोलों में (एक इन्द्रिय बढ़ी) परिणमा
हैं। तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय जीव १३ बोलों में (आहारक शरीर
छोड़ कर) परिणमाते हैं। मनुष्य १४ बोलों में परिणमाते हैं

८-अहो भगवन् ! लोक तो असंख्यात प्रदेशी हैं। उस
अनन्त जीव और अनन्त अजीव द्रव्य कैसे समाये हुए हैं?
गौतम कूटागारशाला तथा प्रकाश के दृष्टान्त से समाये हुए हैं

९-अहो भगवन् ! लोक के एक आकाश प्रदेश पर कितने
दिशा से आकर पुद्गल इकट्ठे होते हैं? हे गौतम ! निर्व्याघा
(प्रतिबन्ध-रुकावट न हो तो) आसरी छहों दिशा के पुद्ग
आकर इकट्ठे होते हैं, व्याघात (प्रतिबन्ध-रुकावट) आस
सिय (कदाचित्) तीन दिशा के, सिय चार दिशा के, सि
पांच दिशा के पुद्गल इकट्ठे होते हैं। इसी तरह उपचय
अपचय तथा छेद (अलग होने) का भी कह देना चाहिए।

पांच स्थावर को छोड़ कर १६ दण्डक के जीव नियमा
छह दिशा के पुद्गल लेते हैं, चय, उपचय, अपचय करते हैं
छेदते हैं। समुच्चय जीव और पांच स्थावर के जीव छह बोल
(औदारिक, तैजस, कार्मण ये ३ शरीर, स्पर्श इन्द्रिय, का
योग, श्वासोच्छ्वास) आसरी सिय तीन चार पांच छह दि
के पुद्गल लेते हैं, चय, (इकट्ठा करना) उपचय, (विशेष
से इकट्ठा करना) अपचय (घटाना) करते हैं, छेदते हैं।

इस प्रकार एक आकाश प्रदेश पर पुद्गल आते जाते हैं

काकाश के असंख्यात प्रदेशों में अनन्त द्रव्य समाये हुए हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७१

श्री भगवतीजी सूत्र के २५वें शतक के दूसरे उद्देशे में 'ठिया ठिया' (स्थित अस्थित) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन् ! जीव औदारिक शरीर पणे पुद्गलों । ग्रहण करता है तो क्या स्थित (ठिया) *पुद्गलों को ग्रहण रता है ? या अस्थित (अठिया) पुद्गलों को ग्रहण करता है? गौतम ! स्थित द्रव्यों को भी ग्रहण करता है और अस्थित व्यों को भी ग्रहण करता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत्* २८८ बोल निर्व्याघात आसरी नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता , व्याघात आसरी सिय ३ दिशा का सिय ४ दिशा का, सिय दिशा का ग्रहण करता है।

२—अहो भगवन् ! जीव वैक्रिय शरीरपणे पुद्गलों को ग्रहण रता है तो क्या स्थित पुद्गलों को ग्रहण करता है या अस्थित द्गलों को ग्रहण करता है ? हे गौतम ! स्थित भी ग्रहण करता । और अस्थित भी ग्रहण करता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत्*

*जितने आकाश प्रदेशों में जीव रहा हुआ है उतने आकाश प्रदेशों में रहे हुए पुद्गलों को 'स्थित' कहते हैं और उसके बाहर के क्षेत्र में रहे हुए पुद्गलों को 'अस्थित' कहते हैं। उन पुद्गलों को वहां से खींच कर जीव ग्रहण करता है।

दूसरे आचार्य ऐसा कहते हैं कि—जो द्रव्य गति रहित हैं वे स्थित हैं और जो द्रव्य गति सहित हैं वे अस्थित हैं। (टीका में)

*२८८ बोलों का वर्णन पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के तीसरे भाग में पृष्ठ ६६-६७ पर दिया हुआ है।

२८८ बोल नियमा *६ दिशा का ग्रहण करता है। जिस तरह वैक्रिय शरीर का कहा उसी तरह आहारक शरीर के लिये भी कह देना चाहिये।

३—अहो भगवन् ! जीव तैजस शरीरपणे पुद्गल ग्रहण करता है तो क्या स्थित को ग्रहण करता है या अस्थित को ग्रहण करता है ? हे गौतम ! स्थित को ग्रहण करता है किन्तु अस्थित को ग्रहण नहीं करता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् २८८ बोल निर्व्याघात आसरी नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता है, व्याघात आसरी सिय ३ दिशा का, सिय ४ दिशा का, सिय ५ दिशा का ग्रहण करता है।

४—अहो भगवन् ! जीव कार्मण शरीरपणे पुद्गल ग्रहण करता है तो क्या स्थित को ग्रहण करता है या अस्थित को ग्रहण करता है ? हे गौतम ! स्थित को ग्रहण करता है किन्तु अस्थित को ग्रहण नहीं करता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत्

---

*'वैक्रिय शरीर योग्य द्रव्यों को ६ दिशा से ग्रहण करता है' यह जो कहा गया है, इसका अभिप्राय यह है कि उपयोग पूर्वक वैक्रिय शरीर करने वाले पञ्चेन्द्रिय जीव ही होते हैं। वे त्रस नाडी के मध्यभाग में होते हैं, इसलिये ६ दिशा के पुद्गल ग्रहण करते हैं। यद्यपि वायुकाय के जीवों के वैक्रिय शरीर होते हैं उनकी अपेक्षा लोकान्त निष्कुट के विषय में ३ दिशा का पुद्गल ग्रहण करते हैं तथापि वे उपयोग पूर्वक वैक्रिय शरीर नहीं करते हैं तथा उनका वैक्रिय शरीर प्रयोजन सहित नहीं है। इसलिए उनकी यहां विवक्षा नहीं की गई है। इसलिये ६ दिशा का कहा गया है।

२४० बोल* निर्व्याघात आसरी नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता है, व्याघात आसरी सिय तीन दिशा का, सिय चार दिशा का, सिय पांच दिशा का ग्रहण करता है।

५–अहो भगवन्! जीव श्रोत्रेन्द्रियपणे चक्षुइन्द्रियपणे घ्राणेन्द्रियपणे रसनेन्द्रियपणे पुद्गल ग्रहण करता है तो क्या स्थित को ग्रहण करता है या अस्थित को ग्रहण करता है? हे गौतम! स्थित को भी ग्रहण करता है और अस्थित को भी ग्रहण करता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् २८८ बोल नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता है।

६–अहो भगवन्! जीव स्पर्शेन्द्रियपणे, काययोगपणे, श्वास उच्छ्वासपणे पुद्गलों को ग्रहण करता है तो क्या स्थित को ग्रहण करता है या अस्थित को ग्रहण करता है? हे गौतम! स्थित भी ग्रहण करता है अस्थित भी ग्रहण करता है यावत् औदारिक शरीर की तरह कह देना चाहिए।

७–अहो भगवन्! जीव मन योगपणे वचन योगपणे पुद्गल ग्रहण करता है तो क्या स्थित ग्रहण करता है या अस्थित ग्रहण करता है? हे गौतम! स्थित को ग्रहण करता है अस्थित को नहीं। द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव यावत् २४० बोल नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता है।

नारकी और देवता के १४ दण्डक में १२ बोल पाये जाते

*२४० बोलों का वर्णन पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के दूसरे भाग पृष्ठ ३२ पर भाषा पद में दिया हुआ है।

हैं औदारिक व आहारक शरीर नहीं पाये जाते, समुच्चय की तरह छः दिशा का कह देना चाहिए किन्तु व्याघात निर्व्याघात भेद नहीं कहना चाहिए। चार स्थावर में छह बोल पाये जाते हैं। वायुकाय में ७ बोल पाये जाते हैं समुच्चय की तरह कहना चाहिए। बेइन्द्रिय में ८, तेइन्द्रिय में ९, चौइन्द्रिय में १०, तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय में १३ और मनुष्य में १४ बोल पाये जाते हैं, समुच्चय जीव की तरह कह देना चाहिए किन्तु नियमा ६ दिशा का कहना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७२

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में छह संस्थान का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१–अहो भगवन् ! संस्थान (पुद्गल स्कन्ध का आकार) कितने प्रकार का है ? हे गौतम ! संस्थान छह प्रकार का है–

१–परिमण्डल (गोल–चूड़ी के आकार)।

२–वट्ट–वृत्त (गोल–लड्डू के आकार)।

३–तंस–त्र्यस्र (त्रिकोण–सिंघाड़े के आकार)।

४–चउरंस—चतुरस्र (चतुष्कोण–चौकी के आकार)

५–आयत (लम्बा–लकड़ी के आकार)।

६–अनित्थंस्थ–(उपरोक्त पांच संस्थानों से भिन्न)।

२–अहो भगवन् ! द्रव्य की अपेक्षा से परिमण्डल संस्थान क्या संख्यात हैं या असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? हे गौतम संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं किन्तु अनन्त हैं। जिस तरह

रिमण्डल संस्थान का कहा उसी तरह वाकी पांच संस्थान का कह
ना चाहिये। जिस तरह द्रव्य की अपेक्षा से कहा उसी तरह
देश की अपेक्षा से और द्रव्य प्रदेश भेला की अपेक्षा से कह
ना चाहिए।

द्रव्य की अपेक्षा से इनकी अल्पबहुत्व—

१—*सबसे थोड़ा परिमण्डल संस्थान द्रव्य की अपेक्षा।
२—उससे वट्ट (वृत्त) संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
३—उससे चउरंस (चतुरस्र) संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यात गुणा है।
४—उससे तंस (त्र्यस्र) संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
५—उससे आयत संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
६—उससे अनित्थंस्थ संस्थान द्रव्य की अपेक्षा असंख्यातगुणा है।

जिस तरह द्रव्य की अपेक्षा से अल्पबहुत्व कही उसी तरह प्रदेश की अपेक्षा से भी कह देनी चाहिए।

---

*यहां संस्थानों की जघन्य अवगाहना का विचार किया गया है। जो संस्थान जिस संस्थान की अपेक्षा बहुप्रदेशावगाही है वह स्वाभाविक रीति से थोड़ा है। परिमण्डल संस्थान जघन्य से बीस प्रदेशों की अवगाहना वाला होता है। वट्ट (वृत्त) संस्थान जघन्य से पांच प्रदेशावगाही है। चउरंस (चतुरस्र) संस्थान चार प्रदेशावगाही, तंस (त्र्यस्र) संस्थान तीन प्रदेशावगाही, और आयत संस्थान जघन्य से दो प्रदेशावगाही है। इसलिए परिमण्डल संस्थान बहु प्रदेशावगाही होने से सबसे थोड़ा है। उससे वट्टादि (वृत्त आदि) संस्थान अल्प अल्प प्रदेशावगाही होने से एक दूसरे से संख्यातगुणा अधिक अधिक हैं।

हैं औदारिक व आहारक शरीर नहीं पाये जाते, समुच्चय की तरह छः दिशा का कह देना चाहिए किन्तु व्याघात निर्व्याघात भेद नहीं कहना चाहिए। चार स्थावर में छह बोल पाये जाते हैं। वायुकाय में ७ बोल पाये जाते हैं समुच्चय की तरह कहना चाहिए। बेइन्द्रिय में ८, तेइन्द्रिय में ६, चौइन्द्रिय में १०, तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय में १३ और मनुष्य में १४ बोल पाये जाते हैं, समुच्चय जीव की तरह कह देना चाहिए किन्तु नियमा ६ दिशा का कहना चाहिए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १७२

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में छह संस्थान का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन्! संस्थान (पुद्गल स्कन्ध का आकार) कितने प्रकार का है? हे गौतम! संस्थान छह प्रकार का है—

१—परिमण्डल (गोल—चूड़ी के आकार)।

२—वट्ट—वृत्त (गोल—लड्डू के आकार)।

३—तंस—त्र्यस्र (त्रिकोण—सिंघाड़े के आकार)।

४—चउरंस—चतुरस्र (चतुष्कोण—चौकी के आकार)।

५—आयत (लम्बा—लकड़ी के आकार)।

६—अनित्थंस्थ—(उपरोक्त पांच संस्थानों से भिन्न)।

२—अहो भगवन्! द्रव्य की अपेक्षा से परिमण्डल संस्थान क्या संख्यात हैं या असंख्यात हैं या अनन्त हैं? हे गौतम! संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं किंतु अनन्त हैं। जिस तरह

रिमण्डल संस्थान का कहा उसी तरह बाकी पांच संस्थान का कह
ना चाहिये। जिस तरह द्रव्य की अपेक्षा से कहा उसी तरह
देश की अपेक्षा से और द्रव्य प्रदेश भेला की अपेक्षा से कह
ना चाहिए।

द्रव्य की अपेक्षा से इनकी अल्पबहुत्व—

१-*सबसे थोड़ा परिमण्डल संस्थान द्रव्य की अपेक्षा।
२-उससे वट्ट (वृत्त) संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
३-उससे चउरंस (चतुरस्र) संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यात गुणा है।
४-उससे तंस (त्र्यस्र) संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
५-उससे आयत संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
६-उससे अनित्थंस्थ संस्थान द्रव्य की अपेक्षा असंख्यातगुणा है।

जिस तरह द्रव्य की अपेक्षा से अल्पबहुत्व कही उसी तरह
प्रदेश की अपेक्षा से भी कह देनी चाहिए।

---

*यहां संस्थानों की जघन्य अवगाहना का विचार किया गया है। जो संस्थान जिस संस्थान की अपेक्षा बहुप्रदेशावगाही है वह स्वाभाविक रीति से थोड़ा है। परिमण्डल संस्थान जघन्य से बीस प्रदेशों की अवगाहना वाला होता है। वट्ट (वृत्त) संस्थान जघन्य से पांच प्रदेशावगाही है। चउरंस (चतुरस्र) संस्थान चार प्रदेशावगाही, तंस (त्र्यस्र) संस्थान तीन प्रदेशावगाही, और आयत संस्थान जघन्य से दो प्रदेशावगाही है। इसलिए परिमण्डल संस्थान बहु प्रदेशावगाही होने से सबसे थोड़ा है। उससे वट्टादि (वृत्त आदि) संस्थान अल्प अल्प प्रदेशावगाही होने से एक दूसरे से संख्यातगुणा अधिक अधिक हैं।

द्रव्य प्रदेश दोनों की मेली अल्पबहुत्व.. १—सबसे थोड़ा परिमण्डल संस्थान द्रव्य की अपेक्षा । २—उससे वृत्त संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यात गुणा । ३—उससे चउरंस संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा । ४—उससे त्र्यस्र संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा । ५—उससे आयत संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यात गुणा । ६—उससे अनित्थंस्थ संस्थान द्रव्य की अपेक्षा असंख्यात गुणा। ७—उससे परिमण्डल संस्थान प्रदेश की अपेक्षा असंख्यातगुणा । ८—उससे वृत्त संस्थान प्रदेश की अपेक्षा संख्यात गुणा । ९—उससे चउरंस संस्थान प्रदेश की अपेक्षा संख्यात गुणा । १०—उससे तंस (त्र्यस्र) संस्थान प्रदेश की अपेक्षा संख्यात गुणा । ११—उससे आयत संस्थान प्रदेश की अपेक्षा संख्यात गुणा । १२—उससे अनित्थंस्थ संस्थान प्रदेश की अपेक्षा असंख्यात गुणा है ।

इनके कुल ४२ अलावे (६+६+६+६+६+६+६=४२) हैं ।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! !

थोकड़ा नं० १७२

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में पांच संस्थान का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन् ! संस्थान कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! संस्थान पांच प्रकार के हैं—परिमण्डल, वृत्त (वट्ट) त्र्यस्र (तंस), चतुरस्र (चउरंस) आयत* ।

*पहले संस्थानों की सामान्य प्ररूपणा की गई है । अब रत्नप्रभा आदि

तिकाय के जीव मर कर चार स्थावर में जाते हैं। इन २४ स्थानों में दो भव और असंख्याता भवों के ४–४ गम्मा (१–२–४–५) होते हैं, इस प्रकार ९६ गम्मा (२४×४=९६) होते हैं।

(४) दो भव और अनन्ता भव के ४ गम्मा होते हैं—वनस्पतिकाय मर कर वनस्पतिकाय में उत्पन्न होती है, जिसके ४ गम्मा (१-२-४-५) होते हैं।

(५) दो भव और संख्याता भवों के १५६ गम्मा होते हैं—तीन विकलेन्द्रिय मर कर बेइन्द्रिय में उपजते हैं। बेइन्द्रिय मर कर पांच स्थावरमें उपजते हैं। पांच स्थावर मर कर बेइन्द्रियमें उपजते हैं। इन तेरह स्थानों के ४-४ गम्मा (१-२-४-५) करने से बेइन्द्रिय के ५२ गम्मा होते हैं। इसीप्रकार तेइन्द्रिय के ५२ गम्मा और चौइन्द्रियके ५२ गम्मा होते हैं। ये सब मिला कर १५६ गम्मा (५२×३=१५६) होते हैं।

(६) तीन भव और सात भव जाने आसरी तथा दो भव और छह भव आने आसरीके १०२ गम्मा होते हैं—मनुष्य मर कर पांच स्थानमें (४ देवलोक, १ नवग्रैवेयक) जाता है उसके ९–९ गम्मा करनेसे ४५ गम्मा होते हैं। तिर्यञ्च मर कर सातवीं नरक में जाता है उसके ६ गम्मा*होते हैं–४५+६=५१। ये ५१ गम्मा जाने आसरी और ५१

* नोट—७ वीं नरकमें जाने आसरी ६ गम्मा (१-२-४-५-७-८) ७ वीं नरकसे आने आसरी ६ गम्मा (१-२-३-४-५-६)।

२-अहो भगवान्! परिमण्डल संस्थान क्या संख्यात हैं, ? या असंख्यात हैं ? या अनन्त हैं ? हे गौतम! संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, अनन्त हैं। इसी प्रकार वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत सभी संस्थान अनन्त अनन्त हैं।

३-अहो भगवान्! रत्नप्रभा नारकी में परिमण्डल संस्थान क्या संख्यात हैं, या असंख्यात हैं, या अनन्त हैं ? हे गौतम! संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, अनन्त हैं। इसी तरह आयत संस्थान तक कह देना चाहिये। इसी तरह ७ नारकी, १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान, १ सिद्ध-शिला, १ समुच्चय इन ३५ बोलों में पांच संस्थानों का कह देना चाहिए। इसके कुल भांगे १७५ हुए (३५ × ५ = १७५)।

४-अहो भगवान्! जहाँ एक* जवमध्य परिमण्डल

में संस्थानों की प्ररूपणा करने की इच्छा से फिर संस्थान के विषय में प्रश्न किया गया है। यहाँ दूसरे संस्थान संयोग जन्य होने से अनित्थंस्थ संस्थान की विवक्षा नहीं की गई है। इसलिये यहाँ पांच ही संस्थान कहे गये हैं।

* परिमण्डल संस्थान वाले पुद्गल स्कन्धों से यह सारा लोक ठसाठस भरा हुआ है। उनमें से तुल्य प्रदेशवाले, तुल्य प्रदेशावगाही (तुल्य आकाश प्रदेशों में रहने वाले) और तुल्य वर्णादि पर्याय वाले जो जो परिमण्डल द्रव्य हैं, उन सबको कल्पना से एक पंक्ति में स्थापित किया जाय और उसके ऊपर और नीचे एक एक जाति वाले परिमण्डल द्रव्यों को एक एक पंक्ति में स्थापित किया जाय। इससे उनमें अल्प बहुत्व होने से परिमण्डल संस्थान का समुदाय जवमध्य के आकार वाला होता है। उसमें जघन्य प्रदेशिक द्रव्य स्वभाव से ही अल्प

संस्थान होता है वहाँ दूसरे परिमण्डल संस्थान कितने हो
हैं ? हे गौतम ! अनन्त होते हैं। इसी तरह वृत्त, त्र्यस्र
चतुरस्र और आयत संस्थान भी अनन्त अनन्त होते हैं।

जिस तरह एक जवमध्य परिमण्डल संस्थान का कहा
उसी तरह बाकी चार संस्थानों का कह देना चाहिए। ५×
५=२५ हुए। २५ को ३५ से गुणा करने से ८७५ भांगे हुए
इनमें १७५ भांगे मिला देने से कुल १०५० भांगे हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७४

श्री भगवती सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में संस्था
के २० बोलों का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! परिमण्डल संस्थान के कितने भे
हैं ? हे गौतम ! परिमण्डल संस्थान के दो भेद हैं—घन परि
मण्डल और प्रतर परिमण्डल। घन परिमंडल जघन्य ४

होने से पहली पंक्ति छोटी होती है। उससे आगेकी पंक्तियाँ अधि
और अधिकतर प्रदेश वाली होने से उससे मोटी और अधिक मोट
होती जाती हैं। उसके बाद क्रमशः घटते हुए अन्तमें उत्कृष्ट प्रदेश वा
द्रव्य अत्यन्त अल्प होने से अन्तिम पंक्ति अत्यन्त छोटी होती है। इस
प्रकार तुल्य प्रदेश वाले और दूसरे परिमण्डल द्रव्यों से जवमध्य (
के मध्य आकार वाला) क्षेत्र बनता है।

जहाँ एक जवमध्य परिमण्डल संस्थान होता है वहाँ दू
परिमण्डल संस्थान कितने होते हैं ? यह प्रश्न किया गया है। जिस
उत्तर दिया गया है कि दूसरे परिमण्डल संस्थान अनन्त होते हैं
स तरह वृत्त आदि संस्थानों के लिए भी जान लेना चाहिए।

प्रदेशी स्कन्ध होता है और ४० आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। प्रतर परिमण्डल जघन्य २० प्रदेशी होता है और २० आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

२–अहो भगवान्! वृत्त (वट्ट) संस्थान के कितने भेद हैं? हे गौतम! दो भेद हैं– ÷घनवृत्त और प्रतर वृत्त। प्रतर वृत्त के दो भेद-*ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य ५ प्रदेशी होता है और ५ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनंत प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशोंको अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य १२ प्रदेशी होता है और १२ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

घनवृत्तके दो भेद–ओजप्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओजप्रदेशी जघन्य७ प्रदेशी होता है और ७ आकाशप्रदेशोंको अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य ३२ प्रदेशी होता है

÷जो गेंद की तरह सब तरफ समप्रमाण हो वह घनवृत्त है और मांडे की तरह सिर्फ मोटेपन (जाड़ापने) में कम हो वह प्रतर वृत्त है।

* एकी संख्या वाले को ओज प्रदेशी कहते हैं। जैसे–१, ३, ५, ७ इत्यादि।

दो की संख्या वाले को युग्म प्रदेशी कहते हैं। जैसे–२, ४, ६, ८ इत्यादि।

और ३२ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

३—अहो भगवान्! तंस (त्र्यस्र) संस्थान के कितने भेद हैं? हे गौतम! दो भेद हैं—घन और प्रतर। घन के दो भेद—ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य ३५ प्रदेशी होता है और ३५ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य ४ प्रदेशी होता है और ४ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

प्रतर तंस के दो भेद—ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य ३ प्रदेशी होता है और ३ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी तंस जघन्य ६ प्रदेशी होता है और जघन्य ६ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्तप्रदेशी होता है और असंख्य आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

४—अहो भगवान्! चतुरस्र (चौरस) संस्थान के कित[illegible] भेद हैं? हे गौतम! दो भेद हैं—घन और प्रतर। घन के द[illegible] भेद—ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य २[illegible] प्रदेशी होता है और २७ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है

उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाशप्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य ८ प्रदेशी होता है और ८ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्तप्रदेशी होता है और असंख्यात आकाशप्रदेशों को अवगाहता है।

प्रतर चोरस के दो भेद–ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओजप्रदेशी जघन्य ६ प्रदेशी होता है और ६ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी प्रतर चोरस जघन्य ४ प्रदेशी होता है और ४ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

५–अहो भगवान्! आयत संस्थान के कितने भेद हैं? हे गौतम! तीन प्रकार का है–१ श्रेणि आयत, २ प्रतर आयत, ३ घन आयत। श्रेणि आयत के दो भेद–ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य ३ प्रदेशी होता है और ३ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य २ प्रदेशी होता है और २ आकाश देशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

प्रतर आयत के दो भेद–ओजप्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओजप्रदेशी जघन्य १५ प्रदेशी होता है और १५ आकाश

प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है औ असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदे जघन्य ६ प्रदेशी होता है और ६ आकाश प्रदेशों को अव गाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्या आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

घन आयत के दो भेद—ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी ओज प्रदेशी जघन्य ४५ प्रदेशी होता है और ४५ आका प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है औ असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेश जघन्य १२ प्रदेशी होता है और १२ आकाश प्रदेशों को अव गाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्या आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

नोट—संस्थान के जघन्य भेदों के आकार पुस्तक के अन में परिशिष्ट में दिये गये हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७५

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे मे संस्थान के कडजुम्मा (कृतयुग्म) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! एक परिमण्डल संस्थान द्रव्य की अपेक्षा क्या* कडजुम्मा (कृतयुग्म) है, तेओगा (त्र्योज)

* परिमण्डल संस्थान द्रव्य रूप से एक है। एक वस्तु का चार चार अपहार (भाग) नहीं होता है। इसलिये एक ही बाकी रहता है,

परिशिष्ट

संस्थान के जघन्य भेदों के आकार नीचे लिखे अनुसार हैं।

घन परिमंडल संस्थान
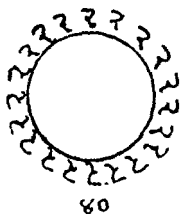
प्रतर परिमंडल संस्थान
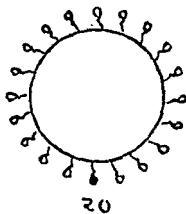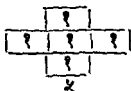
ओज प्रदेशी प्रतर वृत्त संस्थान

युग्म प्रदेशी प्रतर वृत्त संस्थान

	१	१	
१	१	१	१
१	१	१	१
	१	१	

१२

ओज प्रदेशी घन वृत्त संस्थान

	१	
१	३	१
	१	

७

युग्म प्रदेशी घन वृत्त संस्थान

	२	२	
२	४	४	२
२	४	४	२
	२	२	

३२

घन त्र्यंस संस्थान ओज प्रदेशी

५ ४ ३ २ १
४ ३ २ १
३ २ १
२ १
१

३५
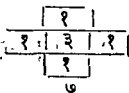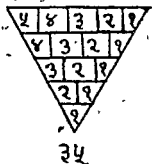
घन त्र्यंस संस्थान युग्म प्रदेशी

प्रतर त्र्यंस संस्थान ओज प्रदेशी

प्रतर त्र्यंस संस्थान युग्म प्रदेशी

घन चतुरस्र संस्थान ओज प्रदेशी

३	३	३
३	३	३
३	३	३

२७

घन चतुरस्र संस्थान युग्म प्रदेशी

२	२
२	२

८

तर चतुरस्र संस्थान ओज प्रदेशी

१	१	१
१	१	१
१	१	१

९

प्रतर चतुरस्र संस्थान युग्म प्रदेशी

१	१
१	१

४

श्रेणी आयत संस्थान ओज प्रदेशी

∽	∽	∽

३

श्रेणी आयत संस्थान युग्म प्रदेशी

∽	∽

२

प्रतर आयत संस्थान ओज प्रदेशी

१	१	१	१	१
१	१	१	१	१
१	१	१	१	१

१५

प्रतर आयत संस्थान युग्म प्रदेशी

१	१	१
१	१	१

६

घन आयत संस्थान ओज प्रदेशी

३	३	३	३	३
३	३	३	३	३
३	३	३	३	३

४५

घन आयत संस्थान युग्म प्रदेशी

२	२	२
२	२	२

१२

★

साय-जो जीव नारकी में जाता है उसके अध्यवसाय अशुभ होते हैं और जो जीव देवता में जाता है उसके अध्यवसाय शुभ होते हैं। (८) आयुष्यके अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा तीन होते हैं—उनमें दो बोलों का फर्क पड़ता है (नाणता है) करोड़ पूर्वका आयुष्य होता है और आयुष्यके अनुसार अनुबंध होता है। २७×१०=२७०। छठे सातवें आठवें देवलोक में लेश्या का फर्क नहीं है, इसलिए तीन बोल बाकी निकालने पर शेष २६७ रहे।

संज्ञी मनुष्य मरकर १५ स्थानोंमें (पहली नारकी, १० भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक) जाता है, उसमें ८-८ बोलों का नाणता (फर्क) पड़ता है— जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ५ बोलों का फर्क पड़ता है— (१) प्रत्येक अंगुल की अवगाहना, (२) तीन ज्ञान, तीन अज्ञान की भजना, (३) समुद्घात पांच, (४) प्रत्येक मास का आयुष्य। (५) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें ३ बोलों का फर्क (नाणता) पड़ता है—(१) पांच सौ धनुष की अवगाहना, (२) करोड़ पूर्व का आयुष्य, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध। १५×८= १२०।

संज्ञी मनुष्य मर कर १६ स्थानों में (दूसरी से सातवीं तक ६ नारकी, तीसरे से बारहवें तक १० देवलोक, नवग्रैवेयक, चार अनुत्तर विमान, सर्वार्थसिद्ध) जाता है, उनमें ६-६

है, दावरजुम्मा (द्वापर युग्म) है या कलिओग (कल्योज हैं ? हे गौतम ! वह कडजुम्मा, तेओगा, दावरजुम्मा नहीं होत है किन्तु कलिओग (कल्योज) होता है। इसीप्रकार वृत्त आदि चारों संस्थानों का जान लेना चाहिए।

२—अहो भगवान् ! बहुत परिमण्डल संस्थान द्रव्य रूप से क्या कडजुम्मा हैं, तेओगा हैं, दावरजुम्मा हैं या कलिओगा हैं ? हे गौतम ! ओघादेश से (सब समुदाय रूप में) सिय (कदाचित्) कडजुम्मा है सिय तेओगा है, सिय दावर जुम्मा है और सिय कलिओगा है। विहाणादेस (विधानादेश—एक) से कडजुम्मा नहीं, तेओगा नहीं, दावरजुम्मा नहीं किन्तु कलिओगा है। इसी तरह वृत्त आदि चारों संस्थान कह देने चाहिए।

अतः वह कल्योजरूप है। इसी तरह वृत्त आदि संस्थानों के लिए भी जान लेना चाहिए।

जब बहुवचन आश्री परिमण्डल संस्थान का विचार किया जाय तब उनमें चार चार का अपहार करते हुए (चार चार का भाग देते हुए) किसी समय कुछ भी बाकी नहीं बचता तब वह कदाचित् कृतयुग्म होता है। कभी तीन बाकी बचते हैं तब वह कदाचित् तेओगा (त्र्योज) होता है। कभी दो बाकी बचते हैं तब वह कदाचित् दावरजुम्मा (द्वापर-युग्म) होता है और कभी एक ही बाकी बचता है तब वह कदाचित् कल्योज रूप होता है। जब विशेष दृष्टि से एक एक संस्थान का विचार किया जाता है तब चार का अपहार न होने से एक ही बाकी रहता है, इसलिए कल्योजरूप होता है।

३—अहो भगवान्! एक परिमण्डल संस्थान प्रदेश की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है, यावत् कलिओगा है? हे गौतम! सिय कडजुम्मा सिय तेओगा सिय दावरजुम्मा सिय कलिओगा है। इसीतरह एक वचन की अपेक्षा बाकी वृत्त आदि चारों संस्थानों का कह देना चाहिए। बहुवचन की अपेक्षा दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणादेस। ओघादेश से सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा, सिय कलिओगा है। विहाणादेस से कडजुम्मा भी होते हैं, तेओगा भी होते हैं, दावरजुम्मा भी होते हैं और कलिओगा भी होते हैं। इसी तरह वृत्त आदि चारों संस्थान कह देना चाहिये।

४—अहो भगवान्! एक परिमण्डल संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलिओगा प्रदेश अवगाहे हैं? हे गौतम! कडजुम्मा प्रदेशों को अवगाहे हैं किन्तु तेओगा, दावरजुम्मा और कलिओगा प्रदेशों को नहीं अवगाहे हैं।

५—अहो भगवान्! एक वृत्त संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलिओगा प्रदेश अवगाहे हैं? हे गौतम! सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय कलिओगा प्रदेशों को अवगाहे हैं किन्तु दावरजुम्मा प्रदेशों को नहीं अवगाहे हैं।

६—अहो भगवान्! एक त्र्यस् संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलिओगा प्रदेश अव-

गाहे हैं ? हे गौतम ! सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा प्रदेशों को अवगाहे हैं किन्तु कलिओगा प्रदेशों को नहीं अवगाहे हैं ।

७—अहो भगवान् ! एक चौरस संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! जैसे वृत्त संस्थान का कहा उसी प्रकार चौरस संस्थान का भी कह देना चाहिए ।

८—अहो भगवान् ! एक आयत संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं ।

९—अहो भगवान् ! बहुत परिमण्डल संस्थानों ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा यावत् कलियोगा आकाश प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! इसके दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणादेश । ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा आकाशप्रदेश अवगाहे हैं, बाकी तीन नहीं अवगाहे हैं । विहाणादेश की अपेक्षा बहुत कडजुम्मा आकाश प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं ।

इसी प्रकार वृत्त संस्थान के भी दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणादेश । ओघादेश से कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं । विहाणादेशकी अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश भी, तेओगा प्रदेश भी, कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं,

दावरजुम्मा प्रदेश नहीं अवगाहे हैं।

तंस संस्थान के भी दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणा देश ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष ती नहीं अवगाहे हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश भी तेओगा प्रदेश भी दावरजुम्मा प्रदेश भी अवगाहे हैं किन्तु कलियोगा नहीं अवगाहे हैं। इसी प्रकार चौरस संस्था का भी कह देना चाहिये। आयत संस्थान के दो भेद हैं— ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्म प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। विहाणादेश क अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश भी, तेओगा प्रदेश भी, दावरजुम्म प्रदेश भी और कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं।

१०—अहो भगवान्! एक वचन की अपेक्षा परिमण्डल संस्थान क्या कडजुम्मा समय की स्थिति वाला है? तेओग समय की स्थिति वाला है? दावरजुम्मा समय की स्थिति वाला है? कलियोगा समय की स्थिति वाला है? हे गौतम सिय कडजुम्मा समय की स्थिति वाला है यावत् [illegible] कलि योगा समय की स्थिति वाल[illegible] [illegible] तरह वृत्त[illegible]

ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा समय की स्थिति के हैं यावत् सिय कलियोगा समय की स्थिति के हैं। विहाणादेश की अपेक्षा भी कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं। इसी तरह वृत्त आदि चारों संस्थानों का भी कह देना चाहिए।

१२—अहो भगवान्! एक वचन से परिमण्डल संस्थान काला वर्ण की पर्यायों की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा है। जिस तरह स्थिति का कहा उसी प्रकार कह देना चाहिए। इसी प्रकार वीस वर्णादिक (५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ८ स्पर्श=२०) का कह देना चाहिए। बहुवचन से परिमण्डल संस्थान के काला वर्ण की अपेक्षा दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा है।—विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी है यावत् कलियोगा भी है। इसी तरह वर्णादि २० बोलों का कह देना चाहिए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १७६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में आकाश प्रदेशों की श्रेणी का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! आकाश प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या संख्यात असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम!

संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं किन्तु अनन्त हैं। इसी तरह पू
पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊंची नीची छहों दिशाओं का क
देना चाहिए।

२–अहो भगवान्! लोकाकाश की श्रेणियां द्रव्य क
अपेक्षा क्या संख्यात, असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम
असंख्यात हैं। इसी तरह छहों दिशा की लोकाकाश श्रेणी क
देना चाहिए।

३–अहो भगवान्! अलोकाकाश की श्रेणियां द्रव्य क
अपेक्षा क्या संख्यात, असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम
अनन्त हैं। संख्यात असंख्यात नहीं हैं। इसी तरह छहों दिश
का कह देना चाहिए।

४–अहो भगवान्! आकाश प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश क
अपेक्षा क्या संख्यात, असंख्यात, या अनन्त हैं? हे गौतम
अनन्त हैं। इसी तरह छहों दिशा का कह देना चाहिए।

५–अहो भगवान्! लोकाकाश की श्रेणियां प्रदेश क
अपेक्षा क्या संख्यात असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम!* सि
संख्यात, सिय असंख्यात हैं किन्तु अनन्त नहीं हैं। इस

---

* लोकाकाश की श्रेणियाँ प्रदेश की अपेक्षा पूर्व पश्चिम उत्त
दक्षिण संख्यात किस तरह होती हैं? इस विषय में चूर्णिकार औ
प्राचीन टीकाकार इस प्रकार समाधान करते हैं—चूर्णिकार कहते
कि–लोक के वृत्ताकार (गोल) दन्तक जो अलोक में गये हैं उन
श्रेणियाँ संख्यात प्रदेशरूप हैं और बाकी श्रेणियाँ असंख्यात प्रदे
रूप हैं। प्राचीन टीकाकार कहते हैं कि—लोकाकाश वृत्ताकार (गोल

तरह पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण चारों दिशाओं का कह देना चाहिए। ऊंची दिशा और नीची दिशा की श्रेणियाँ संख्यात× नहीं हैं, असंख्यात हैं और अनन्त नहीं हैं।

६–अहो भगवान्! अलोकाकाश की श्रेणियाँ प्रदेश की अपेक्षा क्या संख्यात, असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम! सिय संख्यात, सिय असंख्यात, सिय अनन्त हैं। इसी तरह ऊंची दिशा और नीची दिशा का भी कह देना चाहिए। पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण दिशा में श्रेणियाँ संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं किन्तु अनन्त हैं।

७–अहो भगवान्! क्या श्रेणियाँ सादि सान्त हैं? या सादि अनन्त हैं? या अनादि सान्त हैं? या अनादि अनन्त हैं? हे गौतम! श्रेणियाँ अनादि अनन्त हैं। इसी तरह छहों दिशा की कह देना चाहिए। लोक की श्रेणियों में एक भांगा पाया जाता है—सादि सान्त। इसी तरह छहों दिशा का कह देना चाहिए। अलोकाकाश की श्रेणियों में चारों भांगे पाये

होने से पर्यन्तवर्ती (अन्त में रहने वाली) श्रेणियाँ संख्यात प्रदेश रूप हैं।

× ऊर्ध्वलोक से अधोलोक तक लोकाकाश की लम्बी श्रेणी असंख्यात प्रदेश की है किन्तु संख्यात प्रदेश की या अनन्त प्रदेश की नहीं है। इस सूत्र के कथन से यह भी ज्ञात होता है कि अधोलोक के कोने से ब्रह्म देवलोक के तिरछे प्रान्त भाग तक जो श्रेणी निकली है वह भी असंख्यात प्रदेश की ही है किन्तु संख्यात प्रदेश की या अनन्त प्रदेश की नहीं है।

जाते हैं। इसी तरह ऊंची दिशा और नीची दिशा का भी क्ष
देना चाहिए। पूर्वादि चार दिशाओं में ३ भांगे पाये जाते हैं,
पहला सादि सान्त भांगा नहीं पाया जाता है।

८—अहो भगवान्! श्रेणियाँ द्रव्य की अपेक्षा क्या कड-
जुम्मा (कृतयुग्म) हैं यावत् कलियोगा हैं? हे गौतम! कड-
जुम्मा है, शेष तीन भांगे नहीं पाये जाते हैं। इसी तरह छहों
दिशा का कह देना चाहिए। इसी तरह लोकाकाश और अलो-
काकाश की श्रेणियों का भी कह देना चाहिए।

९—अहो भगवान्! श्रेणियाँ प्रदेश की अपेक्षा क्या कड
जुम्मा हैं यावत् कलियोगा हैं? हे गौतम! कडजुम्मा हैं, शे
तीन भांगे नहीं पाये जाते। लोकाकाश की श्रेणियों में समुच्चय
में और चार दिशा में सिय कडजुम्मा, सिय दावरजुम्मा हैं
शेष दो भांगे नहीं पाये जाते। ऊँची दिशा और नीची दिश
में कडजुम्मा है, शेष तीन भांगे नहीं पाये जाते। अलोकाकाश
की श्रेणियों में समुच्चय में और चार दिशा में कडजुम्म
आदि चारों भांगे पाये जाते हैं। ऊंची दिशा और नीची दिशा
में तीन भांगे पाये जाते हैं, एक कलियोगा नहीं पाया जाता है।

१०—अहो भगवान्! * श्रेणियाँ कितनी हैं? हे गौतम!

---

* श्रेणी—जहाँ जीव और पुद्गलों की गति होती है, उन आकाश प्रदेशों की पंक्ति को श्रेणी कहते हैं।

१ ऋज्वायता-जिस श्रेणी द्वारा जीव और पुद्गल सीधी गति करते हैं उसे ऋज्वायता कहते हैं।

श्रेणियाँ सात हैं–१ उज्जु आयया (ऋज्वायता), २ एग-ओवंका (एकतो वक्रा), ३ दुहओवंका (उभयतो वक्रा), ४ एगओखहा (एकतः खा), ५ दुहओखहा (उभयतः खा), ६ चक्कवाला (चक्रवाल), ७ अद्ध चक्कवाला (अर्द्ध चक्र-वाला)।

२—एकतो वक्रा-जिस श्रेणी द्वारा सीधे जाकर फिर वक्रगति करते हैं अर्थात् दूसरी श्रेणी में प्रवेश करते हैं उसे एकतो वक्रा कहते हैं।

३—उभयतो वक्रा-पहले सीधे जाकर फिर दो बार वक्रगति करते हैं अर्थात् दो बार दूसरी श्रेणी में प्रवेश करते हैं उसे उभयतोवक्रा कहते हैं। यह श्रेणी ऊर्ध्वलोक की आग्नेयी दिशा से अधोलोक की वायवी दिशा में जो उत्पन्न होते हैं, वे करते हैं। पहले समय में आग्नेयी दिशा से तिरछे नैऋ त्य दिशा में जाते हैं। वहाँ दूसरे समय में तिरछे वायवी दिशा में जाते हैं। वहाँ से तीसरे समय में नीचे वायवी दिशा में जाते हैं। यह तीन समय की गति त्रसनाड़ी में अथवा उसके बाहर होती है।

४—एकतः खा जीव और पुद्गल जिस श्रेणी द्वारा त्रसनाड़ी के बांए पसवाड़े से त्रसनाड़ी में प्रवेश करते हैं और फिर त्रसनाड़ी द्वारा जाकर उसके बांए पसवाड़े (भाग) में उत्पन्न होते हैं उसे एकतः खा श्रेणी कहते हैं। क्योंकि उसके एक तरफ त्रसनाड़ी (लोकनाड़ी) के बाहर का आकाश आया हुआ होता है। यद्यपि यह गति दो, तीन और चार समय की वक्र गति वाली होती है तथापि क्षेत्र की विशेषता होने से इसको अलग कहा गया है।

५—उभयतः खा-त्रसनाड़ी के बाहर उसके बांए भाग से प्रवेश करके त्रसनाड़ी द्वारा जाकर फिर उसके दाहिने भाग में उत्पन्न होना उसको उभयतः खा कहते हैं क्योंकि उसको त्रसनाड़ी के बाहर का आकाश प्रदेश बांई तरफ और दाहिनी तरफ दोनों तरफ स्पर्श करता है।

१०—अहो भगवान् ! परमाणु आदि की अनुश्रेणि (श्रेणी के अनुसार) गति होती है या विश्रेणि (श्रेणी के प्रतिकूल) गति होती है ? हे गौतम ! अनुश्रेणि गति होती है, विश्रेणि गति नहीं होती। परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक अजीव सम्बन्धी १३ बोल और २४ दण्डक, इन ३७ बोलों की अनुश्रेणि गति होती है किन्तु विश्रेणि गति नहीं होती है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १७७)

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में द्रव्य का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! जुम्मा (युग्म) कितने प्रकारके हैं ? हे गौतम ! चार प्रकार के हैं– कडजुम्मा, दावरजुम्मा, तेओगा, कलियोगा ×। समुच्चय जीव, नारकी आदि २४ दण्डक और

६—चक्रवाल–परमाणु आदि जिस श्रेणी द्वारा गोल घूमकर उत्पन्न होते हैं उसे चक्रवाल कहते हैं।

७—अर्द्ध चक्रवाल परमाणु आदि जिस श्रेणी द्वारा आधे गोल घूमकर उत्पन्न होते हैं उसे अर्द्ध चक्रवाल कहते हैं।

श्रेणियों का आकार इस प्रकार बतलाया गया है:—

ऋजु—, एकतो वक्रा Λ, उभयतोवक्रा M, एकतःखा L उभयतोखा ㄣ, चक्रवाल O, अर्धचक्रवाल ⌒।

× १८ वें शतक के चौथे उद्देशे में चार जुम्मा का थोकड़ा कहा गया है उसके अनुसार यहाँ भी कह देना चाहिए। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव इन चार में जितने जितने जुम्मा पाये जायँ उतने उतने कह देने चाहिए। (देखो भगवती सूत्र के थोकड़ों का छठा भाग पृष्ठ १६)।

बोलों का फर्क पड़ता है—जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ३ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) प्रत्येक हाथ की अवगाहना, (२) प्रत्येक वर्ष का आयुष्य, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें ३ बोलों का फर्क पड़ता है—(१) पांच सौ धनुष की अवगाहना, (२) करोड़ पूर्व का आयुष्य, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध। १६×६=११४।

दो प्रकार के युगलिया (मनुष्य, तिर्यञ्च) मर कर १४ प्रकार के देवता (१० भवनपति, वाणव्यन्तर ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक) में जाते हैं। दो प्रकार के युगलिया मर कर दस भवनपति, वाणव्यंतर में जाते हैं, उनमें तिर्यञ्च युगलिया में ५ बोलों का फर्क पड़ता है—जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ३ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) अवगाहना—जघन्य प्रत्येक धनुष की, उत्कृष्ट १००० धनुप झाझेरी। (२) करोड़ पूर्व झाझेरा आयुष्य। (३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें २ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) तीन पल्य का आयुष्य, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है।

मनुष्य युगलिया में ६ बोलों का फर्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ३ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) अवगाहना ५०० धनुप झाझेरी (२) करोड़ पूर्व झाझेरा आयुष्य, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं उनमें ३ बोलों का फर्क पड़ता है—(१) अवगाहना—तीन गाऊ

सिद्ध भगवान् में चार चार जुम्मा पाये जाते हैं।

२—अहो भगवान्! द्रव्य कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! छह प्रकार के हैं—१ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय, ३—आकाशास्तिकाय, ४—जीवास्तिकाय, ५—पुद्गलास्तिकाय, ६—काल।

३—अहो भगवान्! धर्मास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! कलियोगा है। शेष तीन नहीं इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय कह देनी चाहिए।

४—अहो भगवान्! जीवास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! कडजुम्मा है। शेष तीन नहीं।

५—अहो भगवान्! पुद्गलास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! सिय (कदाचित्) कडजुम्मा है, सिय दावरजुम्मा है, सिय तेओगा है, सिय कलियोगा है।

६—अहो भगवान्! काल द्रव्य की अपेक्षा क्या कड-जुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! कडजुम्मा है। शेष तीन नहीं।

७—अहो भगवान्! धर्मास्तिकाय प्रदेश की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! कडजुम्मा है। शेष तीन नहीं। इसी तरह बाकी पांचों द्रव्य कह देने चाहिये।

८—अहो भगवान्! धर्मास्तिकाय आदि छहों द्रव्य, द्रव्य की अपेक्षा कौन किससे कम ज्यादा है? हे गौतम! द्रव्यरूपसे सबसे थोड़े धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय, आपस में तुल्य। २ उनसे जीवास्तिकाय अनन्तगुणा ३ उससे पुद्गलास्तिकाय अनन्तगुणा, ४ उससे काल अनन्त गुणा।

९—अहो भगवान्! धर्मास्तिकाय आदि छह द्रव्यों प्रदेश की अपेक्षा कौन किससे कम ज्यादा है? हे गौतम, प्रदेशरूप से सबसे थोड़े धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आपस में तुल्य। उनसे जीवास्तिकाय प्रदेशरूप से अनन्तगुणा। उससे पुद्गलास्तिकाय प्रदेश रूप से अनन्त गुणा। उससे काल अप्रदेश रूप से अनन्त गुणा। उससे आकाश प्रदेश रूपसे अनंतगुणा

द्रव्यरूप से और प्रदेश रूप से दो दो बोलों की अल्प बहुत्व (अल्पाबोध)—

१—सबसे थोड़ा धर्मास्तिकाय द्रव्य रूपसे। उससे प्रदेश असंख्यात गुणा।

२—सबसे थोड़ा अधर्मास्तिकाय द्रव्य रूपसे। उससे प्रदेश असंख्यात गुणा।

३—सब से थोड़ा आकाशास्तिकाय द्रव्य रूपसे। उससे प्रदेश अनन्त गुणा।

४—सब से थोड़े जीवास्तिकाय के द्रव्य। उनसे प्रदेश असंख्यात गुणा।

५—सब से थोड़े-पुद्गलास्तिकाय के द्रव्य। उनसे प्रदेश असंख्यात गुणा।

६—काल के प्रदेश नहीं होनेसे परस्पर अल्पाबोध नहीं बनती है।

छहों द्रव्यों के १२ बोलों की भेली अल्पाबोध—

१—सबसे थोड़े धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय के द्रव्य, आपस में तुल्य। २ उनसे धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय के प्रदेश, आपसमें तुल्य असंख्यात गुणा। ३ उनसे जीवास्तिकाय के द्रव्य अनन्त गुणा ४। उनसे जीवास्तिकायके प्रदेश असंख्यात गुणा। ५ उनसे पुद्गलास्तिकाय के द्रव्य अनन्त गुणा। ६ उनसे पुद्गलास्तिकाय के प्रदेश असंख्यात-गुणा। ७ उनसे काल के द्रव्य अप्रदेश रूप से अनन्त गुणा। ८ उनसे आकाशास्तिकाय के प्रदेश अनन्त गुणा।

१—सब से थोड़े जीव, २ उनसे पुद्गल अनन्तगुणा। ३ उनसे काल अनन्तगुणा। ४ उनसे सर्व द्रव्य विसेसाहिया (विशेषाधिक)। ५ उनसे सर्व प्रदेश अनन्तगुणा। ६ उनसे सर्व पर्याय अनन्त गुणा।

१०—अहो भगवान्! क्या धर्मास्तिकाय अवगाढ (आश्रित) है या अनवगाढ (अनाश्रित) है? हे गौतम अवगाढ है, अनवगाढ नहीं है। अहो भगवान्! वह अवगाढ है तो क्या संख्यात प्रदेश में अवगाढ है, या असंख्यात प्रदेश में अवगाढ है या अनन्तप्रदेश में अवगाढ है? हे गौतम! लोकाकाश के संख्यात या अनन्त प्रदेश में अवगाढ नहीं है किन्तु

असंख्यात प्रदेश में अवगाढ है। अहो भगवान्! असंख्यात आकाश प्रदेशों में अवगाढ है तो क्या कडजुम्मा प्रदेशों में अवगाढ है यावत् कलियोगा प्रदेशों में अवगाढ है? हे गौतम! कडजुम्मा प्रदेशों में अवगाढ है। तेओगा दावरजुम्मा कलियोगा प्रदेशों में अवगाढ़ नहीं है। जिस तरह धर्मास्तिकाय का कहा उसी तरह बाकी अधर्मास्तिकाय आदि ५ द्रव्य, ७ नारकी, १२ देवलोक, ६ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तरविमान, १ ईषत्प्राग्भारा (सिद्ध शिला) पृथ्वी का भी कह देना चाहिए।

२५ सूत्र जुम्मों के प्रश्नोत्तर के, ६ सूत्र द्रव्यके प्रकार के, ६ सूत्र द्रव्यार्थ के, ६ सूत्र प्रदेशार्थ के ६ सूत्र द्रव्यार्थकी अल्पाबोध के, ६ सूत्र प्रदेशार्थ की अल्पाबोधके, १२ सूत्र दो दो बोलों की अल्पाबोध के, १२ सूत्र द्रव्य प्रदेश की भेली अल्पाबोध के, ४० सूत्र धर्मास्तिकाय आदि के अवगाढ अनवगाढ के ये कुल ११६ (२५+६+६+६+६+६+१२+१२+४०=११६) सू॰ हुए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० १७८)

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में जीव के कडजुम्मों का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! क्या एक जीव द्रव्यार्थ रूप से (द्रव्य की अपेक्षा से) कडजुम्मा है। तेओगा है? दावरजुम्मा है?

कलियोगा है ? हे गौतम ! कलियोगा है*। कडजुम्मा तेओगा दावरजुम्मा नहीं है । इसी तरह २४ दण्डक और सिद्ध भगवान् कह देना चाहिए ।

२—अहो भगवान् ! क्या बहुत जीव द्रव्य की अपेक्षा कडजुम्मा है यावत् कलियोगा हैं ? हे गौतम ! बहु वचन आसरी दो भेद हैं—ओघादेश (सामान्य) और विहाणादेश (विधानादेश-भेद) ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा हैं, तेओगा, दावरजुम्मा कलियोगा नहीं । विहाणादेश की अपेक्षा कलियोगा हैं, कडजुम्मा तेओगा दावरजुम्मा नहीं हैं । नारकी आदि २४ दण्डक और सिद्ध भगवान् ओघादेश की अपेक्षा सिय (कदाचित्) कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा, सिय कलियोगा है । विहाणादेश की अपेक्षा कलियोगा है, कडजुम्मा तेओगा दावरजुम्मा नहीं है ।

३—अहो भगवान् ! एक जीव प्रदेश की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है ? यावत् कलियोगा है ? हे गौतम ! प्रदेश दो प्रकार के हैं—जीव प्रदेश और शरीर प्रदेश । जीव प्रदेश की अपेक्षा कडजुम्मा है शेप तीन नहीं है। शरीर प्रदेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा, सिय

* जीव द्रव्य रूप से एक ही व्यक्ति है । इसलिए मात्र कल्योज रूप ही होता है ।

बहुत जीव द्रव्य रूप से अनन्त हैं । इसलिये सामान्य रूप से वे कडजुम्मा (कृतयुग्म) ही होते हैं ।

कलियोगा है। इस तरह नारकी आदि २४ ही दण्डक कह देने चाहिए। सिद्धभगवान् एक जीव की अपेक्षा जीवप्रदेश आसरी कडजुम्मा है। शेष तीन नहीं है। सिद्धभगवान् के शरीर नहीं है, इसलिये शरीर प्रदेश भी नहीं है।

४—अहो भगवान् ! बहुत जीव प्रदेशों की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है ? हे गौतम ! प्रदेश दो प्रकार के हैं–जीव प्रदेश और शरीर प्रदेश। जीव प्रदेश के दो भेद हैं–ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा है शेप तीन नहीं है। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा है शेप तीन नहीं है। शरीर प्रदेश के भी दो भेद हैं–ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा सिय तेओगा सिय दावरजुम्मा सिय कलियोगा है। विहाणादेशकी अपेक्षा कडजुम्मा भी है, तेओगा भी है, दावरजुम्मा भी है, कलियोगा भी है। इसीतरह २४ दण्डक कह देना चाहिए। बहुत सिद्ध भगवान् में जीव प्रदेश के दो भेद हैं ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा है शेप तीन नहीं है और विहाणादेश की अपेक्षा भी कडजुम्मा है शेप तीन नहीं है। सिद्धों के शरीर नहीं है, इसलिए उनके शरीर प्रदेश भी नहीं हैं।

५—अहो भगवान् ! एक जीव ने क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! सिय कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं। इसी तरह नारकी आदि २४ ही दण्डक और सिद्ध

भगवान् का कह देना चाहिए।

६—अहो भगवान्! बहुत जीवों ने क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं? हे गौतम! ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी यावत् कलियोगा भी अवगाहे हैं। नारकी आदि १६ दण्डक (पांच स्थावर को छोड़ कर) के जीवों ने ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी यावत् कलियोगा भी प्रदेश अवगाहे हैं। पांच स्थावर और सिद्ध भगवान् ने ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं और विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी यावत् कलियोगा भी प्रदेश अवगाहे हैं।

७—अहो भगवान्! एक जीव क्या कडजुम्मा समय की स्थितिवाला है यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाला है? हे गौतम! * कडजुम्मा समय की स्थिति वाला है तेओगा दावरजुम्मा, कलियोगा समय की स्थिति वाला नहीं है। एक

* सामान्य जीव की स्थिति सर्व काल में शाश्वत होती है और सर्व काल नियत अनन्त समयात्मक होता है। इसलिए जीव कडजुम्मा समय की स्थिति वाला होता है। नारकी आदि भिन्न भिन्न समय की स्थिति वाले होते हैं। इसलिए ये किसी समय कडजुम्मा समय की स्थिति वाले होते हैं यावत् किसी समय कलियोगा समय की स्थिति वाले होते हैं।

जीव आसरी २४ ही दण्डक के जीव सिय (कदाचित्) कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं यावत् सिय कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं। सिद्ध भगवान् कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं। शेष तीन नहीं है।

८—अहो भगवान्! बहुत जीव क्या कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं? हे गौतम! * ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं, शेष तीन नहीं हैं और विहाणादेश की अपेक्षा भी कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं किन्तु तेओगा, दावरजुम्मा, कलियोगा समय की स्थिति वाले नहीं हैं।

बहुवचन आसरी २४ दण्डक के जीव ओघादेश की अपेक्षा × सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा समय की स्थिति वाले भी होते हैं। सिद्ध भगवान् कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं शेष तीन नहीं है।

---

* ओघादेश और विहाणादेश की अपेक्षा सब जीवों की स्थिति अनादि अनन्त काल की है। इसलिए वे कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं।

× यदि सभी नारकी जीवों की स्थिति के समयों को एकत्रित किया जाय फिर उसमें चार का भाग दिया जाय तो सभी नारकी जीव ओघादेश की अपेक्षा कदाचित् कडजुम्मा समय की स्थिति वाले होंगे यावत् कदाचित् कलियोगा समय की स्थिति वाले होंगे।

९—अहो भगवान् ! क्या * एक जीव के काले वर्ण के पर्याय कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है ? हे गौतम ! जीव काले वर्णके पर्याय आसरी तो कडजुम्मा भी नहीं है यावत् कलियोगा भी नहीं है। शरीर में काले वर्णकी पर्याय आसरी सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा है। जिस तरह काला वर्ण कहा उसी तरह बाकी १९ वर्णादिक कह देना चाहिए। इसी तरह २४ दण्डक कह देना चाहिए। यहाँ सिद्ध भगवान् की पृच्छा नहीं है क्योंकि उनके शरीर नहीं होता इसलिए वर्णादिक नहीं होते हैं।

अहो भगवान् ! क्या बहुत जीवों के काले वर्ण के पर्याय कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है ? हे गौतम ! जीव प्रदेश आसरी तो कडजुम्मा भी नहीं है यावत् कलियोगा भी नहीं है। शरीर प्रदेश आसरी दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणा देश। ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी है यावत् कलियोगा भी है। जिस तरह काला वर्ण कहा उसी तरह बाकी १९ वर्णादिक कह देना चाहिए। जिस तरह समुच्चय जीव कहा उसी तरह २४ दण्डक कह देना चाहिए। यहाँ सिद्ध भगवान् की पृच्छा नहीं है क्योंकि उनके शरीर नहीं होता,

---

* जीवप्रदेश अमूर्त होने से उसके काला आदि वर्ण के पर्याय नहीं होते हैं। शरीर सहित जीवकी अपेक्षा शरीर के वर्ण चारों राशि-रूप हो सकते हैं।

इसलिए वर्णादिक नहीं होते हैं।

१०—अहो भगवान् ! क्या एक जीव के मतिज्ञान पर्याय कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है ? हे गौतम ! * सि कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा होते हैं। इसी तरह एकेन्द्रिय को छोड़ कर बाकी १६ दण्डक में कह देना चाहिए

बहुवचन आसरी जीवों के मतिज्ञान के पर्याय × ओघा देश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा हैं विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी हैं यावत् कलियोगा भ

---

* आवरणके क्षयोपशम की विचित्रता से मतिज्ञान की विशेषता को तथा मतिज्ञान के अविभाज्य (जिसके विभाग नहीं किये जा सकें सूक्ष्म अंशों को मतिज्ञान के पर्याय कहा जाता है। ये अनन्त हैं कि क्षयोपशम की विचित्रता से उनका अनन्तपणा एक सरीखा नहीं है। इस लिए भिन्न समय की अपेक्षा वे कदाचित् कडजुम्मा होते हैं यावत् कलियोगा होते हैं।

÷ एकेन्द्रिय जीव में समकित नहीं होती। इसलिए उसके मतिज्ञान नहीं होता है। इसलिये यहाँ पर 'एकेन्द्रिय जीव को छोड़कर' ऐसा कहा गया है।

× यदि सब जीवों के मतिज्ञान के पर्यायों को इकट्ठा किया जाय तो ओघादेश से भिन्न भिन्न काल की अपेक्षा चारों राशि रूप होते हैं। क्योंकि क्षयोपशम की विचित्रता के कारण उनके मतिज्ञान के पर्याय अनवस्थितरूप से अनन्त हैं। विहाणादेश की अपेक्षा एक काल में भी चारों राशि रूप होते हैं।

पृथ्वीकाय मर कर पृथ्वीकायपने उपजती है, उसमें ६ बोलों का फर्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ४ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) लेश्या ३ होती हैं (२) आयुष्य अंतमुर्हूर्त का, (३) अध्यवसाय बुरे होते हैं।(४) आयुष्य के अनुसार अनुबंध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें २ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) २२००० वर्ष का आयुष्य (स्थिति) होता है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है।

अप्काय मर कर पृथ्वीकाय में उपजती है, उसमें ६ बोलों का फर्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ४ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) लेश्या ३ होती हैं, (२) आयुष्य अन्तमुर्हूर्त का, (३) अध्यवसाय अशुभ, (४) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें २ बोलों का फर्क पड़ता है—(१) ७००० वर्ष का आयुष्य, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है।

तेउकाय मर कर पृथ्वीकाय में उपजती है, उसमें ५ बोलों का फर्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ३ बोलों का फर्क पड़ता है- आयुष्य अन्तमुर्हूर्त का, (२) अध्यवसाय अशुभ, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें २ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) आयुष्य तीन अहोरात्रि का, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है।

वायुकाय मर कर पृथ्वीकाय में उपजती है, उसमें ६ बोलों का फर्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ४ बोलों का

हैं। इसी तरह एकेन्द्रिय को छोड़ कर बाकी १६ दण्डक में कह देना चाहिए। जिस तरह मतिज्ञान का कहा उसी तरह श्रुतज्ञान का भी कह देना चाहिए। इसी तरह अवधिज्ञान का भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन विकलेन्द्रिय नहीं कहना चाहिए (तीन विकलेन्द्रियों में अवधि ज्ञान नहीं होता है)। इसी तरह मनःपर्यय ज्ञान का भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि समुच्चय जीव और मनुष्य में ही कहना चाहिए, शेष दण्डक में नहीं कहना चाहिए, (मनःपर्यय ज्ञान मनुष्य को ही होता है, दूसरे जीवों को नहीं होता है)। एक जीव आसरी केवलज्ञान की * कडजुम्मा पर्याय कहना चाहिए, शेष तीन नहीं कहना चाहिए। इसी तरह मनुष्य और सिद्ध भगवान् में कह देना चाहिए। बहुत जीव आसरी ओघादेश और विहाण देश की अपेक्षा कडजुम्मा पर्याय होते हैं, शेष तीन नहीं होते हैं। इसी तरह मनुष्य और सिद्ध कह देना चाहिए।

मति अज्ञान और श्रुत अज्ञान एक जीव आसरी और बहुत जीव आसरी मतिज्ञान की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि २४ ही दण्डक में कहना चाहिए। विभंगज्ञान का भी मतिज्ञान की तरह कह देना चाहिए किन्तु १६ दण्डक (एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों को छोड़ कर) में

* केवलज्ञान के पर्यायों का अनन्तपणा अवस्थित है इसलिए वे कडजुम्मा राशि रूप ही होते हैं।

ही कहना चाहिए। चक्षुदर्शन १७ दण्डक में, अचक्षुदर्शन २४ दण्डक में, अवधिदर्शन १६ दण्डक में मतिज्ञान की तरह कह देना चाहिए। केवल दर्शन केवलज्ञान की—पर्याय की तरह कहना चाहिये।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७१

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में 'जीव कम्पमान अकम्पमान' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या जीव सकम्प है या निष्कम्प है ? हे गौतम ! जीव सकम्प भी है और निष्कम्प भी है। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जीव के दो भेद हैं–सिद्ध और संसारी। सिद्ध के दो भेद हैं–अनन्तर सिद्ध और परम्परा सिद्ध। परम्परा सिद्ध तो निष्कम्प है। अनन्तर सिद्ध सकम्प * हैं। वे सर्व से (सब अंशों से) कम्पते हैं, देश से (कुछ अंशों से) नहीं कम्पते हैं।

---

* सिद्धत्व प्राप्तिके प्रथम समयमें अनन्तर सिद्ध कहलाते हैं क्योंकि उसमें एक समयका भी अन्तर नहीं होता। जो सिद्धत्व के प्रथम समय में वर्तमान सिद्ध जीव हैं उनमें कम्पन है। क्योंकि सिद्धि गमन समय और सिद्धत्व प्राप्ति का समय एक ही होने से और सिद्धि गमन समय में गमन क्रिया के होने से उस समय वे सकम्प होते हैं। सिद्धत्व प्राप्ति होने के पश्चात् जिन्हें समयादिका अन्तर पड़ जाता है वे परम्परा सिद्ध कहलाते हैं और वे निष्कम्प होते हैं।

संसारीजीवके दो भेद हैं-शैलेशी प्रतिपन्न(शैलेशी अवस्थाको प्राप्त हुए, चौदहवें गुणस्थान वाले जीव) और अशैलेशी प्रतिपन्न (पहले गुणस्थान से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक के जीव)। शैलेशी प्रतिपन्न जीव तो निष्कम्प * होते हैं और अशैलेशी प्रपिपन्न सकम्प होते हैं वे देश से ÷ (कुछ अंशों से) भी कम्पते हैं और सर्व से (सब अंशोंसे) भी कम्पते हैं। ×विग्रह गति वाले जीव सर्व से कम्पते हैं, अविग्रह गति वाले जीव देश से कम्पते हैं । इस तरह २४ ही दण्डक के जीव देश से भी कम्पते हैं और सर्व से भी कम्पते हैं ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

* जो मोक्ष जाने के समय पहले शैलेशी को प्राप्त हुए हैं उनके योग का सर्वथा निरोध होने से वे निष्कम्प हैं ।

÷ ईलिका गति से उत्पत्तिस्थान को जाते हुए जीव देश से सकम्प हैं क्योंकि उनका पहले के शरीर में रहा हुआ अंश गति- क्रिया- रहित होने से निश्चल है ।

× विग्रह गति को प्राप्त यानी जो मरकर विग्रह गति द्वारा उत्पत्ति स्थान को जाते हैं वे गेंद की गति से सर्वात्म- रूप से उत्पन्न होते हैं इसलिये वे सर्वतः सकम्प हैं । जो जीव विग्रह गतिको प्राप्त नहीं है वे ऋजुगतिवाले और अवस्थित-ये दो प्रकार के हैं। उनमें से यहाँ केवल अवस्थित ग्रहण किये गये हैं ऐसा सम्भव है। वे शरीरमें रह कर मरण समुद्घात् कर ईलिका गति द्वारा उत्पत्ति क्षेत्र का स्पर्श करते हैं इसलिए वे देश से सकम्प हैं । अथवा स्व क्षेत्रमें रहे हुए जीव हस्तपादादि अवयव चलाने से देश से सकम्प है ।

थोकड़ा नं० १८०

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में 'पुद्गलों की बहुया' (बहुत्व) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! पुद्गल के कितने भेद हैं? हे गौतम! पुद्गलके चार भेद हैं—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। द्रव्यकी अपेक्षा परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक १३ भेद होते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा एक आकाश प्रदेश अवगाहे से लेकर असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहे तक १२ भेद होते हैं। काल की अपेक्षा एक समय की स्थिति से लेकर असंख्यात समय की स्थिति तक १२ भेद होते हैं। भावकी अपेक्षा एक गुण काला से लेकर अनन्त गुण काला यावत् अनन्त गुण रूक्ष तक २६० भेद होते हैं। इसप्रकार चारों को मिला कर २९७ (१३+१२+१२+२६०=२९७) भेद होते हैं।

२—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल और दो प्रदेशी स्कन्धमें द्रव्यार्थरूप से कौन किससे अल्प बहु (कम ज्यादा) हैं? हे गौतम! दो प्रदेशी स्कन्धकी अपेक्षा परमाणु पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुया + (बहुत) हैं। इसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध की अपेक्षा दो प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थरूप से बहुत हैं। इसी तरह यावत् दस प्रदेशी स्कन्ध से नौ प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ रूप से

+ यह थोकड़ा बहुयाका है इसलिये बहुत की जगह बहुया बोलना चाहिये।

बहुत है। दसप्रदेशी स्कन्ध से संख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य रूप से बहुत हैं। संख्यातप्रदेशी स्कन्ध से असंख्यातप्रदे स्कन्ध द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। अनन्त प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं। *

३—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल और दो प्रदे स्कन्ध में प्रदेशार्थरूप से कौन किससे कम ज्यादा हैं? हे गौत परमाणु पुद्गल से दो प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं इसीप्रकार यावत् नौ प्रदेशी स्कन्ध से दसप्रदेशी स्कन्ध प्रदेश रूप से बहुत हैं। दस प्रदेशी स्कन्ध से संख्यातप्रदेशी स्कन प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं। संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से असंख्य प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूपसे बहुत हैं और अनन्त प्रदेशी स्कन से असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं।

४—अहो भगवान्! एक प्रदेश अवगाहे हुए पुद्गल और दो प्रदेश अवगाहे पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन किससे

---

* दो प्रदेशी स्कन्ध की अपेक्षा परमाणु सूक्ष्म है और वे एक एव हैं, इसलिये बहुत हैं। दो प्रदेशी स्कन्ध परमाणु की अपेक्षा स्थूल है, इसलिये वे थोड़े हैं। इस तरह पूर्व पूर्व की संख्या बहुत है और पीछे पीछे की संख्या थोड़ी है। परन्तु दसप्रदेशी स्कन्ध की अपेक्षा संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं क्योंकि संख्याताके स्थान बहुत हैं। संख्यातप्रदेशी की अपेक्षा असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध बहुत है क्योंकि असंख्याताके स्थान बहुत हैं। असंख्यातप्रदेशी की अपेक्षा अनन्तप्रदेशी स्कन्ध थोड़े हैं क्योंकि उनका उसी प्रकार का सूक्ष्म परिणाम है।

कम ज्यादा है ? हे गौतम ! दो प्रदेश अवगाहे पुद्गलों से एक प्रदेश अवगाहे पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। * इसी तरह यावत् दस प्रदेश अवगाहे पुद्गलों से नौ प्रदेश अवगाहे पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। दस प्रदेशावगाढ पुद्गलों से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गलों से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं।

५—अहो भगवान् ! एक प्रदेशावगाढ पुद्गल और दो प्रदेशावगाढ पुद्गलोंमें प्रदेशार्थ रूप से कौन किससे कम ज्यादा है ? हे गौतम ! एक प्रदेशावगाढ पुद्गलों से दो प्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। इसीतरह यावत् नौ आकाशप्रदेशावगाढ पुद्गलों से दस प्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। दस आकाश प्रदेशावगाढ पुद्गलों से संख्यात आकाशप्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं। संख्यात आकाशप्रदेशावगाढ पुद्गलों से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं।

६—अहो भगवान् ! एक समय की स्थिति वाले पुद्गल और दो समय की स्थिति वाले पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन

---

* परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक एक प्रदेशावगाढ होवे हैं। दो प्रदेशी स्कन्ध से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक दो प्रदेशावगाढ होवे हैं। इसी तरह तीन प्रदेशावगाढ यावत् असंख्यप्रदेशावगाढ तक होवे हैं।

किससे कम ज्यादा हैं ? हे गौतम ! जिस तरह से क्षेत्र की कही उसी तरह से काल की वक्तव्यता कह देनी चाहिए।

७—अहो भगवान् ! एक गुण काला और दो गुण काला पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन किससे कम ज्यादा हैं ? हे गौतम ! जिस तरह परमाणु पुद्गल की वक्तव्यता कही उसी तरह पांच वर्ण, दो गन्ध, और पांच रस इन १२ की वक्तव्यता कह देनी चाहिए।

८—अहो भगवान् ! एक गुण कर्कश और दो गुण कर्कश पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन किससे कम ज्यादा हैं ? हे गौतम ! एक गुण कर्कश पुद्गलों से दो गुण कर्कश पुद्गल विशेषाधिक हैं। इसी तरह यावत् नौ गुण कर्कश पुद्गलों से दस गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। दस गुण कर्कश पुद्गलों से संख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। संख्यात गुण कर्कश पुद्गलों से असंख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। असंख्यात गुण कर्कश पुद्गलों से अनन्तगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। जिस तरह द्रव्यार्थ रूप से कहा उसी तरह प्रदेशार्थ रूप से भी कह देना चाहिए।

जिस तरह कर्कश का कहा उसी तरह मृदु (कोमल), गुरु (भारी) और लघु (हल्का) का भी कह देना चाहिए।

जिस तरह वर्ण का कहा उसी तरह से शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष का कह देना चाहिए।

कम ज्यादा है ? हे गौतम ! दो प्रदेश अवगाहे पुद्गलों से एक प्रदेश अवगाहे पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। * इसी तरह यावत् दस प्रदेश अवगाहे पुद्गलों से नौ प्रदेश अवगाहे पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। दस प्रदेशावगाढ पुद्गलों से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गलों से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं।

५—अहो भगवान् ! एक प्रदेशावगाढ पुद्गल और दो प्रदेशावगाढ पुद्गलोंमें प्रदेशार्थ रूप से कौन किससे कम ज्यादा है ? हे गौतम ! एक प्रदेशावगाढ पुद्गलों से दो प्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। इसीतरह यावत् नौ आकाशप्रदेशावगाढ पुद्गलों से दस प्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। दस आकाश प्रदेशावगाढ पुद्गलों से संख्यात आकाशप्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं। संख्यात आकाशप्रदेशावगाढ पुद्गलों से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं।

६—अहो भगवान् ! एक समय की स्थिति वाले पुद्गल और दो समय की स्थिति वाले पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन

---

* परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक एक प्रदेशावगाढ होवे हैं। दो प्रदेशी स्कन्ध से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक दो प्रदेशावगाढ होवे हैं। इसी तरह तीन प्रदेशावगाढ यावत् असंख्यप्रदेशावगाढ तक होवे हैं।

किससे कम ज्यादा हैं ? हे गौतम ! जिस तरह से क्षेत्र की वक्तव्यता कही उसी तरह से काल की वक्तव्यता कह देनी चाहिए।

७—अहो भगवान् ! एक गुण काला और दो गुण काला पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन किससे कम ज्यादा हैं ? हे गौतम ! जिस तरह परमाणु पुद्गल की वक्तव्यता कही उसी तरह पांच वर्ण, दो गन्ध, और पांच रस इन १२ की वक्तव्यता कह देनी चाहिए।

८—अहो भगवान् ! एक गुण कर्कश और दो गुण कर्कश पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन किससे कम ज्यादा हैं ? हे गौतम ! एक गुण कर्कश पुद्गलों से दो गुण कर्कश पुद्गल विशेषाधिक हैं। इसी तरह यावत् नौ गुण कर्कश पुद्गलों से दस गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। दस गुण कर्कश पुद्गलों से संख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। संख्यात गुण कर्कश पुद्गलों से असंख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। असंख्यात गुण कर्कश पुद्गलों से अनन्तगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। जिस तरह द्रव्यार्थ रूप से कहा उसी तरह प्रदेशार्थ रूप से भी कह देना चाहिए।

जिस तरह कर्कश का कहा उसी तरह मृदु (कोमल), गुरु (भारी) और लघु (हल्का) का भी कह देना चाहिए।

जिस तरह वर्ण का कहा उसी तरह से शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष का कह देना चाहिए।

समुच्चय के २९७ और द्रव्यार्थ के २९७ तथा प्रदेशार्थ के २९७ ये सब मिला कर ८९१ सूत्र हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १८१

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में ६९ बोलों की अल्पाबहुत्व चलती है सो कहते हैं—

६९ बोलों की अल्पाबहुत्व श्री पन्नवणाजी सूत्र के तीसरे पद में है उस तरह से कह देनी चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यात गुण कर्कश पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा कहना चाहिए। इसी तरह गुरु लघु मृदु कह देना चाहिए। *

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १८२

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में 'अजीव के कडजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! एक परमाणु पुद्गल द्रव्य आसरी (दव्वट्ठयाए) क्या कडजुम्मा है या तेओगा है या दावरजुम्मा है या कलियोगा है ? हे गौतम ! कलियोगा है, शेष तीन नहीं है। इसी तरह अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

२—अहो भगवान् ! बहुत परमाणु पुद्गल द्रव्य आसरी,

* यह थोकड़ा इस संस्था से प्रकाशित श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के प्रथम भाग के पृष्ठ ४५ से ४८ पर है।

फर्क पड़ता है-(१) समुद्घात ३ होती हैं, (२) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का, (३) अध्यवसाय अशुभ होते हैं, (४) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें २ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) आयुष्य ३००० वर्ष का, (२) आयुष्यके अनुसार अनुबन्ध होता है।

वनस्पति मर कर पृथ्वीकाय में उपजती है,-उसमें ७ बोलों का फर्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ५ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) अवगाहना, अंगुल के असंख्यातवें भाग, (२) लेश्या ३, (३) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का, (४) अध्यवसाय अशुभ होवे हैं, (५) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें २ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) आयुष्य १०००० वर्ष का, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है।

तीन विकलेन्द्रिय (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय) और असंज्ञी तिर्यञ्च मर कर पृथ्वीकाय में उत्पन्न होते हैं, उनमें ९-९ बोलों का फर्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें ७ बोलों का फर्क पड़ता है-(१) अवगाहना-अंगुल के असंख्यातवें भाग, (२) दृष्टि एक-मिथ्यादृष्टि (३) दो अज्ञान, (४) योग एक-काया योग, (५) आयुष्य-अन्तर्मुहूर्त का, (६) अध्यवसाय-अशुभ (७) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें दो बोलों का फर्क पड़ता है-(१) बेइन्द्रिय की स्थिति १२ वर्ष की, तेइन्द्रिय की स्थिति

क्या कडजुम्मा हैं यावत् कलियोगा हैं ? हे गौतम ! ओघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से कलियोगा हैं। शेप तीन नहीं है इसी तरह अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

३—अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल प्रदेश आसरी कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है। हे गौतम ! कलियोगा है, शेप ३ नहीं है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी दावर जुम्मा है। तीन प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी तेओगा है। चार प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी कडजुम्मा है। पांचप्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी कलियोगा है। छह प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी दावरजुम्मा है। सात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी तेओगा है। आठ प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी कडजुम्मा है। नौ प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी कलियोगा है। दस प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी दावरजुम्मा है। संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा है। असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी सिय कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है। अनन्त प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा है।

४—अहो भगवान् ! बहुत परमाणु पुद्गल द्रव्य आसरी क्या कडजुम्मा हैं यावत् कलियोगा हैं ? हे गौतम ! ओघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से कलियोगा हैं। इस तरह अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह

देना चाहिए।

५—अहो भगवान्! बहुत परमाणु पुद्गल प्रदेश आसरी क्या कडजुम्मा हैं यावत् कलियोगा हैं? हे गौतम! ओघादेश से सिय कडजुम्मा हैं यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से कलियोगा हैं।

बहुत दो प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी ओघादेश से सिय कडजुम्मा, सिय दावरजुम्मा हैं, तेओगा और कलियोगा नहीं हैं, विहाणादेश से दावरजुम्मा हैं, शेष तीन नहीं हैं।

बहुत तीन प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी ओघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से तेओगा हैं शेष तीन भांगे नहीं होते हैं।

बहुत चार प्रदेशी स्कन्ध ओघादेश से कडजुम्मा हैं और विहाणादेश से भी कडजुम्मा हैं; शेष तीन भांगे नहीं हैं। बहुत पांच प्रदेशी स्कन्ध का कथन परमाणु की तरह, बहुत छह प्रदेशी स्कन्ध का कथन दो प्रदेशी की तरह, बहुत सात प्रदेशी स्कन्ध का कथन तीन प्रदेशी की तरह, बहुत आठप्रदेशी स्कन्ध का कथन चार प्रदेशी स्कन्ध की तरह, बहुत नौ प्रदेशी स्कन्ध का कथन परमाणु की तरह, बहुत दस प्रदेशी स्कन्ध का कथन दो प्रदेशी की तरह कह देना चाहिए। बहुत संख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी ओघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से कडजुम्मा भी हैं यावत् कलियोगा भी हैं। जिस तरह संख्यात प्रदेशी स्कन्ध कहा उसी तरह

असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध और अनन्त प्रदेशी स्कन्ध कह देना ाहिए।

६—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल ने क्या कडजुम्मा देश अवगाहे हैं यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं? हे तम! कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे । दो प्रदेशी स्कन्ध ने सिय दावरजुम्मा सिय कलियोगा देश अवगाहे हैं, शेष दो नहीं अवगाहे हैं। तीन प्रदेशी स्कन्ध सिय दावरजुम्मा, सिय तेओगा, सिय कलियोगा प्रदेश वगाहे हैं, कडजुम्मा प्रदेश नहीं अवगाहे हैं। चार प्रदेशी कन्ध ने सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे । जिस तरह चार प्रदेशी स्कन्ध का कहा उसी तरह पांच देशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी तक कह देना चाहिए।

बहुत परमाणु पुद्गल ने ओघादेश से कडजुम्मा प्रदेश वगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं, विहाणादेश से कलि-ोगा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। बहुत दो देशी स्कन्ध ने ओघादेश से कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष ीन नहीं अवगाहे हैं, विहाणादेश से दावरजुम्मा प्रदेश भी और कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं, शेष दो भांगा नहीं अव-ाहे हैं। बहुत तीन प्रदेशी स्कन्ध ने ओघादेश से कडजुम्मा देश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं, विहाणादेश से ेओगा प्रदेश भी, दावरजुम्मा प्रदेश भी और कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं, कडजुम्मा प्रदेश नहीं अवगाहे हैं। बहुत

चार प्रदेशी स्कन्ध ने ओघादेश से कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं, विहाणादेश से कडजुम्मा प्रदेश भी अवगाहे हैं यावत् कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं। जिस तरह चार प्रदेशी का कहा उसी तरह पांच प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

७—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल क्या कडजुम्मा समय की स्थितिवाले हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं? हे गौतम! परमाणु पुद्गल सिय कडजुम्मा समयकी स्थितिवाले हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं। इसी तरह यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

बहुत परमाणु पुद्गल ओघादेश से सिय कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं यावत् सिय कलियोगा समय की स्थितिवाले हैं। विहाणादेश से कडजुम्मा समयकी स्थितिवाले भी हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले भी हैं। इसी तरह यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

८—अहो भगवान्! परमाणु पुदगल के काले वर्ण के पर्याय क्या कडजुम्मा हैं यावत् कलियोगा हैं? हे गौतम! जिस तरह स्थिति का कहा उसी तरह अनन्तप्रदेशी तक काले वर्णका कह देना चाहिए। इसी तरह वर्णादि १६ कह देना चाहिए।

अहो भगवान्! अनन्त प्रदेशी स्कन्ध में कर्कश स्पर्शके पर्याय क्या कडजुम्मा यावत् कलियोगा हैं? हे गौतम! सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। बहुत अनन्तप्रदेशी स्कन्ध में

ओघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणा-देश से कडजुम्मा भी हैं यावत् कलियोगा भी हैं। इसी तरह गुरु लघु मृदु (कोमल) स्पर्श का कह देना चाहिए।

६—अहो भगवान्! क्या परमाणु पुद्गल सअड्ढे–साद्ध (जिसका आधा भाग हो सके) है या अणड्ढे–अनर्द्ध (जिसका आधा भाग न हो सके) है? हे गौतम! साद्ध नहीं है किन्तु अनर्द्ध है। दो प्रदेशी स्कन्ध साद्ध है*, अनर्द्ध नहीं है। तीन प्रदेशी, पांच प्रदेशी, सात प्रदेशी, नौ प्रदेशी स्कन्ध परमाणु की तरह कह देना चाहिए। चार प्रदेशी, छह प्रदेशी, आठ प्रदेशी, दस प्रदेशी स्कन्ध दो प्रदेशी स्कन्ध की तरह कह देना चाहिए। संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सिय साद्ध है सिय अनर्द्ध है। इसी तरह असंख्यात प्रदेशी अनन्त प्रदेशी स्कन्ध का कह देना चाहिए। बहुत परमाणु पुद्गल यावत् बहुत अनंत प्रदेशी स्कन्ध साद्ध (स अड्ढे) भी होते हैं और अनर्द्ध (अणड्ढे) भी होते हैं ×।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

---

* सम (बेकी) संख्या वाले प्रदेशों के जो स्कन्ध हैं वे साद्ध हैं क्योंकि उनके बराबर दो भाग हो सकते हैं। विषम (एकी) संख्यावाले प्रदेशों के जो स्कन्ध हैं वे अनर्द्ध हैं क्योंकि उनके बराबर दो भाग नहीं हो सकते हैं।

× जब बहुत परमाणु सम संख्या वाले होवे हैं। तब साद्ध होवे हैं और जब विषम संख्या वाले होते हैं तब अनर्द्ध होते हैं क्योंकि परमाणु संघात (परस्पर मिलने से) और भेद (अलग होने से)

थोकड़ा नं० १८३

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में 'अजीव कम्पमान' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या परमाणु सेया (सकम्प) है या निरेया (निष्कम्प) है ? हे गौतम ! सिय सकम्प और सिय निष्कम्प है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए। बहुत परमाणु पुद्गल यावत् बहुत अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सदा काल सकम्प भी रहते हैं और सदा काल निष्कम्प भी रहते हैं।

२—अहो भगवान् ! परमाणु पुद्गल कितने काल तक सकम्प रहता है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक सकम्प रहता है।

३—अहो भगवान् ! परमाणु पुद्गल कितने काल तक निष्कम्प रहता है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्याताकाल तक निष्कम्प रहता है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध से लगा कर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए। बहुत परमाणु पुद्गल यावत् बहुत अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सदा काल सकम्प रहते हैं और सदा काल निष्कम्प रहते हैं।

४—अहो भगवान् ! सकम्प परमाणु पुद्गल का कितने काल का अन्तर होता है अर्थात् सकम्प अवस्था का त्याग कर

रूप होने से उनकी संख्या अवस्थित नहीं है। इसलिए वे सार्द्ध और अनर्द्ध दोनों रूप होते हैं।

फिर पीछा कितने काल बाद कम्पता है ? हे गौतम ! * स्वस्थान आसरी और परस्थान आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का अन्तर होता है ।

५—अहो भगवान् ! निष्कम्प परमाणु पुद्गल का अन्तर कितने काल का होता है ? हे गौतम ! स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यातवां भाग होता है । और परस्थान आसरी जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्याता काल का होता है ।

सकम्प दो प्रदेशी स्कन्ध का अन्तर स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय का उत्कृष्ट असंख्याता काल का होता है

---

* जब परमाणु परमाणु अवस्था में रहता है तब स्वस्थान कहलाता है। जब परमाणु स्कन्ध अवस्था में होता है तब परस्थान कहलाता है। जब परमाणु एक समय तक कम्पमान अवस्था से बन्द रह कर फिर चलता है तब स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय का अन्तर होता है। जब परमाणु पुद्गल असंख्याता काल तक किसी एक जगह स्थिर रह कर फिर कम्पायमान होता है तब उत्कृष्ट असंख्याता काल का अन्तर होता है। जब परमाणु दो प्रदेशी आदि स्कन्ध के अन्तरगत होता है और जघन्य से एक समय चलन क्रिया से बन्द रह कर फिर चलता है तब परस्थान आसरी जघन्य एक समय का अन्तर होता है। जब परमाणु असंख्यात काल तक दो प्रदेशी आदि स्कन्धों में रहकर फिर स्कन्ध से अलग होकर चलायमान होता है तब परस्थान आसरी उत्कृष्ट असंख्यात काल का अन्तर होता है।

परस्थान आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का होता है।

निष्कम्प दो प्रदेशी स्कन्ध का अन्तर स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का होता है। परस्थान आसरी जघन्य एक समय का उत्कृष्ट अनन्त काल का होता है। इसी तरह यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

बहुत परमाणु आसरी सकम्प और निष्कम्प का अन्तर नहीं होता है। इसी तरह यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

अल्पाबोध (अल्प बहुत्व) — सब से थोड़े सेया (सकम्प) परमाणु पुद्गल, उनसे निरेया (निष्कम्प) परमाणु पुद्गल असंख्यात गुणा। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये। निरेया (निष्कम्प) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सब से थोड़ा, उनसे सेया (सकम्प) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अनन्त गुणा हैं।

अल्पाबोध – (द्रव्यार्थ रूप से) – १ सब से थोड़े द्रव्यार्थ रूप से निरेया (अकम्पमान) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध २ उससे सेया (सकम्प) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ रूप से अनन्त गुणा। ३ उससे परमाणु पुद्गल सेया द्रव्यार्थ रूप से अनन्त गुणा। ४ उससे संख्यातप्रदेशी स्कन्ध सेया द्रव्यार्थरूप से असंख्यात गुणा। ५ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया

द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा। ६ उससे परमाणु पुद्गल निरेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा। ७ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया द्रव्यार्थ रूप से संख्यातगुणा। ८ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा।

प्रदेशार्थ रूप से अल्पाबोध—जैसे द्रव्यार्थ रूप से अल्पाबोध कही वैसे ही प्रदेशार्थ रूप से अल्पाबोध कह देनी चाहिये किन्तु इतनी विशेषता है कि परमाणु पुद्गल में अप्रदेशार्थ रूप से कहना चाहिये और संख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा कहना चाहिये।

दोनों की भेली (शामिल) अल्पाबोध—सब से थोड़े अनन्तप्रदेशी स्कन्ध निरेया द्रव्यार्थ रूप से। २ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध निरेया प्रदेशार्थ रूप से अनन्त गुणा। ३ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सेया द्रव्यार्थ रूप से अनन्त गुणा। ४ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सेया प्रदेशार्थ रूप से अनन्त गुणा। ५ उससे परमाणु पुद्गल सेया द्रव्यार्थ रूप से अप्रदेशार्थ रूप से अनन्त गुणा। ६ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा। ७ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया प्रदेशार्थ रूपसे संख्यात गुणा।* ८ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा। ९ उससे

* 'संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा' ऐसा भी कई प्रतियों में मिलता है।

असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा। १० उससे परमाणु पुद्गल निरेया द्रव्यार्थ रूप से अप्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा। ११ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा। १२ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा +। १३ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा। १४ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा है।

सेवं भंते !! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १८४

श्री भगवती जी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में 'सर्व से और देश से कम्पमान अकम्पमान का थोकड़ा' चलता है सो कहते हैं--

---

+ग्यारहवें बोल में निष्कम्प परमाणुओं की अपेक्षा संख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया (निष्कंप) द्रव्यार्थ रूप से संख्यात गुणा बतलाये हैं और बारहवें बोल में प्रदेशार्थ रूप से संख्यात प्रदेशी निरेया स्कन्ध निष्कम्प परमाणुओं की अपेक्षा असंख्यात गुणा कहे गये हैं। इसका कारण यह है कि निष्कम्प परमाणुओं से निष्कम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात गुणा होते हैं। इनमें से अनेक स्कन्धों में उत्कृष्ट संख्या वाले प्रदेश होते हैं इसलिये ये स्कन्ध निष्कम्प परमाणुओं से प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा होते हैं क्योंकि उत्कृष्ट संख्यात में एक संख्या बढ़ने से ही असंख्य त हो जाती है।

४६ दिन की, चौइन्द्रिय की स्थिति छह महीने की और असंज्ञी तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय की स्थिति करोड़पूर्व की है। (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। ४×६=३६ बोलों का फ़र्क है।

संज्ञी तिर्यञ्च और संज्ञी मनुष्य मर कर पृथ्वीकाय में उत्पन्न होते हैं। उनमें तिर्यञ्च में ११ बोलों का और मनुष्य में १२ बोलों का फ़र्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं उन दोनों में (तिर्यञ्च और मनुष्य में) ६-६ बोलों का फ़र्क पड़ता है-(१) अवगाहना—जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग (२) लेश्या तीन, (३) दृष्टि एक—मिथ्यादृष्टि (४) ज्ञान नहीं, अज्ञान दो (५) योग एक काया का (६) समुद्घात तीन, (७) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का (८) अध्यवसाय—अशुभ * (६) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें तिर्यञ्च में दो बोलों का फ़र्क पड़ता है—(१) करोड़ पूर्व का आयुष्य, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। मनुष्य में उत्कृष्ट गम्मा ३ में तीन बोलों का फ़र्क पड़ता है-(१) अवगाहना ५०० धनुष की÷ (२) करोड़ पूर्व का

* मनुष्य के चौथा गम्मा में अध्यवसाय शुभ और अशुभ दोनों होवे हैं। पांचवें गम्मे में अध्यवसाय अशुभ होवे हैं और छठे गम्मे में अध्यवसाय शुभ होवे है।

÷ अंगुल के असंख्यातवें भाग की अवगाहना वाले संज्ञी तिर्यञ्च का आयुष्य करोड़ पूर्व का हो सकता है। इसलिए तिर्यञ्च के उत्कृष्ट गम्मों में दो बोलों का फ़र्क पड़ा है। अंगुल के असंख्यातवें भाग की अवगाहना वाले मनुष्य का आयुष्य करोड़ पूर्व नहीं हो सकता है, इसलिए मनुष्य के उत्कृष्ट गम्मों में तीन बोलों का फ़र्क पड़ा है।

१—अहो भगवान् ! क्या एक परमाणु पुद्गल सर्व से कंपता है या देश से कम्पता है या अकम्पता (नहीं कंपता) है, हे गौतम ! एक परमाणु पुद्गल सिय सर्व से कम्पता है, सिय अकम्पता है किन्तु देश (अंश) से नहीं कम्पता है।

२—अहो भगवान् ! क्या एक द्विप्रदेशी स्कन्ध देश से या सर्व से कम्पता है या अकम्पता है ? हे गौतम ! सिय देश से कम्पता है, सिय सर्व से कम्पता है, सिय अकम्पता है।

जिस तरह दो प्रदेशी स्कन्ध का कहा उसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध से लेकर यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

३—अहो भगवान् ! क्या बहुत परमाणु पुद्गल देश से या सर्व से कम्पते हैं या अकम्पते हैं ? हे गौतम ! देश से नहीं कम्पते हैं किन्तु सर्व से कम्पते भी हैं और अकम्पते भी हैं (निष्कम्प भी रहते हैं)।

४—अहो भगवान् ! क्या बहुत दो प्रदेशी स्कन्ध देश से या सर्व से कम्पते हैं या अकम्पते हैं ? हे गौतम ! देश से भी कम्पते हैं, सर्व से भी कम्पते हैं और अकम्पते भी हैं।

जिस तरह दो प्रदेशी स्कन्ध कहा उसी तरह से तीन प्रदेशी से लेकर यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

५—अहो भगवान् ! एक परमाणु पुद्गल कम्पमान अकम्पमान की स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! कम्पमान की

स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अकम्पमान की जघन्य स्थिति एक समय की, उत्कृष्ट असंख्यात काल की है। दो प्रदेशी स्कन्ध सर्व से कम्पमान और देश से कम्पमान की स्थिति जघन्य एक समय की है, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अकम्पमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है। जिस तरह दो प्रदेशी का कहा उसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

बहुत परमाणु पुद्गल कम्पमान अकम्पमान की स्थिति और बहुत दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक सर्व से कम्पमान और देश से कम्पमान की स्थिति सव्वद्धा (सर्व काल) शाश्वती पाई जाती है।

६—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल कम्पमान का अन्तर कितना है? हे गौतम! स्वकाय आसरी परकाय आसरी अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। परमाणु पुद्गल अकम्पमान का अन्तर स्वकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है। परकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है।

एक दो प्रदेशी स्कन्ध सर्व से कम्पमान और देश से कम्पमान का अन्तर स्वकाय आसरी जघन्य एक समय का,

उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। परकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का है। एक दो प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान का अन्तर स्वकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है। परकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का है। जिस तरह दो प्रदेशी स्कन्ध कहा उसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

बहुत परमाणु पुद्गल कम्पमान अकम्पमान का अन्तर नहीं है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध से लेकर यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

अल्प बहुत्व—सब से थोड़े परमाणु पुद्गल कम्पमान, उससे अकम्पमान असंख्यात गुणा। दो प्रदेशी स्कन्ध सर्व थकी कम्पमान सब से थोड़ा; देश से कम्पमान असंख्यात गुणा, अकम्पमान असंख्यात गुणा। इसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध से लेकर यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये। अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान सबसे थोड़ा, उससे सर्व कम्पमान अनन्त गुणा, उससे देश कंपमान अनन्त गुणा।

परमाणु पुद्गल संख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान देश कम्पमान अकम्पमान द्रव्यार्थ की अल्प बहुत्व—१ सब से थोड़ा अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान द्रव्यार्थ से (दव्वट्ठयाए) २ उस से अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान द्रव्यार्थ से अनन्त गुणा,

स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अकम्पमान की जघन्य स्थिति एक समय की, उत्कृष्ट असंख्यात काल की है। दो प्रदेशी स्कन्ध सर्व से कम्पमान और देश से कम्पमान की स्थिति जघन्य एक समय की है, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अकम्पमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है। जिस तरह दो प्रदेशी का कहा उसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

बहुत परमाणु पुद्गल कम्पमान अकम्पमान की स्थिति और बहुत दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक सर्व से कम्पमान और देश से कम्पमान की स्थिति सव्वद्धा (सर्व काल) शाश्वती पाई जाती है।

६—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल कम्पमान का अन्तर कितना है? हे गौतम! स्वकाय आसरी परकाय आसरी अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। परमाणु पुद्गल अकम्पमान का अन्तर स्वकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है। परकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है।

एक दो प्रदेशी स्कन्ध सर्व से कम्पमान और देश से कम्पमान का अन्तर स्वकाय आसरी जघन्य एक समय का,

उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। परकाय आसरी जघन्य ए
समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का है। एक दो प्रदेश
स्कन्ध अकम्पमान का अन्तर स्वकाय आसरी जघन्य एक सम
का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है। परका
आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का है
जिस तरह दो प्रदेशी स्कन्ध कहा उसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्
यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

बहुत परमाणु पुद्गल कम्पमान अकम्पमान का अन्त
नहीं है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध से लेकर यावत् अनन्त
प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

अल्प बहुत्व—सब से थोड़े परमाणु पुद्गल कम्पमान,
उससे अकम्पमान असंख्यात गुणा। दो प्रदेशी स्कन्ध सर्व
थकी कम्पमान सब से थोड़ा; देश से कम्पमान असंख्यात गुणा,
अकम्पमान असंख्यात गुणा। इसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध से
लेकर यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।
अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान सबसे थोड़ा, उससे सर्व
कम्पमान अनन्त गुणा, उससे देश कंपमान अनन्त गुणा।

परमाणु पुद्गल संख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी
स्कन्ध अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान देश कम्पमान
अकम्पमान द्रव्यार्थ की अल्प बहुत्व—१ सब से थोड़ा अनन्त
प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान द्रव्यार्थ से (दव्वट्ठयाए) २ उस
से अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान द्रव्यार्थ से अनन्त गुणा,

३ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध देश कम्पमान द्रव्यार्थ से अनन्त गुणा ४ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान द्रव्यार्थ * से अनन्त गुणा, ५ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सर्वकम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, ६ उससे परमाणु पुद्गल सर्व कम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, ७ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध देश कम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, ८ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध देश कम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, ९ उससे परमाणु पुद्गल अकम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, १० उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध अकंपमान द्रव्यार्थ से संख्यात गुणा, ११ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा।

प्रदेशार्थ की अल्पबहुत्व—द्रव्यार्थ की तरह कह देनी चाहिये किन्तु इतनी विशेषता है कि परमाणु में अप्रदेशार्थ कहना चाहिये। संख्यात प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान प्रदेशार्थ असंख्यात गुणा कहना चाहिये।

द्रव्यार्थ प्रदेशार्थ दोनों की शामिल अल्पबहुत्व—१ सब से थोड़ा अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान द्रव्यार्थ से, २ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान प्रदेशार्थ से अनन्त गुणा, ३ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान द्रव्यार्थ से अनन्त गुणा, ४ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान प्रदेशार्थ से अनन्त गुणा, ५ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध देश

* कई प्रतियों में असंख्यात गुणा भी मिलता है।

कम्पमान द्रव्यार्थ से अनन्त गुणा, ६ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध देश कम्पमान प्रदेशार्थ से अनन्त गुणा, ७ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान द्रव्यार्थ से अनन्त गुणा, ८ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान प्रदेशार्थ से असंख्यात गुणा, ९ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, १० उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान प्रदेशार्थ से × संख्यातगुणा, ११ उससे परमाणु पुद्गल सर्व कम्पमान द्रव्यार्थ से (अप्रदेशार्थ से) असंख्यात-गुणा, १२ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध देशकम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, १३ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध देश कम्पमान प्रदेशार्थ से संख्यात गुणा, १४ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध देश कम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, १५ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यात गुणा, १६ उससे परमाणु पुद्गल अकम्पमान द्रव्यार्थ से (अप्रदेशार्थ से) असंख्यात गुणा, १७ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान द्रव्यार्थ से संख्यात गुणा, १८ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से संख्यात गुणा, १९ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, २० उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान प्रदेशार्थ से असंख्यात गुणा।

७—अहो भगवान्! धर्मास्तिकाय के मध्यप्रदेश कितने

× कई प्रतियों में असंख्यात गुणा भी मिलता है।

कहे गये हैं ? हे गौतम ! * आठ कहे गये हैं। इसी तरह अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय और जीवास्तिकाय के भी आठ आठ मध्य प्रदेश कहे गये हैं।

८—अहो भगवान् ! जीवास्तिकाय के ये आठ मध्य प्रदेश आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों में समा सकते हैं ? हे गौतम ! जघन्य एक दो तीन चार पांच और छह में समा सकते हैं और उत्कृष्ट आठ प्रदेशों में समा सकते हैं ×परन्तु सात प्रदेशों में नही समाते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

---

*"धर्मास्तिकायके आठ मध्य प्रदेश आठ रुचक प्रदेशवर्ती होते हैं" ऐसा चूर्णिकार कहते हैं। वे रुचक प्रदेश मेरु के मूलभाग के मध्यवर्ती हैं। यद्यपि धर्मास्तिकाय आदि लोक प्रमाण हैं। इसलिए उनका मध्य भाग रुचक प्रदेशों से असंख्यात योजन दूर रत्नप्रभा के नीचे के आकाश के अन्दर हैं, रुचकवर्ती नहीं हैं तथापि आकाशास्तिकाय के आठ रुचक प्रदेश दिशा और विदिशा के उत्पत्ति स्थान हैं। इसलिये वे धर्मास्तिकाय आदि के भी मध्यभाग हैं, ऐसी विवक्षा की गई है, ऐसा सम्भव लगता है (टीका में)

× संकोच और विस्तार यह जीव प्रदेशों का धर्म है। इसलिए जीव के मध्यवर्ती आठ प्रदेश जघन्य एक दो तीन चार पांच छह आकाश प्रदेशों में रह सकते हैं और उत्कृष्ट आठ प्रदेशों में रहते हैं किन्तु सात आकाश प्रदेशों में कभी नहीं रहते हैं क्योंकि वस्तुस्वभाव ही ऐसा है। (टीका).

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के ५ वें उद्देशे में काल का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या आवलिका संख्याता समय रूप है, असंख्यात समय रूप है या अनन्त समय रूप है ? गौतम ! आवलिका संख्यात समय रूप नहीं है, अनन्त समय रूप भी नहीं है किन्तु असंख्यात समय रूप है।

इसी तरह २ आणापाणू (श्वासोच्छ्वास), ३ थोव (स्तोक), ४ लव, ५ मुहूर्त, ६ अहोरात्रि, ७ पक्ष, ८ मास, ६ उऊ (ऋतु), १० अयण (अयन), ११ संवच्छर (संवत्सर-वर्ष), १२ जुग (युग), १३ वाससय (सौ वर्ष), १४ वास सहस्स (हजार वर्ष), १५ वास सय सहस्स (लाख वर्ष), १६ पुव्वंग (पूर्वांग), १७ पुव्व (पूर्व), १८ तुडियंग (त्रुटितांग), १६ तुडिय (त्रुटित), २० अडडंग (अटटांग), २१ अडड (अटट), २२ अववंग (अववांग), २३ अवव, २४ हूहुयंग (हूहूकांग), २५ हूहुय (हूहूक), २६ उप्पलंग (उत्पलांग), २७ उप्पल (उत्पल), २८ पउमंग (पद्मांग), २६ पउम (पद्म), ३० नलिणंग (नलिनांग), ३१ नलिण (नलिन), ३२ अच्छणिपूरंग (अच्छनिपूरांग), ३३ अच्छणिपूर (अच्छनिपूर) ३४ अउयंग (अयुतांग), ३५ अउय (अयुत), ३६ नउयंग (नयुतांग), ३७ नउय (नयुत), ३८ पउयंग (प्रयुतांग), ३६ पउय (प्रयुत), ४० चूलियंग

(चूलिकांग), ४१ चूलिय (चूलिका), ४२ सीस पहेलियंग (शीर्ष प्रहेलिकांग), ४३ सीस पहेलिया (शीर्ष प्रहेलिका), ४४ पलिओवम (पल्योपम), ४५ सागरोवमे (सागरोपम), ४६ ओसप्पिणी (अवसर्पिणी), ४७ उस्सप्पिणी (उत्सर्पिणी) तक कह देना चाहिये। ये सभी असंख्यात समय रूप हैं।

२—अहो भगवान्! क्या पुद्गल परावर्तन संख्यात समय रूप है, असंख्यात समय रूप है या अनन्त समय रूप है? हे गौतम! संख्यात समय रूप नहीं, असंख्यात समय रूप नहीं किन्तु अनन्त समय रूप है। इसी तरह भूतकाल, भविष्य काल और सर्व काल कह देना चाहिये।

३—अहो भगवान्! क्या बहुत आवलिकाएं संख्यात समय रूप हैं, असंख्यात समय रूप हैं या अनन्त समय रूप हैं? हे गौतम! संख्यात समय रूप नहीं हैं, सिय असंख्यात समय रूप हैं, सिय अनन्त समय रूप हैं। इसी तरह बहुत आणपाणू (श्वासोच्छ्वास) यावत् बहुत उत्सर्पिणी तक कह देना चाहिये।

४—अहो भगवान्! क्या बहुत पुद्गलपरावर्तन संख्यात समय रूप हैं, असंख्यात समय रूप हैं या अनन्त समय रूप हैं? हे गौतम! संख्यात समय रूप नहीं, असंख्यात समय रूप नहीं, किन्तु अनन्त समय रूप हैं। *।

---

* भूतकाल, भविष्य काल और सर्व काल, इनमें बहुवचन नहीं होता है। इसलिए इनमें बहुवचन आसरी प्रश्न नहीं किया गया है।

आयुष्य, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। तिर्यञ्च में ११ बोलों का और मनुष्य में १२ बोलों का फर्क पड़ता है, ये दोनों मिला कर २३ हुए।

चौदह प्रकार के देवता मर कर पृथ्वीकाय में उत्पन्न होते हैं, उनमें ४–४ बोलों का फर्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें दो बोलों का फर्क पड़ता है–(१) जघन्य स्थिति अपने अपने स्थान के अनुसार होती है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें दो बोलों का फर्क पड़ता है–(१) उत्कृष्ट स्थिति अपने अपने स्थान के अनुसार होती है। (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। १४×४=५६ नाणता (फर्क)।

पांच स्थावर के ३०, तीन विकलेन्द्रिय और असंज्ञी तिर्यञ्च के ३६, संज्ञी तिर्यञ्च और संज्ञी मनुष्य के २३ और चौदह प्रकार के देवता के ५६, ये सब मिला कर १४५ (३०+३६ +२३+५६=१४५) नाणता (फर्क) हुए।

जिस तरह पृथ्वीकाय के १४५ नाणता (फर्क) कहे गये हैं उसी तरह अप्काय के १४५ और वनस्पतिकाय के १४५ नाणता कह देने चाहिये। तेउकाय, वायुकाय और तीन विकलेन्द्रिय में ८९–८९ नाणता कह देने चाहिए अर्थात् पृथ्वीकाय में जो १४५ नाणता कहे गये हैं उनमें से चौदह प्रकार के देवता के ५६ नाणता (फर्क) कम कर देने चाहिए क्योंकि तेउकाय, वायुकाय और तीन विकलेन्द्रियों में देवता उत्पन्न नहीं होते हैं।

५— अहो भगवान् ! क्या आणपाणू (आनप्राण श्वासोच्छ्वास) संख्यात आवलिका रूप है, असंख्यात आवलिका रूप है या अनन्त आवलिका रूप है ? हे गौतम ! आणपाणू संख्यात आवलिका रूप है किन्तु असंख्यात और अनन्त आवलिका रूप नहीं है। इसी तरह शीर्ष प्रहेलिका तक कह देना चाहिये। पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी इन चार बोलों में एक एक में असंख्यात आवलिका हैं। पुद्गल परावर्तन, भूतकाल, (गया काल) भविष्य काल (आनेवाला काल) और सर्व काल इन चार बोलों में एक एक में अनन्त आवलिकाएं हैं

६— अहो भगवान् ! क्या बहुत आणपाणू (आनप्राणश्वासोच्छ्वास) में संख्यात आवलिका हैं, असंख्यात आवलिका हैं या अनन्त आवलिका हैं ? हे गौतम ! सिय संख्यात, सिय असंख्यात सिय अनन्त आवलिका हैं। इसी तरह शीर्ष प्रहेलिका तक कह देना चाहिये। बहुत पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी इन चार बोलों में सिय असंख्यात, सिय अनन्त आवलिका हैं। बहुत पुद्गल परावर्तन में अनन्त आवलिका हैं।

७—अहो भगवान् ! एक थोव (स्तोक) में कितने आणपाणू (आनप्राण श्वासोच्छ्वास) हैं ? हे गौतम जिस तरह आवलिका का कहा उसी तरह कह देना चाहिये यावत् शीर्ष प्रहेलिका तक कह देना चाहिये। इसी तरह एक एक बोल को छोड़

कर एक वचन आसरी और बहुवचन आसरी प्रश्नोत्तर करने चाहिये।

८—अहो भगवान्! एक पल्योपम में समय से लगाकर शीर्ष प्रहेलिका तक कितने हैं? हे गौतम! असंख्यात हैं।

९—अहो भगवान्! बहुत पल्योपम में समय से लगाकर शीर्ष प्रहेलिका तक कितने हैं? हे गौतम! सिय असंख्यात सिय अनन्त।

१०—अहो भगवान्! एक सागरोपम में पल्योपम कितने हैं? हे गौतम! संख्यात हैं। इसी तरह एक अवसर्पिणी में एक उत्सर्पिणी में पल्योपम संख्यात हैं।

११—अहो भगवान्! एक पुद्गल परावर्तन में पल्योपम कितने हैं? हे गौतम! अनन्त हैं। इसी तरह भूतकाल, भविष्य काल, सर्वकाल में भी पल्योपम अनन्त हैं।

१२—अहो भगवान्! बहुत सागरोपम में पल्योपम कितने हैं? हे गौतम! सिय संख्यात सिय असंख्यात सिय अनन्त हैं। इसी तरह अवसर्पिणी और उसर्पिणी में भी कह देना चाहिये। बहुत पुद्गल परावर्तन में पल्योपम अनन्त हैं।

१३—अहो भगवान्! एक अवसर्पिणी में, एक उत्सर्पिणी में सागरोपम कितने हैं? हे गौतम! संख्यात यावत् पल्योपम की तरह कह देना चाहिये।

१४—अहो भगवान्! एक पुद्गल परावर्तन में अवसर्पिणी उसर्पिणी कितनी हैं? हे गौतम! अनन्त हैं। इसी तरह भूत-

ाल, भविष्य काल और सर्व काल कह देना चाहिये।

१५—अहो भगवान्! बहुत पुद्गल परावर्तन में अवस-ाणी उत्सर्पिणी कितनी हैं? हे गौतम! अनन्त हैं।

१६—अहो भगवान्! भूतकाल में पुद्गल परावर्तन कतने हैं? हे गौतम! अनन्त हैं। इसी तरह भविष्य काल गैर सर्व काल में भी पुद्गल परावर्तन अनन्त हैं।

समुच्चय तीन काल के ६ अलावा (आलापक) कहे ाते हैं—१–भूतकाल से भविष्य काल एक समय अधिक है। —भविष्य काल से भूत काल एक समय न्यून (कम) है। —भूतकाल से सर्व काल दुगुना झाझेरा (दुगुने से कुछ ाधिक) है। ४—सर्व काल से भूत काल आधे से कुछ न्यून कम) है। ५—भविष्य काल से सर्व काल दुगुने से कुछ पून (कम) है। ६—सर्व काल से भविष्य काल आधा ाझेरा (आधे से कुछ अधिक) है।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १८६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के छठे उद्देशे में ६ नियंठा (निर्ग्रन्थ) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

द्वार गाथा

पएणवण वेद रागे कप्प चरित्त पडिसेवणा णाणे।

तित्थ लिंग सरीरे खेत्ते काल गइ संजम णिगासे ॥ १ ॥
जोगुवओग कसाए लेस्सा परिणाम बंध वेदे य।
कम्मोदीरण उवसंपजहएण सएणा य आहारे ॥ २ ॥
भव आगरिसे कालंतरे य समुग्वाय खेत्त फुसणा य
भावे परिमाणे वि य अप्पा बहुयं णियंठाणं ॥ ३ ॥

अर्थ—इन तीन गाथाओं में निर्ग्रन्थों के ३६ द्वार कहे गये हैं। वे ये हैं—(१) पएणवणा (प्रज्ञापन) द्वार, (२) वेद द्वार, (३) राग द्वार, (४) कल्प द्वार, (५) चारित्र द्वार, (६) प्रतिसेवना द्वार, (७) ज्ञान द्वार, (८) तीर्थ द्वार, (९) लिङ्ग द्वार, (१०) शरीर द्वार, (११) क्षेत्र द्वार, (१२) काल द्वार, (१३) गति द्वार, (१४) संयम द्वार, (१५) निकाश "(सन्निकर्ष) द्वार, (१६) योग द्वार, (१७) उपयोग द्वार, (१८) कषाय द्वार, (१९) लेश्या द्वार, (२०) परिणाम द्वार, (२१) बन्ध द्वार (२२) वेद (कर्मों का वेदन) द्वार, (२३) उदीरणा द्वार, (२४) उपसंपद्-हान (स्वीकार और त्याग) द्वार, (२५) संज्ञा द्वार, (२६) आहार द्वार, (२७) भव द्वार, (२८) आकर्ष द्वार (२९) काल मान द्वार, (३०) अन्तर द्वार, (३१) समुद्घात द्वार, (३२) क्षेत्र द्वार, (३३) स्पर्शना द्वार, (३४) भाव द्वार, (३५) परिमाण द्वार, (३६) अल्प बहुत्व द्वार।

(१) प्रज्ञापन द्वार—अहो भगवान्! निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के कहे गये हैं? हे गौतम! पांच प्रकार के कहे गये हैं

* १ पुलाक, २ बकुश, ३ कुशील, ४ निर्ग्रन्थ, ५ स्नातक।

अहो भगवान्! पुलाक के कितने भेद हैं? हे गौतम! पुलाक के दो भेद हैं–लब्धि पुलाक और चारित्र पुलाक(प्रतिसेवना पुलाक)।

÷लब्धि पुलाक अपनी लब्धि से चक्रवर्ती की सेना का भी विनाश कर सकता है।

चारित्र पुलाक (प्रतिसेवना पुलाक) के ५ भेद हैं— १ ×ज्ञान पुलाक, २ दर्शन पुलाक, ३ चारित्र पुलाक, ४ लिङ्ग

---

* जो बाह्य और आभ्यन्तर ग्रन्थ–परिग्रह रहित होते हैं, उन्हें निर्ग्रन्थ (साधु) कहते हैं। यद्यपि सभी साधुओं के सर्व विरति चारित्र होता है तथापि चारित्र मोहनीय कर्म के क्षयोपशमादि की विशेषता से पुलाक आदि पांच भेद होते हैं। निःसार (सार रहित) धान के दाने को पुलाक कहते हैं। उस निःसार दाने की तरह जिस साधु का संयम दोष सेवन के द्वारा कुछ असार हो गया हो उसे पुलाक कहते हैं। शाली के पूले की तरह। सार थोड़ा असार बहुत।

बकुश—जिसका चारित्र विचित्र प्रकार का हो उसे बकुश कहते हैं।

कुशील—दोषों के सेवन से जिसका शील (चारित्र) कुत्सित—मलिन हो गया हो उसे कुशील कहते हैं।

निर्ग्रन्थ—मोहनीय कर्म रहित को निर्ग्रन्थ कहते हैं।

स्नातक—चार घाती कर्म रहित को स्नातक कहते हैं।

÷इस सम्बन्ध में कुछ आचार्यों का मत यह है कि विराधना से जो ज्ञान पुलाक होते हैं उन्हीं को ऐसी लब्धि प्राप्त होती है वे ही लब्धि पुलाक कहलाते हैं। इनके सिवाय दूसरा कोई लब्धि पुलाक नहीं होता है।

× प्रतिसेवना पुलाक की अपेक्षा पुलाक के पांच भेद हैं—ज्ञान की विराधना करने वाला ज्ञानपुलाक कहलाता है। जो शंका आदि

पुलाक, ५ यथासूक्ष्म पुलाक ।

अहो भगवान ! बकुश के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! बकुश के ५ भेद हैं—१ ÷ आभोग बकुश, २ अनाभोग बकुश, ३ संवुड (संवृत) बकुश, ४ असंवुड (असंवृत) बकुश, ५ यथासूक्ष्म बकुश ।

अहो भगवान् ! कुशील के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! कुशील के दो भेद—* प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील ।

दूषणों से दर्शन (समकित) को दूषित करता है उसे दर्शनपुलाक कहते हैं । मूलगुण और उत्तर गुण की विराधना से जो चारित्र को दूषित करता है उसे चारित्र पुलाक कहते हैं । बिना कारण जो अन्य लिङ्ग को धारण करता है उसको लिङ्ग पुलाक कहते हैं । जो मन से अकल्पनीय वस्तु को सेवन करने की इच्छा करता है उसे यथासूक्ष्म पुलाक कहते हैं ।

÷ बकुश के दो भेद हैं—उपकरण बकुश और शरीर बकुश । जो वस्त्र पात्रादि उपकरणों की विभूषा करता हो उसे उपकरण बकुश कहते हैं । जो अपने हाथ पैर नख, मुख आदि शरीर के अवयवों को सुशोभित रखता हो उसे शरर बकुश कहते हैं । इन दोनों प्रकार के बकुशों के फिर पांच भेद हैं—शरीर उपकरण आदि की विभूषा करना साधु के लिए वर्जित है ऐसा जानते हुए भी जो दोष लगाता है उसे आभोग बकुश कहते हैं और जो अनजान में दोष लगाता है उसे अनाभोग बकुश कहते हैं । जो छिपकर दोष लगाता है उसे संवुड (संवृत) बकुश कहते हैं और जो प्रकट में दोष लगाता है उसे असंवुड (असंवृत) बकुश कहते हैं । आंख और मुख को जो साफ करता है उसे यथासूक्ष्म बकुश कहते हैं ।

* मूलगुण व उत्तर गुण की विराधना से जिसका चारित्र कुशील (दूषित) हो उसको प्रतिसेवना कुशील कहते हैं । संज्वलन कषाय . । जिसका चारित्र दूषित हो उसको कषायकुशील कहते हैं ।

अहो भगवान! प्रतिसेवना कुशील के कितने भेद हैं? हे गौतम! पांच भेद हैं— × ज्ञान प्रतिसेवना कुशील, दर्शन प्रतिसेवना कुशील, चारित्र प्रतिसेवना कुशील, लिङ्ग प्रतिसेवना कुशील और यथासूक्ष्म प्रतिसेवना कुशील।

अहो भगवान्! कषायकुशील के कितने भेद हैं? हे गौतम! पांच भेद हैं—* ज्ञानकषायकुशील, दर्शनकषायकुशील, चारित्र कषाय कुशील, लिङ्ग कषाय कुशील, यथा सूक्ष्म कषाय कुशील।

अहो भगवान्! निग्रन्थ के कितने भेद हैं। हे

× ज्ञान, दर्शन, चारित्र और लिङ्ग द्वारा जो आजीविका करता हो उसको क्रमशः ज्ञान प्रतिसेवना कुशील, दर्शन प्रतिसेवना कुशील, चारित्र प्रतिसेवना कुशील और लिङ्गप्रतिसेवना कुशील कहते हैं। 'यह तपस्वी है' इत्यादि शब्द सुन कर जो खुश हो या तपस्या के फल की इच्छा करे, देवादि पद की इच्छा करे उसे यथासूक्ष्मप्रतिसेवनाकुशील कहते हैं।

* जो क्रोध मान आदि कषायों के उदय से परिणामों में ऊँच नीच होने से ज्ञान दर्शन और चारित्र में दोष लगाता है उसे क्रमशः ज्ञान कषाय कुशील, दर्शनकषायकुशील और चारित्रकषायकुशील कहते हैं। जो कषाय पूर्वक वेष परिवर्तन करे उसे लिङ्ग कषाय कुशील कहते हैं। जो मन से क्रोधादि का सेवन करता है उसको यथासूक्ष्म कषाय कुशील कहते हैं। अथवा जो मन से कषाय द्वारा ज्ञान आदि की विराधना करता है उसको क्रमशः ज्ञान कषायकुशील दर्शनकषायकुशील आदि कहते हैं। मूल गुण उत्तर गुणमें ये दोष नहीं लगाते।

गौतम ! पांच भेद हैं—* प्रथम समयवर्ती निर्ग्रन्थ, अप्रथम समयवर्ती निर्ग्रन्थ, चरम समयवर्ती निर्ग्रन्थ, अचरम समयवर्ती निर्ग्रन्थ और यथासूक्ष्म निर्ग्रन्थ (सब समय सरीखा वर्ते)।

अहो भगवान् ! स्नातक के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! ÷ स्नातक के ५ भेद हैं—१ अच्छवी (शरीर की शुश्रूषा-विभूषा रहित) २ अशबल (असबले) (दोष रहित-शुद्ध चारित्र वाला) ३ अकर्मांश (अकम्मंसे) (घाती कर्म रहित)। ४ संशुद्ध नाण दंसण धरे अरहा जिने केवली (संशुद्ध ज्ञान-दर्शन के धारक अरिहन्त जिन केवली) ५ अपरिस्रावी (अपरिस्सावी) (योग-क्रिया रहित होने से कर्म बन्ध रहित)।

---

* ग्यारहवां गुणस्थान उपशान्त मोहनीय और बारहवां गुणस्थान क्षीण मोहनीय, इनकी स्थिति अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है। इनके प्रथम समय में रहने वाला प्रथम समयवर्ती निर्ग्रन्थ कहलाता है। और बाकी के समयों में रहने वाला अप्रथम समयवर्ती निर्ग्रन्थ कहलाता है। इसी तरह उपरोक्त दोनों गुणस्थानों के चरम (अन्तिम) समय में रहने वाला चरमसमयवर्ती और बाकी समयों में रहने वाला अचरम समयवर्ती निर्ग्रन्थ कहलाता है।

प्रथम आदि समयों की विवक्षा किये बिना सामान्यतः निर्ग्रन्थ को यथासूक्ष्म निर्ग्रन्थ कहते हैं। इनके लिये सब समय सरीखे हैं।

÷ किसी भी टीकाकार ने कहीं भी स्नातक के अवस्था कृत भेदों की व्याख्या नहीं की है। इसलिए इन्द्र शक्र पुरन्दर शब्दों की तरह इनका भी शब्दनय की अपेक्षा से भेद होता है, ऐसा संभव है। (टीका)

२ वेद द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक आदि पांचों प्रकार के निर्ग्रन्थ क्या सवेदी होते हैं या अवेदी ? हे गौतम ! पुलाक, बकुश और प्रतिसेवनाकुशील ये * सवेदी होते हैं। पुलाक में दो वेद पाये जाते हैं—पुरुष वेद और × पुरुष नपुंसक वेद। बकुश और प्रतिसेवना कुशील में तीनों ही वेद पाये जाते हैं। + कषाय कुशील सवेदी भी होता है और अवेदी भी होता है। सवेदी होता है तो तीनों वेद पाये जाते हैं। अवेदी होता है तो उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी होता है।

निर्ग्रन्थ और स्नातक अवेदी होते हैं। निर्ग्रन्थ उपशान्तवेदी अथवा क्षीणवेदी होता है और स्नातक क्षीणवेदी होता है।

३ राग द्वार—अहो भगवान् ! क्या पुलाक सरागी होता

---

* पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना कुशील उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी नहीं कर सकते हैं इसलिये ये अवेदी नहीं हो सकते हैं।

× स्त्री को पुलाक लब्धि नहीं होती है परन्तु पुलाक लब्धि वाला पुरुष अथवा पुरुष नपुंसक होता है। जो पुरुष होते हुए भी लिङ्ग छेदादि द्वारा कृत्रिम नपुंसक होता है उसे पुरुष नपुंसक जानना चाहिये किन्तु स्वभाव से (स्वरूप से) नपुंसक वेद पुलाक लब्धि वाला नहीं होता है।

+ कषाय कुशील सूक्ष्म संपराय गुणस्थानक तक होता है। वह प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिबादर में सवेदी होता है। सूक्ष्म सम्पराय में उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी होता है तब वह अवेदक होता है।

लेने का कल्प है। शेष बावीस तीर्थंकर के साधु राज
पिण्ड ले सकते हैं।

(४) शय्यातर—चौवीस तीर्थंकरों के साधुओं का शय्यातर
यहाँ से आहार नहीं लेने का कल्प है।

(५) मास कल्प— पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधुओं
लिए नव कल्पी विहार बताया गया है। शेष बावी
तीर्थंकरों के साधुओं के लिये नव कल्पी विहार न
बताया गया है। वे अपनी इच्छानुसार विह
करते हैं।

(६) चतुर्मास कल्प—पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधु
वर्षा काल में चार महीने एक स्थान पर रहने का कल
है। बावीस तीर्थंकर के साधुओं का वर्षाकाल में ७
दिन एक स्थान पर रहने का कल्प है। पहले वर्षा
जाने से पाप लगने का अंदेशा हो तो अधिक भी र
सकते हैं।

(७) व्रत—पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधु के लिये पाँच
महाव्रत और छठा रात्रि भोजन त्याग का कल्प है
बावीस तीर्थंकरों के साधुओं के लिये चार महाव्रत व
पाँचवे रात्रि भोजन त्याग का कल्प है।

(८) प्रतिक्रमण—पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधु के लिये
देवसिय, राइसिय, पक्खी, चौमासी व संवत्सरी—ये
पाँच प्रतिक्रमण करने का कल्प है। बावीस तीर्थंकरों के

तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में १६७ नाणता होते हैं। जिनमें १४५ तो पृथ्वीकाय में कहे अनुसार कह देने चाहिए। सात नारकी, ६ देवलोक (तीसरे से आठवें देवलोक तक), इन १३ स्थानों के जीव तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में उपजते हैं, उनमें ४-४ बोलों का फर्क पड़ता है, जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें दो बोलों का फर्क है-(१) जघन्य स्थिति अपने अपने स्थान के अनुसार होती है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें दो बोलों का फर्क पड़ता है-(१) उत्कृष्ट स्थिति अपने अपने स्थान के अनुसार होती है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। १३×४=५२। ये सब मिला कर १६७ (१४५+५२=१६७) नाणता हुए।

मनुष्य में २०६ नाणता होते हैं—पृथ्वीकाय के ६, अप्काय के ६, वनस्पतिकाय के ७, तीन विकलेन्द्रिय के २७, असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय के ६, संज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय के ११, संज्ञी मनुष्य के १२, वैक्रिय के बत्तीस स्थानों के १२८ (पहली से लेकर छठी नारकी तक ६ नारकी, १० भवनपति, १ वाणव्यन्तर, १ ज्योतिषी, १२ देवलोक, १ नवग्रैवेयक, १ चार अनुत्तर विमान) इन ३२ स्थानों में ४—४ बोलों का फर्क पड़ता है। जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमें दो बोलों का फर्क पड़ता है-(१) जघन्य स्थिति अपने अपने स्थान के अनुसार होती है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें दो बोलों का फर्क पड़ता है—(१) उत्कृष्ट स्थिति

पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना कुशील में पहले के द
चारित्र पाये जाते हैं। कषाय कुशील में पहले के चार चारि

साधुओं के लिये चौमासी व संवत्सरी का प्रतिक्रमण करना आवश्यक है। शेष प्रतिक्रमण पाप लगे तो करते हैं अन्यथा नहीं करते।

(९) कृतिकर्म—चौवीस तीर्थंकरों के साधुओं के लिये यह कल्प है कि छोटी दीक्षा वाले साधु बड़ी दीक्षा वालों को वंदना नमस्कार करते हैं उनका गुणग्राम करते हैं।

(१०) पुरुष ज्येष्ठ—चौवीस ही तीर्थंकरों के लिये यह कल्प है कि पुरुष की प्रधानता होने से चाहे सौ वर्ष की दीक्षित साध्वी हो तो भी वह नवदीक्षित साधु को वंदना नमस्कार करती है।

चूँकि पहले तीर्थंकर के साधु ऋजु जड़ होते हैं और अन्तिम तीर्थंकर के साधु वक्र जड़ होते हैं तथा शेष बावीस तीर्थङ्कर के साधु ऋजु प्रज्ञ होते हैं। इसी कारण पहले व चौवीसवें तीर्थङ्कर के साधुओं के कल्प में और शेष बावीस तीर्थङ्करों के साधुओं के कल्प में अन्तर है।

पहले और अन्तिम तीर्थङ्कर के साधुओं में दस ही कल्प नियमा होते हैं। बीचके २२ तीर्थङ्करों के साधुओं में चार कल्प (चौथा, सातवां, नवां, दसवां) की नियमा और छह कल्प की भजना होती है।

शास्त्रोक्त मर्यादानुसार वस्त्र पात्रादि रखना स्थविरकल्प है। जघन्य २ उत्कृष्ट १२ उपकरण रखना जिन कल्प है।

अरिहन्त, केवली, तीर्थङ्कर कल्पातीत होते हैं।

स्नातक मरकर मोक्ष में जाता है। स्नातक आराधक ही होता है, विराधक नहीं होता है।

पहले चार नियण्ठों ने पहले आयुष्य बाँध लिया हो तो भवनपति आदि ठिकानों में उत्पन्न हो सकते हैं अथवा इन्द्रादि की पदवी न पाकर अन्य वैमानिक देवों में उत्पन्न हो सकते हैं। कषायकुशील अप्रतिसेवी होते हैं वे मूल गुण उत्तर गुण में दोष नहीं लगाते हैं। इनमें तीर्थङ्कर देव तो उत्कृष्ट कषायकुशील होते हैं तथा वे कल्पातीत होते हैं इसलिये ये तो विराधक होते ही नहीं। सामान्य साधुओं में जो कषाय कुशील होते हैं वे भी मूल गुण उत्तर गुण के विराधक नहीं होते। परन्तु कषाय के उदय से परिणामों की धारा में उतार चढ़ाव होने से विराधक हो सकते हैं। इस प्रकार कषाय कुशील पहले आयुष्य का बंध हो जाने से तथा ऊपर लिखे अनुसार विराधक होने से दूसरे ठिकानों में उत्पन्न हो सकते हैं। निर्ग्रन्थ नियण्ठा निर्ग्रन्थ अवस्था में तो विराधक हो ही नहीं सकता। उनके परिणाम वड्ढमाण अवट्ठिया होते हैं तथ वे अजघन्य अनुत्कृष्ट ३३ सागरोपम की आयु वाले अनुत्तर विमान में ही उत्पन्न होते हैं दूसरे स्थान में नहीं। इनका अन्यतर स्थान में उत्पन्न होना इस प्रकार संभव है कि उपशम श्रेणी में जो निर्ग्रन्थ होते हैं वे उपशम श्रेणी की स्थिति पूरी होने पर नीचे गुण स्थानों में आते हैं तब निर्ग्रन्थावस्था छोड़कर दूसरे नियण्ठे में आ सकते हैं और उस समय दूसरे ठिकानों की स्थिति बांध सकते हैं। इन्हें भूत नय की अपेक्षा से निर्ग्रन्थ मान कर निर्ग्रन्थ का दूसरे स्थानों में जाना बताया गया है ऐसा संभव है। तत्त्व केवली गम्य।

१४-संयमस्थान—अहो भगवान् ! पुलाक के * संयम-
न कितने हैं ? हे गौतम ! असंख्याता हैं। इसी तरह बकुश,
सेवना कुशील और कषाय कुशील का कह देना चाहिये।
र्ग्रन्थ और स्नातक के संयम स्थान एक है।

इनकी अल्पाबहुत्व इस प्रकार है—सब से थोड़े निर्ग्रन्थ
र स्नातक के संयम स्थान क्योंकि इनका संयम स्थान एक

प्रश्न—पांचशरीर और छः समुद्घात कषाय कुशील के होते हैं फिर
ई अप्रतिसेवी-मूल गुण उत्तर गुण का अविराधक कैसे कहा है ?

उत्तर-वीतरागके पैरोंके नीचे जीव आजावे तो उन्हें ईरियावही बंध
नों कहा गया और सरागी को इस क्रिया से संपराय बंध होना बत-
या है। क्रिया एकसी होते हुए भी भेद का कारण यह है कि वीतराग
परिणाम बहुत ऊँचे होते हैं। इसी प्रकार परिणामों की अतिशय
द्धता के कारण कषायकुशील को ५ शरीर और ६ समुद्घात होते
ए भी अप्रतिसेवी कहा गया है।

* संयम—अर्थात् चारित्र की शुद्धि अशुद्धि की हीनाधिकता
के कारण होने वाले भेदों को संयमस्थान कहते हैं। वे असंख्याता होते
हैं। उनमें प्रत्येक संयमस्थान के सर्वाकाश प्रदेश गुणित (गुणा करे)
सर्वाकाश प्रदेश प्रमाण (अनन्तानन्त) पर्याय (अंश) होते हैं। वे
संयमस्थान पुलाक के असंख्यात होते हैं क्योंकि चारित्रमोहनीय का
क्षयोपशम विचित्र होता है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील और
कषायकुशील का भी कह देना चाहिये। कषाय का अभाव होने से
निर्ग्रन्थ और स्नातक के एक ही संयम स्थान होता है।

ही है। उससे पुलाक के संयमस्थान असंख्यात गुणा, उससे वकुश के संयमस्थान असंख्यात गुणा, उससे प्रतिसेवना कुशील के संयम स्थान असंख्यात गुणा, उससे कषायकुशील के संयम स्थान असंख्यात गुणा हैं।

१५-निकास द्वार * (संनिकर्ष द्वार)—अहो भगवान् ! पुलाक के कितने चारित्रपर्याय होते हैं ? हे गौतम ! अनन्त होते हैं। इसी तरह यावत् स्नातक तक कह देना चाहिये। अहो भगवान् ! एक पुलाक दूसरे पुलाक के चारित्र पर्यायों की अपेक्षा हीन, अधिक, तुल्य होता है ? हे गौतम ! पुलाक पुलाक आपसमें ÷ छट्ठाण वडिया है। कषाय कुशील के साथ में भी छट्ठाण वडिया है। वकुश, प्रतिसेवनाकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक से अनन्तगुण हीन (अनन्तवें भाग) है।

एक वकुश दूसरे वकुश के साथ में (आपस में) छट्ठाण वडिया है, प्रतिसेवना कुशील और कषायकुशील से छट्ठाण वडिया है, लाक से अनन्त गुण अधिक है, निर्ग्रन्थ और

---

* चारित्र की पर्यायों को निकर्ष कहते हैं। पुलाक आदि का अपने स्वजातीय पुलाक आदि के साथ संयोजन (मिलान) करना स्वस्थान संनिकर्ष कहलाता है।

÷ अनन्त भाग हीन, असंख्यात भाग हीन, संख्यात भाग हीन, अनन्त गुण हीन, असंख्यात गुण हीन, संख्यात गुण हीन। इसको 'छट्ठाण वडिया' कहते हैं। यह हीनता की अपेक्षा से छट्ठाण वडिया है। इसी तरह 'वृद्धि' की अपेक्षा से भी 'छट्ठाण वडिया' कह देना चाहिये।

स्नातक से अनन्त गुण हीन है।

प्रतिसेवन। कुशील प्रतिसेवना कुशील से छट्ठाण वडिया है। बकुश से छट्ठाण वडिया और कषाय कुशील से छट्ठाण वडिया है। पुलाक से अनन्त गुण अधिक और निर्ग्रन्थ स्नातक से अनन्तगुण हीन है।

एक कषाय कुशील दूसरे कषाय कुशील के साथ आपस में छट्ठाण वडिया है, पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना कुशील से छट्ठाण वडिया है, निर्ग्रन्थ और स्नातक से अनन्तगुण हीन है।

निर्ग्रन्थ और स्नातक आपस में तुल्य हैं। पुलाक, बकुश और कषाय कुशील और प्रतिसेवना कुशील से अनन्त गुण अधिक हैं।

अल्प बहुत्व—सब से थोड़े पुलाक और कषायकुशील के जघन्य चारित्र के पर्याय, उससे पुलाक के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्त गुणा, उससे बकुश और प्रतिसेवना कुशील के जघन्य चारित्र के पर्याय परस्पर तुल्य अनन्त गुणा, उससे बकुश के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्त गुणा, उससे प्रतिसेवना कुशील के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्त गुणा, उससे कषाय कुशील के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्त गुणा, उससे निर्ग्रन्थ और स्नातक के चारित्र के पर्याय परस्पर तुल्य अनन्त गुणा।

१६ योग द्वार— अहो भगवान्! पुलाक सयोगी होता है या अयोगी होता है? हे गौतम! सयोगी (मन योगी,

परिणाम होता है ? + हीयमान, वद्ध मान या अवट्ठिया (अव-स्थित) ? हे गौतम ! उपरोक्त तीनों परिणाम पाये जाते हैं। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील में भी तीनों परिणाम पाये जाते हैं। हीयमान वद्ध मान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तमु हूर्त की होती है। अव-ट्ठिया (अवस्थित) की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ७ समय की होती है। निर्ग्रन्थ में ※ वद्ध मान (वड्ढमाण) और अवट्ठिया ये दो परिणाम पाये जाते हैं। वद्ध मान की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तमु हूर्त की होती है। अवट्ठिया की

+जब पुलाक के परिणाम बढ़ते हों और कषाय के द्वारा बाधित होते हों उस समय वह एकादि समय तक वद्ध मान परिणामका अनुभव करता है। इसलिए पुलाक के वद्ध मान परिणाम की स्थिति जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषायकुशील के विषय में जान लेना चाहिए किन्तु बकुश आदि में जघन्य एक समय वद्ध मान परिणाम मरण की अपेक्षा भी घटित हो सकता है। पुलाकपने में मरण नहीं होता है, इसलिए पुलाक मरण की अपेक्षा एक समय घटित नहीं होता है। मरण के समय पुलाक कषायकुशील आदि रूप से परिणत होता है। पुलाक का जो मरण कहा गया है वह भूतभाव (गये काल या भविष्य काल) की अपेक्षा से जानना चाहिये।

※ निर्ग्रन्थ में हीयमान परिणाम नहीं होता है। यदि उसके परि-णामों की हानि हो तो वह कषायकुशील कहलाता है।

स्थिति जघन्य ÷एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है।

स्नातक में वर्द्धमान और अवट्ठिया ये दो परिणाम पाये जाते हैं। * वर्द्धमान की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है और अवट्ठिया की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट देश ऊणी करोड़ पूर्व की होती है।

÷ निर्ग्रन्थ जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक वर्द्धमान परिणाम वाला होता है। जब उसे केवलज्ञान हो जाता है तब उसके परिणामान्तर (दूसरा परिणाम) हो जाता है। निर्ग्रन्थ का मरण अवट्ठिया परिणाम में होता है। इसलिए उसके अवट्ठिया परिणाम की स्थिति एक समय की घटित हो सकती है।

* स्नातक जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक वर्द्धमान परिणामवाला होता है। क्योंकि शैलेशी अवस्था में वर्द्धमान परिणाम अन्तर्मुहूर्त तक होता है। स्नातक के अवट्ठिया परिणामका समय भी जघन्य अन्तर्मुहूर्त का होता है, इसका कारण यह है कि केवलज्ञान उत्पन्न होने के बाद अन्तर्मुहूर्त तक अवट्ठिया (अवस्थित) परिणाम वाला रहकर शैलेशी अवस्था को स्वीकार करता है, इस अपेक्षा से अवट्ठिया परिणाम का समय जघन्य अन्तर्मुहूर्त का समझना चाहिये। अवट्ठिया परिणाम की उत्कृष्ट स्थिति देश ऊणी करोड़ पूर्व की होती है। इसका कारण यह है कि करोड़ पूर्व की आयुष्य वाले पुरुष को जन्मसे जघन्य नौ वर्ष बीतने पर केवल ज्ञान उत्पन्न हो। इस कारण से नौ वर्ष कम करोड़ पूर्व वर्ष तक अवट्ठिया परिणाम वाला होकर विचरता है। फिर शैलेशी अवस्था (चौदहवें गुणस्थान) में 'वर्द्धमान' परिणाम वाला होता है।

२० बन्ध-द्वार— अहो भगवान् ! पुलाक में कितने कर्मों का बन्ध होता है ? हे गौतम ! * आयुष्य को छोड़कर बाकी ७ कर्मों का बन्ध होता है। बकुश और प्रतिसेवना कुशील में ७ या ८ कर्मों का बन्ध होता है। ÷ कषाय कुशील में ७ या ८ या ६ कर्मों का बन्ध होता है। सात का बन्ध होता है तो आयुष्य को छोड़ कर बाकी सात का होता है। छह का बन्ध होता है तो आयुष्य और मोहनीय को छोड़कर बाकी छह कर्मों का बन्ध होता है।

= निर्ग्रन्थ में एक साता वेदनीय का बन्ध होता है। × स्नातक में बन्ध होता भी है और नहीं भी होता है। यदि बन्ध होता है तो एक साता वेदनीय का बन्ध होता है।

---

* पुलाक अवस्था में आयुष्य का बन्ध नहीं होता है क्योंकि उसके आयुष्य बन्ध योग्य अध्यवसाय (परिणाम) नहीं होते हैं।

÷ कषाय कुशील सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें आयुष्य नहीं बांधते हैं क्योंकि आयुष्य का बन्ध अप्रमत्त गुणस्थानक तक ही होता है। बादर कषाय के उदय का अभाव होने से मोहनीय को भी नहीं बांधता है। इसलिए आयुष्य और मोहनीय के सिवाय ६ कर्मों को बांधता है।

= निर्ग्रन्थ योग निमित्तक एक साता वेदनीय कर्म बांधता है क्योंकि कर्म बन्ध के कारणों में से उसके सिर्फ योग का ही सद्भाव है।

× स्नातक अयोगी (चौदहवें) गुणस्थान में अबन्धक होता है। क्योंकि उस गुणस्थान में बन्ध हेतुओं का अभाव है। सयोगी अवस्था में स्नातक बन्धक होता है और साता वेदनीय का बंध करता है।

२२—वेद द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक कितने कर्मों क
वेदता है ? हे गौतम ! आठ ही कर्मों को वेदता है । इसी तरह
बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील आठ ही कर्म
को वेदते हैं । निर्ग्रन्थ सात कर्मों को (मोहनीय वर्ज कर)
वेदता है स्नातक चार अघाती (वेदनीय, आयुष्य, नाम,
गोत्र) कर्मों को वेदता है ।

२३—उदीरणा द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक कितने कर्मों
की उदीरणा करता है ? हे गौतम ! छह कर्मों की (* आयुष्य
और वेदनीय कर्मों को छोड़कर) उदीरणा करता है । बकुश
और प्रतिसेवना कुशील सात या आठ या छह कर्मों की उदी-
रणा करते हैं । कषायकुशील सात या आठ या छह या पांच
कर्मों (आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय को छोड़कर) की
उदीरणा करता है । निर्ग्रन्थ पांच या दो (नाम और गोत्र)
कर्मों की उदीरणा करता है । स्नातक ÷ दो (नाम और गोत्र)

* पुलाक आयुष्य और वेदनीय कर्म की उदीरणा नहीं करता है ।
क्योंकि उसके इस प्रकार के अध्यवसाय स्थानक नहीं होते हैं किन्तु यह
पहले उदीरणा करके फिर पुलाकपन को प्राप्त होता है । इसी प्रकार
बकुशादि के विषय में समझना चाहिये, जिन जिन कर्मप्रकृतियों की वह
उदीरणा नहीं करता है, उन २ कर्म प्रकृतियों की उदीरणा वह पहले करके
फिर बकुशादिपणे को प्राप्त होता है ।

÷ स्नातक सयोगी अवस्था में नाम और गोत्र कर्म की उदीरणा
करता है । आयुष्य और वेदनीय की उदीरणा तो वह पहले कर चुका है,
फिर स्नातकपणे को प्राप्त होता है ।

कर्मों की उदीरणा करता है या उदीरणा नहीं करता है।

२४—उवसंपजहएण (उपसंपद हान) द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक पुलाकपणे को त्यागता हुआ किसको स्वीकार करता है ? हे गौतम ! पुलाकपणे को त्यागता हुआ दो स्थानों में जाता है—कषाय कुशील में या असंयम में। बकुश बकुशपणे को छोड़ता हुआ चार स्थानों में जाता है—प्रतिसेवना कुशील में, या कषाय कुशील में, या संयमासंयम में या असंयम में। प्रतिसेवना कुशील प्रतिसेवना कुशीलपणे को छोड़ता हुआ चार स्थानों में जाता है—बकुश में या कषायकुशील में, या असंयम में या संयमासंयम में। कषायकुशील कषाय कुशीलपणे को छोड़ता हुआ छह स्थानों में जाता है—पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, निर्ग्रन्थ, असंयम, संयमासंयम। * निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थपणे को छोड़ता हुआ तीन स्थानों में जाता है—कषायकुशील, स्नातक, असंयम।

स्नातक स्नातकपणे को छोड़ता हुआ सिद्धगति (मोक्ष)

---

* उपशम निर्ग्रन्थ उपशम श्रेणी से पड़ता हुआ कषाय कुशील होता है। यदि उपशम श्रेणी के शिखर पर मरण हो जाय तो देवों में उत्पन्न होता हुआ असंयती होता है, देशविरति नहीं होता क्योंकि देवों में देशविरतिपणा नहीं है। यद्यपि श्रेणी से पड़ कर देशविरति भी होता है तथापि उसका यहाँ कथन नहीं किया गया है क्योंकि श्रेणी से गिरते ही तुरन्त देशविरति नहीं होता है परन्तु कषायकुशील होकर फिर पीछे देशविरति होता है।

अपने अपने स्थानके अनुसार होती है। (२) आयुष्य के अनुसार अनुवन्ध होता है। (३२×४=१२८)। ये सब मिला कर मनुष्यके २०६ नाणता (६+६+७+२७+६+११+१२+१२८=२०६) हुए।

शुरू से लेकर सब नाणतों (फर्कों) को मिलाने से १६६८ नाणता (६०+२६७+१२०+११४+१५४+१४५+१४५+१४५+८६+८६+८६+८६+८६+१६७+२०६=१६६८) हुए।

७-सातवां बोल-*१ अवगाहना, २ लेश्या, ३ दृष्टि, ४ ज्ञान, ५ योग, ६ समुद्घात, ७ आयुष्य, ८ अध्यवसाय, ६ अनुबंध, इन ६ बोलों में फर्क पड़ता है।

८-आठवें बोले गम्मा ६ होते हैं—१-ओघिक को ओघिक से (जीव जहाँ से मर कर जाता है वहाँ की स्थिति और जहाँ जाकर उत्पन्न होता है वहाँ की स्थिति से कहना चाहिए। एक बार जघन्य स्थिति से कहना चाहिए और एक बार उत्कृष्ट स्थिति से कहना चाहिए)। २-ओघिक को जघन्य से (जहाँ से मर कर जाता है वहाँ की ओघिक और जहाँ उत्पन्न होता है वहाँ की जघन्य)। ३-ओघिक को उत्कृष्ट से (यहाँ की ओघिक और उत्पत्तिस्थान की उत्कृष्ट)। ४-जघन्य को ओघिक से (यहाँ की जघन्य और उत्पत्तिस्थान की ओघिक)। ५-जघन्य

---

*उच्चत्त मेव लेस्सा दिट्ठी, नाण जोग समुग्घाओ।
आउ अणुबन्ध अज्झवसाणा, नव ठाणे नाणत्ता होइ॥

को प्राप्त होता है।

२५-संज्ञा द्वार—अहो भगवान्! क्या पुलाक सन्नोवउत्ता (आहारादि की अभिलाषा वाला) है या नः सन्नोवउत्ता (आहारादि में आसक्ति रहित) है? हे गौतम! ÷ नो सन्नोवउत्ता है। इसी तरह निर्ग्रन्थ और स्नातक भी नो सन्नोवउत्ता हैं।

बकुश प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील सन्नोवउत्ता, नो सन्नोवउत्ता-भी होते हैं। सन्नोवउत्ता होते हैं तो चारों ही (आहार संज्ञा, भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा, परिग्रह संज्ञा) संज्ञा पाई जाती हैं।

२६-आहार द्वार—अहो भगवान्! पुलाक आहारक होता है या अनाहारक? हे गौतम! पुलाक * आहारक होता

÷जो आहारादि की अभिलाषा वाला हो उसे सन्नोवउत्ता कहते हैं। जो आहारादिका उपभोग करते हुए भी उसमें आसक्तिरहित हो उसे नोसन्नोवउत्ता कहते हैं। आहारादि के विषय में आसक्ति रहित होने से पुलाक, निर्ग्रन्थ और स्नातक नोसन्नोवउत्ता होते हैं। शंका-निर्ग्रन्थ और स्नातक वीतरागी होने के कारण नोसन्नोवउत्ता होते हैं किन्तु पुलाक तो सरागी है वह नोसन्नोवउत्ता कैसे हो सकता है?

समाधान-सराग अवस्था में आसक्ति रहित पणा सर्वथा नहीं होता है यह बात नहीं है क्योंकि बकुशादि सराग होते हुए भी निःसंग होते हैं ऐसा कहा गया है।

* पुलाक से लेकर निर्ग्रन्थ तक मुनियों को विग्रहगति आदि का कारण नहीं होने से ये अनाहारक नहीं होते किन्तु आहारक ही होते हैं।

है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील, कषाय कुशील और निर्ग्रन्थ भी आहारक होते हैं। ÷स्नातक आहारक भी होता है और अनाहारक भी होता है।

२७—भव द्वार—अहो भगवान्! पुलाक कितने भव करता है? हे गौतम! ❀ जघन्य एक भव और उत्कृष्ट तीन भव (मनुष्य के) करता है। इसी तरह निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये।

× बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील जघन्य

÷ स्नातक केवलीसमुद्घात के तीसरे, चौथे और पांचवें समय में तथा अयोगी अवस्था में अनाहारक होता है, बाकी समय में आहारक होता है।

❀ जघन्यतः एक भव में पुलाक होकर कषाय कुशील पणा आदि किसी को एकबार या अनेक बार, उसी भव में या अन्य भव में प्राप्त करके मोक्ष जाता है। उत्कृष्ट देवादिभव से अन्तरित मनुष्य में तीन भव तक पुलाकपणा प्राप्त करता है।

× कोई एक भव में बकुशपणा और कषायकुशीलपणा प्राप्त करके मोक्ष चला जाता है और कोई एक भवमें बकुशपणा प्राप्त करके भवान्तरमें बकुशपणा प्राप्त किये बिना ही मोक्ष चला जाता है, इसलिये बकुश का जघन्य एक भव कहा गया है। उत्कृष्ट आठ भव कहे गये हैं, इसका कारण यह है कि उत्कृष्ट आठ भव तक चारित्रकी प्राप्ति होती है। उनमें से कोई तो आठ भव बकुशपणा द्वारा और अन्तिम भव कषायादि सहित बकुशपणा द्वारा पूर्ण करता है और कोई तो हरेक भव प्रतिसेवना कुशीलपणा आदिसे युक्त बकुशपणासे पूर्ण करता है।

एक भव, उत्कृष्ट ८ भव करते हैं। स्नातक उसी भव में मोक्ष जाता है।

२८—आकर्ष द्वार—अहो भगवान्! पुलाक एक भव में कितने बार आता है? हे गौतम! एक भव में जघन्य ×एक बार, उत्कृष्ट तीन बार आता है। बहुत भव आसरी *जघन्य दो बार, उत्कृष्ट सात बार आता है।

बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषायकुशील एक भव आसरी जघन्य एक बार, ÷उत्कृष्ट प्रत्येक सौ बार आता है। बहुत भव आसरी जघन्य दो बार, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार बार आता है।

× यहाँ चारित्र के परिणाम को आकर्ष कहा है। पुलाक को एक भव में जघन्य एक बार उत्कृष्ट तीन बार आकर्ष होता है।

*पुलाक एक भव में एक और अन्य भव में दूसरा इस तरह अनेक भव आसरी जघन्यतः दो बार आता है और उत्कृष्ट सात बार आता है। पुलाकपणा उत्कृष्ट तीन भव में आता है, इनमें से एक भव में उत्कृष्ट तीन बार आता है। प्रथम भव में एक बार आता है और बाकी दो भवों में तीन तीन बार आता है। इस तरह से सात बार आता है।

÷बकुश के उत्कृष्ट आठ भव होते हैं। उनमें हरेक भव में उत्कृष्ट प्रत्येक सौ बार आता है तब आठ भव में ७२०० (९००× ८=७२००) बार आता है। इस प्रकार अनेक भव आसरी बकुश प्रत्येक हजार बार आता है।

निर्ग्रन्थ एक भव में जघन्य एक बार =उत्कृष्ट दो बार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो बार ÷उत्कृष्ट पांच बार आता है।

स्नातक एक भव में एक बार आता है। स्नातक के अनेक भव नहीं होते हैं।

२६–कालद्वार–अहो भगवान्! पुलाक की स्थिति कितनी है? हे गौतम! एक जीव *आसरी जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है और अनेक जीव +आसरी जघन्य एक समय की,

---

=निर्ग्रन्थ को एक भव में जघन्य एक बार और उत्कृष्ट दो बार उपशम श्रेणि होती है। इसलिये उसके आकर्ष भी जघन्य एक और उत्कृष्ट दो होते हैं यानी निर्ग्रन्थपना एक भव में जघन्य एक बार उत्कृष्ट दो बार आता है।

÷निर्ग्रंथ के उत्कृष्ट तीन भव होते हैं। उनमें से पहले भाव में दो बार, दूसरे भव में दो बार और तीसरे भव में एक बार आता है। क्षपक श्रेणी करके मोक्ष चला जाता है। इस प्रकार अनेक भव आसरी निर्ग्रन्थ पांच बार आता है।

*पुलाकपणा को प्राप्त करने वाला जीव जब तक अन्तर्मुहूर्त पूरा न हो वहाँ तक मरता नहीं है। और पुलाकपणे से गिरता भी नहीं है। इसलिये उसकी स्थिति जघन्य से भी अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट से भी अन्तर्मुहूर्त है।

+एक पुलाक जब अपने अन्तर्मुहूर्त के अन्तिम समय में होता है, ठीक उसी समय दूसरा जीव पुलाकपणे को प्राप्त होता

उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है।

* बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील की स्थिति एक जीव आसरी जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट देश ऊणी करोड़पूर्व की होती है। अनेक जीव आसरी सदाकाल शाश्वत स्थिति है। निर्ग्रन्थ की स्थिति एक जीव आसरी और अनेक जीव आसरी जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। स्नातक की स्थिति एक जीव आसरी जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट देश ऊणी करोड़पूर्व की होती है। अनेक जीव आसरी सदाकाल शाश्वत की होती है।

२० अन्तर द्वार—अहो भगवान्! पुलाक का अन्तर काल कितना है? हे गौतम! काल की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त

है। इसलिये दोनों पुलाकों का सद्भाव एक समय में होता है। वे दो होने से अनेक कहलाये। इस प्रकार अनेक पुलाकों का जघन्य काल एक समय होता है और उनका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त होता है। क्योंकि पुलाक एक समय में उत्कृष्ट प्रत्येक हजार होते हैं। वे अनेक होते हुए भी उनका काल अन्तर्मुहूर्त है किन्तु एक पुलाक की स्थिति के अन्तर्मुहूर्त से अनेक पुलाकों की स्थिति का अन्तर्मुहूर्त बड़ा होता है।

* बकुश चारित्र प्राप्त होने के बाद पहले समय में मर जाय तो जघन्य एक समय की स्थिति होती है, करोड़पूर्व की आयु वाला आठ वर्ष के अन्त में चारित्र स्वीकार करे, उसकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थिति देशऊणी (कुछ कम) करोड़पूर्व की होती है।

का उत्कृष्ट अनन्त काल * का होता है। क्षेत्र की अपेक्षा देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन का होता है। इसी तरह बकुश, प्रति सेवना कुशील, कषाय कुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये। स्नातक का अन्तर नहीं होता है।

अनेक जीव आसरी पुलाक का अन्तर जघन्य एक समय का उत्कृष्ट संख्यात वर्षों का होता है। बकुश, प्रतिसेवना कुशील, कषाय कुशील और स्नातक का अन्तर नहीं होता है। निर्ग्रन्थ का जघन्य एक समय का उत्कृष्ट छह महीनों का होता है।

३१-समुद्घात द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक में कितनी समुद्घात होती ? हे गौतम ! =तीन समुद्घात (वेदना समुद्-

---

* काल से अनन्त उत्सर्पिणी अवसर्पिणी का क्षेत्र से देशोन अर्द्ध पुद्गलपरावर्तन का। भगवती सूत्र के थोकड़ों के चौथे भाग में थोकड़ा नंबर १०२ में पुद्गलपरावर्तन के आठ भेदों का वर्णन है। उनमें सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन का स्वरूप बताया है। यहाँ उसी सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन से अभिप्राय है।

=पुलाक में संज्वलन कषाय का उदय होता है इसलिये कषाय समुद्घात का संभव है।

यद्यपि पुलाक में मरण नहीं होता है तथापि मारणान्तिक समुद्घात होती है। इसका कारण यह है कि मारणान्तिक समुद्घात से निवृत्त होने के बाद कषायकुशीलादि परिणाम में उसका मरण होता है।

घात, कपाय समुद्घात, मारणान्तिक समुद्घात) होती हैं बकुश और प्रतिसेवनाकुशील में पांच समुद्घात (आहारक समुद्घात और केवली समुद्घात को छोड़ कर) होती हैं कपायकुशील में छह समुद्घात (केवली समुद्घात को छोड़ कर) होती हैं । निर्ग्रन्थ में समुद्घात नहीं होती है । स्नातक में एक केवलिसमुद्घात पाई जाती है ।

३२-क्षेत्रद्वार-अहो भगवान् ! पुलाक लोक के संख्यातवें भाग में, असंख्यातवें भाग में, बहुत संख्यातवें भागों में, बहुत असंख्यातवें भागों में या सारे लोक में होता है ? हे गौतम ! लोक के असंख्यातवें भाग में होता है शेष चार बोलों में नहीं होता । इसी तरह बकुश, कुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिए । * स्नातक लोक के असंख्यातवें भाग में होता है, असंख्याता भागों में होता है तथा सम्पूर्ण लोक में होता है ।

३३-स्पर्शनाद्वार-अहो भगवान् ! पुलाक लोक के संख्यातवें भाग को, असंख्यातवें भाग को, बहुत से संख्यातवें

---

* केवलीसमुद्घात के समय जब स्नातक शरीरस्थ होता है अथवा दण्ड कपाट अवस्था में होता है तब लोक के असंख्यातवें भाग में रहता है । मन्थान अवस्था में वह लोक के बहुत भाग को व्याप्त कर लेता है और थोड़ा भाग अव्याप्त रहता है, इस लिए लोक के असंख्याता भागों में रहता है और जब सम्पूर्ण लोक व्याप्त कर लेता है तब वह सम्पूर्ण लोक में रहता है ।

भागों को, बहुत से असंख्यातवें भाग को या सारे लोक को स्पर्शता है? हे गौतम! लोक के असंख्यातवें भाग को स्पर्शता है शेष चार बोलों को नहीं स्पर्शता। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील कषाय कुशील, और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिए। स्नातक लोक के असंख्यातवें भाग को, लोक के असंख्याता भागों को तथा सम्पूर्ण लोक को स्पर्शता है।

३४—भावद्वार—अहो भगवान्! पुलाक किस भाव में होता है? हे गौतम! क्षायोपशमिक भाव में होता है। इसी तरह बकुश और प्रतिसेवना कुशील, कषाय कुशील का कह देना चाहिए। निर्ग्रन्थ औपशमिक भाव में अथवा क्षायिक भाव में होता है। स्नातक क्षायिक भाव में होता है।

३५—परिमाणद्वार—अहो भगवान्! एक समय में कितने पुलाक होते हैं? हे गौतम! प्रतिपद्यमान (वर्तमान काल में पुलाकपणे को प्राप्त होते हुए) आसरी कदाचित् होते हैं, कदाचित् नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १–२–३, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ। (दो सौ से लेकर नौ सौ तक) होते हैं। पूर्व प्रतिपन्न (जो पहले पुलाकपणे को प्राप्त हुए थे) आसरी कदाचित् होते हैं, कदाचित् नहीं होते हैं, यदि होते हैं तो जघन्य १–२–३, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार होते हैं।

बकुश, और प्रतिसेवना कुशील वर्तमान आसरी कदाचित् होते हैं, कदाचित् नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १–२–३, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ। भूतकाल आसरी नियमा प्रत्येक

सौ करोड़। कषाय कुशील वर्तमान आसरी कदाचित् होते हैं कदाचित् नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३ उत्कृष्ट प्रत्येक हजार। भूतकाल आसरी नियमा * प्रत्येक हजार करोड़ होते हैं।

निर्ग्रन्थ वर्तमान आसरी कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट १६२ (क्षपक श्रेणि के १०८, उपशम श्रेणि वाले ५४=१६२) होते हैं। भूतकाल आसरी कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ होते हैं।

स्नातक वर्तमान आसरी कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट १०८ होते हैं भूतकाल आसरी नियमा प्रत्येक करोड़ होते हैं।

३६-अल्पबहुत्वद्वार-१-सबसे थोड़े निर्ग्रन्थ, (प्रत्येक

* सब संयतों की संख्या प्रत्येक हजार करोड़ (दो हजार करोड़ से नौ हजार करोड़ तक) होती है। किन्तु यहाँ तो कषाय कुशीलों की संख्या प्रत्येक हजार करोड़ बतलाई गई है। यह कैसे घटित होगी? इसका उत्तर यह है कि कषाय कुशील का परिमाण जो प्रत्येक हजार करोड़ कहा है वह दो हजार करोड़ या तीन हजार करोड़ लेना चाहिए। इस संख्या में पुलाक आदि की संख्या मिला देने पर भी सब संयतों की संख्या नौ हजार करोड़ से अधिक नहीं होगी।

सौ पाये जाते हैं), २–उससे पुलाक संख्यातगुणा (प्रत्येक हजार पाये जाते हैं), ३–उससे स्नातक संख्यातगुणा (प्रत्येक करोड़ पाये जाते हैं), ४–उससे बकुश संख्यातगुणा (प्रत्येक सौ करोड़ पाये जाते हैं), ५–उससे प्रतिसेवना कुशील संख्यातगुणा (* प्रत्येक सौ करोड़ पाये जाते हैं)। ६–उससे कषायकुशील संख्यात गुणा (प्रत्येक हजार करोड़ पाये जाते हैं)

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १८७

श्री भगवती सूत्र के २५ वें शतक के ७ वें उद्देशे में 'संजय (संयत)' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

छठे उद्देशे में नियंठा में ३६ द्वार कहे गये हैं, वे ही ३६ द्वार यहाँ 'संजय' में भी होते हैं।

१ प्रज्ञापना द्वार–अहो भगवान्! चारित्र (संयम) कितने प्रकार के कहे गये हैं? हे गौतम! पाँच प्रकार के कहे

---

* बकुश और प्रतिसेवना कुशील का परिमाण प्रत्येक सौ करोड़ कहा गया है तो बकुश से प्रतिसेवना कुशील संख्यातगुणा कैसे हुआ? इसका उत्तर यह है कि बकुश में जो 'प्रत्येक सौ करोड़' कहा गया है उसका मतलब दो सौ करोड़ या तीन सौ करोड़ लेना चाहिए। और प्रतिसेवनाकुशील में जो 'प्रत्येक सौ करोड़' कहा गया है, उसका मतलब चार सौ करोड़, पांच सौ करोड़ छह सौ करोड़ इत्यादि है।

को जघन्य से (दोनों जगह की जघन्य) । ६–जघन्य को उत्कृष्ट से (यहाँ की जघन्य और उत्पत्ति स्थान की उत्कृष्ट) । ७–उत्कृष्ट को ओघिक से (यहाँ की उत्कृष्ट और उत्पत्ति स्थान की ओघिक) । ८–उत्कृष्ट को जघन्य से (यहाँ की उत्कृष्ट और उत्पत्ति स्थान की जघन्य) । ९–उत्कृष्ट को उत्कृष्ट से (यहाँ की और उत्पत्ति स्थान दोनों जगह की उत्कृष्ट) कह देनी चाहिए ।

९–नवमें बोले बीस द्वारों की दो गाथाएं—

उववाय परिमाणं, संघयणुच्चत्तमेव संठाणं ।
लेस्सा दिट्ठी णाणे, अण्णाणे जोग उवओगे ॥ १ ॥
सण्णा कसाय इंदिय, समुग्घाया वेयणा य वेदे य ।
आउ अज्झवसाणा, अणुबंधो कायसंवेहो ॥ २ ॥

यह एक पहली नारकी का—असंज्ञी तिर्यञ्च आकर उत्पन्न होता है । (१) कितनी स्थिति में उत्पन्न होता है ? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट पल के असंख्यातवें भाग की स्थिति में उत्पन्न होता है । (२) परिमाण–एक समय में १, २, ३ यावत् संख्याता असंख्याता उत्पन्न होते हैं । (३) संहनन (संघयण)–एक छेवट्ठ (सेवार्त) पाया जाता है । (४) अवगाहना–जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट १००० योजन की होती है । (५) संस्थान (संठाण)–एक हुण्डक होता है (६) लेश्या–३ कृष्ण, नील, कापोत । (७) दृष्टि–एक मिथ्यादृष्टि । (८) ज्ञान–ज्ञान नहीं होते हैं, मति अज्ञान श्रुत अज्ञान दो अज्ञान होते हैं । (९) योग–वचनयोग और काया योग,

गये हैं- १ सामायिक चारित्र, २ छेदोपस्थापनीय चारित्र, ३ परिहार विशुद्धि चारित्र, ४ सूक्ष्म सम्पराय चारित्र, ५ यथाख्यात चारित्र।

सामायिक चारित्र के दो भेद हैं—इत्तरिए (इत्वर कालिक) और आवकहिए (यावत्कथिक)। इत्वर अर्थात् अल्प काल के चारित्र को इत्वरकालिक चारित्र कहते हैं। पहले और अन्तिम तीर्थंकर भगवान् के तीर्थमें जब तक शिष्य में महाव्रत का आरोपण नहीं किया जाता तब तक उस शिष्य के अल्प काल का सामायिक चारित्र होता है। यह जघन्य ७ दिन, मध्यम चार महीने और उत्कृष्ट छह महीने का होता है।

यावत्कथिक सामायिक चारित्र यावज्जीवन के लिए होता है। यह बीच के बाईस तीर्थंकरों के समय में, महाविदेह क्षेत्र में और सब तीर्थंकरों के छद्मस्थ अवस्था में पाया जाता है।

जिस चारित्र में पूर्व दीक्षा पर्याय का छेद कर महाव्रतों का आरोपण किया जाता है उसे छेदोपस्थापनीय चारित्र कहते हैं। यह चारित्र भरत, ऐरावत क्षेत्र के पहले और अन्तिम तीर्थंकरों के तीर्थ में होता है। इसके दो भेद हैं—सातिचार और निरतिचार। पहले और अन्तिम तीर्थंकर के तीर्थ में किसी साधु की दीक्षापर्याय का छेद किया जाय या नई दीक्षा दी जाय उसे सातिचार छेदोपस्थापनीय चारित्र कहते हैं। इत्वर सामायिक चारित्र वाले शिष्य को जब बड़ी दीक्षा दी जाय तथा

तेईसवें तीर्थंकर के साधु चौबीसवें तीर्थंकर के शासन में आवें उनके चारित्र को निरतिचार छेदोपस्थापनीय चारित्र कहते हैं।

जिस चारित्र में परिहार तप किया जाय उसे परिहार विशुद्धि चारित्र कहते हैं। नौ साधुओं का गण परिहार तप अङ्गीकार करता है। जैसे नौ व्यक्ति नौ नौ वर्ष की उम्रमें दीक्षा लें, बीस वर्ष तक गुरु महाराज के पास ज्ञान पढ़ें, जघन्य नवमे पूर्व की तीसरी आयारवत्थु (आचार वस्तु), और उत्कृष्ट कुछ कम दस पूर्व का ज्ञान पढ़ें, ऐसे नौ साधु गुरुमहाराज की आज्ञा लेकर परिहार विशुद्धि चारित्र अङ्गीकार करते हैं। उनमेंसे पहले छह महीने तक चार साधु तपस्या करते हैं चार साधु वैयावच्च करते हैं और एक साधु व्याख्यान देता है। दूसरी छमाही में तपस्या करने वाले साधु वैयावच्च करते हैं और वैयावच्च करने वाले साधु तपस्या करते हैं। व्याख्यान देनेवाला साधु व्याख्यान देता है। तीसरी छमाही में व्याख्यान देने वाला साधु तपस्या करता है। बाकी आठ साधुओं में से एक साधु व्याख्यान देता है, शेष सात साधु वैयावच्च करते हैं। ग्रीष्म ऋतु में जघन्य एक उपवास, मध्यम बेला (दो उपवास) और उत्कृष्ट तेला (तीन उपवास) तप करते हैं। शीत काल में जघन्य बेला, मध्यम तेला और उत्कृष्ट चौला (चार उपवास) करते हैं। वर्षा काल में जघन्य तेला, मध्यम चौला और उत्कृष्ट पचौला (पांच उपवास) करते हैं। पारणे में आयंबिल करते हैं। इस तरह अठारह महीनों में इस परिहार

तप का कल्प पूर्ण होता है। परिहार तप पूरा होने पर वे साधु या तो इसी कल्प को फिर आरम्भ करते हैं या जिन कल्प धारण कर लेते हैं या वापिस गच्छ में आजाते हैं। यह चारित्र छेदोपस्थापनीय चारित्र वालों के ही होता है, दूसरों के नहीं होता। इसके दो भेद हैं—णिव्विसमाणए (निर्विशमान) और निव्विट्ठकाइए (निर्विष्टकायिक)। जो साधु तप करते हैं, उन्हें णिव्विसमाणए कहते हैं और जो साधु तप कर चुके हों उन्हें निव्विट्ठकाइए कहते हैं।

जिस चारित्र में सूक्ष्मसम्पराय अर्थात् संज्वलन लोभ का सूक्ष्म अंश रहता है उसे सूक्ष्म सम्पराय चारित्र कहते हैं। इसके दो भेद हैं—विशुद्धयमान और संक्लिश्यमान। क्षपक श्रेणि और उपशमश्रेणि पर चढ़ते हुए साधु के परिणाम उत्तरोत्तर शुद्ध रहने से उनका सूक्ष्मसम्पराय चारित्र विशुद्धयमान कहलाता है। उपशमश्रेणि से गिरते हुए साधु के परिणाम संक्लेश युक्त होते हैं। इसलिए उनका सूक्ष्मसम्पराय चारित्र संक्लिश्यमान कहलाता है।

सर्वथा कषाय का उदय न होने से अतिचार रहित चारित्र को यथाख्यात चारित्र कहते हैं, इसके दो भेद हैं—उपशान्त मोह वीतराग (प्रतिपाती) और क्षीणमोह वीतराग (अप्रतिपाती)। क्षीण मोह वीतराग के दो भेद हैं—छद्मस्थ और केवली। केवली के दो भेद—सयोगी केवली और अयोगी केवली।

२-वेद द्वार-अहो भगवान्! सामायिक चारित्र

सवेदी होता है या अवेदी होता है ? हे गौतम ! * सवेदी होता है अथवा अवेदी होता है । सवेदी होता है तो तीन वेद वाला होता है । अवेदी हो तो उपशान्तवेदी या क्षीण वेदी होता है । इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला कह देना चाहिए ।

परिहार विशुद्धि चारित्र वाला सवेदी होता है । उसमें दो वेद पाये जाते हैं—पुरुष वेद और पुरुष नपुंसक वेद (कृत्रिमनपुंसक) ।

सूक्ष्मसम्पराय चारित्र वाला और यथाख्यात चारित्र वाला × अवेदी होता है ।

३ रागद्वार—अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला सरागी होता है या वीतरागी होता है ? हे गौतम ! सरागी होता है । इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाले सरागी होते हैं । (यथाख्यात चारित्र वाला वीतरागी होता है (उपशान्त कषाय वीतरागी या क्षीण कषाय वीतरागी) ।

---

* नवमे गुणस्थान तक सामायिक चारित्र होता है । नवमे गुणस्थान में वेद का उपशम या क्षय होता है । वहां सामायिक चारित्र वाला अवेदी होता है । नवमें से पहलेके गुणस्थानों में सवेदी होता है । यदि सवेदी होता है तो तीन वेद वाला होता है और यदि अवेदी होता है तो उपशान्त वेदी या क्षीण वेदी होता है ।

× अवेदी—उपशान्त वेदी अथवा क्षीणवेदी होता है ।

४-कल्पद्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाले में कितने कल्प पाये जाते हैं ? हे गौतम ! * पांच कल्प पाये जाते हैं। छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि चारित्र वाले में × तीन कल्प पाये जाते हैं-स्थित कल्प, जिन कल्प और स्थविरकल्प। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाले में तीन कल्प पाये जाते हैं-स्थित कल्प, अस्थितकल्प, कल्पातीत।

५-नियंठा द्वार (निर्ग्रन्थ द्वार)-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाले में कितने नियंठा (निर्ग्रन्थ) पाये जाते हैं ? हे गौतम ! चार नियंठा पाये जाते हैं—पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील और कषाय कुशील। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र में भी कह देना चाहिए। परिहार-विशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय में एक नियंठा कषायकुशील पाया जाता है। यथाख्यात चारित्र में दो नियंठा पाये जाते हैं—निर्ग्रन्थ और स्नातक।

६-प्रतिसेवना द्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र

* कल्प पांच हैं-१ स्थित कल्प, २ अस्थित कल्प, ३ जिन कल्प ४-स्थविरकल्प, ५-कल्पातीत।

× बीच के बाईस तीर्थंकरों के तीर्थ में और महाविदेह क्षेत्र के तीर्थंकरों के तीर्थ में अस्थित कल्प होता है। वहां छेदोपस्थापनीय चारित्र नहीं होता है। इसलिये छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि चारित्र वाले में अस्थित कल्प नहीं होता है।

वाला प्रतिसेवी (चारित्र में दोप लगाने वाला) होता है या अप्रतिसेवी (चारित्र में दोप नहीं लगाने वाला) होता है ? हे गौतम ! प्रतिसेवी भी होता है और अप्रतिसेवी भी होता है। यदि प्रतिसेवी होता है तो मूलगुण और उत्तरगुण दोनों में दोप लगाने वाला होता है। अप्रतिसेवी होता है तो दोप नहीं लगाता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का भी कह देना चाहिए। परिहार विशुद्धि चारित्र, सूक्ष्मसम्पराय चारित्र और यथाख्यात चारित्र वाले अप्रतिसेवी होते हैं।

७-ज्ञान द्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाले में कितने ज्ञान होते हैं ? हे गौतम ! दो या तीन या चार ज्ञान होते हैं। इसी तरह छेदोपस्थानीय परिहार विशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय चारित्र वाले भी दो या तीन या चार ज्ञान वाले होते हैं। यथाख्यात चारित्र वाला दो या तीन या चार अथवा केवलज्ञान वाला होता है।

८-श्रुतद्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला कितना श्रुत (ज्ञान) पढ़ता (भणता) है ? हे गौतम ! जघन्य आठ प्रवचनमाता का, उत्कृष्ट १४ पूर्व का ज्ञान पढ़ता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और सूक्ष्मसम्पराय चारित्र का कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धि चारित्र वाला जघन्य नवमे पूर्व की तीसरी आयारवत्थु (आचारवस्तु) का उत्कृष्ट कुछ कम दस पूर्व का ज्ञान पढ़ता है। यथाख्यात चारित्र वाला जघन्य आठ प्रवचन माता का, उत्कृष्ट चौदह पूर्व का ज्ञान पढ़ता है

अथवा श्रुत व्यतिरिक्त (केवली) होता है।

८-तीर्थद्वार-अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाल तीर्थ में होता है या अतीर्थ में (तीर्थ के अभाव में) होत है? हे गौतम! तीर्थ में भी होता है और अतीर्थ में भं होता है। और तीर्थंकर और प्रत्येक बुद्ध में भी होता है इसी तरह सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात चारित्र का भी कह देना चाहिए। छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि चारित्र तीर्थ में ही होता है, अतीर्थ इत्यादि में नहीं होता है।

९-लिङ्गद्वार-सामायिक चारित्र वाला किस लिङ्ग मे होता है? हे गौतम! द्रव्य आसरी तीनों ही लिङ्ग (स्वलिङ्ग अन्य लिङ्ग, गृहस्थ लिङ्ग) में होता है और भाव आसरी स्वलिङ्गमें होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, सूक्ष्मसम्पराय, और यथाख्यात चारित्र का भी कह देना चाहिए। परिहार विशुद्धि चारित्र द्रव्य और भाव दोनों की अपेक्षा स्वलिङ्ग में ही होता है।

१०-शरीर द्वार-अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाले में कितने शरीर होते हैं? हे गौतम! तीन या चार या पांच शरीर पाये जाते हैं। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का भी कह देना चाहिए। परिहार-विशुद्धि, सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात इन तीन चारित्र वालों में तीन शरीर (औदारिक, तैजस, कार्मण) पाये जाते हैं।

११-क्षेत्रद्वार-अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वा

कर्मभूमि में होता है या अकर्मभूमि में ? हे गौतम ! पन्द्रह कर्मभूमि में होता है। छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला भरतादि दस क्षेत्र में होता है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाले पन्द्रह कर्मभूमि में होते हैं। साहरण (संहरण) आसरी ये चार अढ़ाई द्वीप दो समुद्र में होते हैं। परिहार विशुद्धि चारित्र वाला भरतादि दस क्षेत्र में होता है। इसका साहरण नहीं होता है।

१२—काल द्वार—अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला किस काल में होता है ? हे गौतम ! जन्म आसरी अवसर्पिणी काल के तीसरे चौथे पांचवें आरे में होता है, सद्भाव (प्रवृत्ति) आसरी तीसरे चौथे पांचवें आरे में होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का भी कह देना चाहिए। शेष तीन चारित्र वाले जन्म आसरी तीसरे चौथे आरे में होते हैं और सद्भाव आसरी तीसरे चौथे पांचवें आरे में होते हैं। उत्सर्पिणी काल में ये पाँचों चारित्र वाले जन्म आसरी दूसरे, तीसरे, चौथे आरे में होते हैं और सद्भाव आसरी तीसरे चौथे आरे में होते हैं। साहरण आसरी परिहार विशुद्धि चारित्र वाले का साहरण नहीं होता। शेष चार चारित्र वाले चार पलिभागों (१ देवकुरु उत्तर कुरु, २ हरिवास रम्यकवास, ३ हेमवत एरण्यवत, ४ महाविदेह क्षेत्र) में होते हैं। सामायिक, सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात ये तीन चारित्र साहरण आसरी छहों आरोंमें हो सकते हैं। नो अवसर्पिणी नो उत्सर्पिणी काल आसरी

सामायिक सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात ये तीन चारित्र चौथे पलिभाग अर्थात् महाविदेह क्षेत्र में जन्म आसरी होते हैं।

१३—गतिद्वार—अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला मर कर कहाँ जाता है? हे गौतम! जघन्य पहले देव लोक में, उत्कृष्ट पांच अनुत्तर विमान में जाता है। स्थिति जघन्य दो पल्योपम की, उत्कृष्ट तेतीस सागर की होती है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का भी कह देना चाहिए। परिहार विशुद्धि वाला जघन्य पहले देवलोक में, उत्कृष्ट आठवें देवलोक में जाता है। स्थिति जघन्य दो पल्योपम की, उत्कृष्ट १८ सागर की होती है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाले सर्वार्थसिद्ध में जाते हैं, स्थिति अजघन्य अनुत्कृष्ट तेतीस सागर की होती है। तथा यथाख्यात चारित्रवाला मोक्षमें जाता है।

सामायिक और छेदोपस्थापनीय चारित्र वाले यदि आराधक होवें तो पांच पदवी (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग (त्रायस्त्रिंश), लोकपाल, अहमिन्द्र) में से कोई एक पदवी पाता है। परिहार विशुद्धि चारित्र वाला यदि आराधक हो तो चार पदवियों (अहमिन्द्र को छोड़ कर) में से कोई एक पदवी पाता है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाला यदि आराधक हो तो एक 'अहमिन्द्र' की पदवी पाता है *।

१४—संयम स्थान द्वार—अहो भगवान्! सामायिक चारित्र

---

* स्पष्टीकरण निर्ग्रन्थ–नियण्ठा के फुटनोट पृष्ठ ८७–८८ में दिया गया है।

वाले में कितने संयम के स्थान हैं ? हे गौतम ! असंख्याता हैं। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय का भी कह देना चाहिए। यथाख्यात का संयम स्थान एक है।

अल्पबहुत्व—सब से थोड़ा यथाख्यात चारित्र का संयम स्थान, (एक), उससे सूक्ष्म सम्पराय के संयम स्थान असंख्यात गुणा, उससे परिहार विशुद्धि चारित्र के संयम स्थान असंख्यात गुणा, उससे सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय चारित्र के संयम स्थान परस्पर तुल्य असंख्यात गुणा हैं।

१५–संनिकर्ष (निकास) द्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्रके चारित्र पर्याय कितने हैं ? हे गौतम ! अनन्त हैं। इसी तरह यावत् यथाख्यात चारित्र तक कह देना चाहिए। सामायिक चारित्र सामायिक चारित्र परस्पर छट्ठाण वडिया हैं (संख्यात भाग हीन, असंख्यात भाग हीन, अनन्त भाग हीन, संख्यात गुण हीन, असंख्यात गुण हीन, अनन्तगुण हीन। संख्यात भाग अधिक, असंख्यात भाग अधिक, अनन्त भाग अधिक, संख्यातगुण अधिक, असंख्यात गुण अधिक, अनन्त गुण अधिक)। सामायिक चारित्र छेदोपस्थापनीय चारित्र के साथ छट्ठाण वडिया है। परिहार विशुद्धि चारित्र के साथ छट्ठाण वडिया है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र से अनन्त-गुण हीन (अनन्तवें भाग) है।

छेदोपस्थापनीय–छेदोपस्थापनीय परस्पर छट्ठाण वडिया

योग होते हैं। (१०) उपयोग—साकार उपयोग, और
ाकारोपयोग, ये दो उपयोग होते हैं। (११) संज्ञा-४
ाएं। (१२) कषाय-कषाय ४। (१३) इन्द्रिय-इन्द्रिय
। (१४) समुद्घात-समुद्घात ३। (१५) वेदना-साता
[असाता; ये दो वेदनाएं। (१६) वेद-वेद एक नपुंसक।
७) आयुष्य-आयुष्य जघन्य अन्तमुर्हूर्त, उत्कृष्ट करोड़
। (१८) अध्यवसाय—शुभ और अशुभ ये दो
यवसाय। (१९) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है।
०) कायसंवेध-कायसंवेध के दो भेद हैं-भवादेश (भव
अपेक्षा) और कालादेश (काल की अपेक्षा)। भवादेशसे
व की अपेक्षा से)-जघन्य उत्कृष्ट दो भव करता है*।
ादेश से (काल की अपेक्षा से) ९ गम्मा होते हैं-(१)
ा गम्मा ओघिक और ओघिक-अन्तमुर्हूर्त दस हजार वर्ष,
ड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग÷। (२) दूसरा गम्मा—

---

* प्रथम भव में असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय होता है और दूसरे भव
[यिक होता है। वहाँ से निकल कर असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रियपना
नहीं करता है किन्तु संज्ञीपना अवश्य प्राप्त करता है। इसलिए भव
ापेक्षा दो भव का कायसंवेध होता है।

÷ काल की अपेक्षा-जघन्य कायसंवेध असंज्ञी का जघन्य आयुष्य
मुर्हूर्त सहित, नरक का जघन्य आयुष्य दस हजार वर्ष होता है और
ट कायसंवेध-असंज्ञी का उत्कृष्ट आयुष्य करोड़ पूर्व वर्ष सहित
भा का उत्कृष्ट आयुष्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग प्रमाण
है।

। सामायिक चारित्र और परिहार विशुद्धि चारित्र के साथ
ट्ठाण वडिया है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र
अनन्त गुण हीन है।

परिहार विशुद्धि परिहार विशुद्धि परस्पर छट्ठाण वडिया
। सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय के साथ छट्ठाण
डिया है सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र से अनन्त
ण हीन है।

सूक्ष्म सम्पराय सूक्ष्म सम्पराय परस्पर छट्ठाण वडिया है
मायिक, छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि से अनन्तगुण
धिक है। यथाख्यात चारित्र से अनन्तगुण हीन है।

यथाख्यात चारित्र यथाख्यात चारित्र परस्पर तुल्य है।
की चार चारित्रों से अनन्तगुण अधिक है।

अल्प बहुत्व–सब से थोड़े सामायिक चारित्र और छेदो-
स्थापनीय चारित्र के जघन्य चारित्रपर्याय परस्पर तुल्य, उससे
रिहार विशुद्धि के जघन्य चारित्रपर्याय अनन्तगुणा, उससे
रिहार विशुद्धि के उत्कृष्ट चारित्रपर्याय अनन्त गुणा, उससे
सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय चारित्र के उत्कृष्ट
चारित्रपर्याय परस्पर तुल्य अनन्तगुणा, उससे सूक्ष्मसंपराय
के जघन्य चारित्र पर्याय अनन्त गुणा उससे इसी चारित्र के
उत्कृष्ट चारित्र पर्याय अनन्तगुणा, उससे यथाख्यात के
जघन्य उत्कृष्ट चारित्र पर्याय अनन्तगुणा हैं।

१६–योगद्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला

सयोगी होता है या अयोगी ? हे गौतम ! सयोगी होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय परिहार विशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाला भी कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला सयोगी भी होता है और अयोगी भी होता है।

१७-उपयोगद्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र में साकार (ज्ञान) उपयोग पाया जाता है या अनाकार (दर्शन) उपयोग ? हे गौतम ! दोनों उपयोग पाये जाते हैं। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और यथाख्यात चारित्र में भी कह देना चाहिए। सूक्ष्म सम्पराय चारित्र में साकार उपयोग होता है, अनाकार उपयोग नहीं होता है।

१८-कषायद्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र में कितने कषाय होते हैं ? हे गौतम ! संज्वलन कषाय ४, ३, २ पाये जाते हैं। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय का भी कह देना चाहिए। परिहार विशुद्धि में संज्वलन के चारों कषाय पाये जाते हैं। सूक्ष्म सम्पराय में एक कषाय (संज्वलन का लोभ) पाया जाता है। यथाख्यात चारित्र वाला अकषायी (उपशान्तकषायी या क्षीणकषायी) होता है।

१९-लेश्याद्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्रमें कितनी लेश्याएं पाईजाती हैं। हेगौतम ! छह लेश्या पाईजाती हैं।इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्रमें भी कह देनी चाहिए। परिहार विशुद्धिमें तीन विशुद्ध लेश्या पाई जाती हैं। सूक्ष्मसम्पराय चारित्र में एक शुक्ल लेश्या पाई जाती है। यथाख्यात चारित्र में एक शुक्ल-

लेश्या पाई जाती है, अथवा नहीं पाई जाती है (अलेशी) होता है।

२०–परिणामद्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाले में कितने परिणाम पाये जाते हैं ? हे गौतम ! तीन परिणाम पाये जाते हैं–हीयमान, वर्द्धमान, अवस्थित (अवट्ठिया)। हीयमान, वर्द्धमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अवस्थित (अवट्ठिया) की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट सात समय की होती है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि चारित्र का भी कह देना चाहिए। सूक्ष्म सम्पराय चारित्र में * दो परिणाम पाये जाते हैं–वर्द्धमान और हीयमान। दोनों परिणामों की स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। यथाख्यात चारित्र में दो परिणाम पाये जाते हैं–वर्द्धमान और अवस्थित (अवट्ठिया)। वर्द्धमान की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अवस्थित की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट देश ऊणी (कुछ कम) करोड़ पूर्व की होती है।

२१ बन्ध द्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला

---

* सूक्ष्मसम्पराय वाला जब श्रेणि पर चढ़ता है तब वर्द्धमान परिणाम वाला होता है और जब श्रेणि से गिरता है तब हीयमान परिणाम वाला होता है। परन्तु स्वाभाविक रूप से वह स्थिर परिणाम वाला (अवट्ठिया) नहीं होता है।

कितने कर्म बांधता है ? हे गौतम ! सात कर्मों को बांधता है या आठ कर्मों को बांधता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि का भी कह देना चाहिए।

सूक्ष्मसम्पराय वाला छह कर्म बांधता है। यथाख्यात चारित्र वाला तेरहवें गुणस्थान तक एक सातावेदनीय बांधता है और चौदहवें गुणस्थान में अबन्धक होता है।

२२–वेदनद्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला कितने कर्मों को वेदता है ? हे गौतम ! नियमा आठ कर्मों को वेदता है। इसी तरह सूक्ष्मसम्पराय तक कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला सात (मोहनीय कर्म को छोड़ कर) कर्मों को वेदता है अथवा चार (अघाती) कर्मों को वेदता है।

२३–उदीरणा द्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला कितने कर्मों को उदीरता है (उदीरणा करता है) ? हे गौतम ! ७, ८, ६ कर्मों को उदीरता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि चारित्र का भी कह देना चाहिए। सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाला छह कर्मों को उदीरता है (आयुष्य और वेदनीय को छोड़ कर) अथवा पाँच (मोहनीय, आयुष्य, वेदनीय को छोड़ कर) कर्मों को उदीरता है। यथाख्यात चारित्र वाला पाँच (मोहनीय, वेदनीय, आयुष्य को छोड़ कर) कर्मों को उदीरता है अथवा दो (नाम कर्म, गोत्र कर्म) कर्मों को उदीरता है अथवा उदीरणा नहीं करता है।

२४–उवसंपजहण्ण (उपसंपदहान) द्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला सामायिक चारित्र को छोड़ता हुआ किसको प्राप्त करता है? हे गौतम! चार स्थानों में जाता है–छेदोपस्थापनीय में जाता है, सूक्ष्मसम्पराय में जाता है, असंयम में जाता है या संयमासंयम (देशविरति) में जाता है। छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला छेदोपस्थापनीय चारित्र को छोड़ता हुआ पाँच ठिकाणे जाता है–*सामायिक चारित्र में, या परिहार विशुद्धि में, या सूक्ष्म सम्पराय में, या असंयम में, या संयमासंयम (देशविरति) में जाता है।

परिहारविशुद्धि चारित्र वाला परिहारविशुद्धि को छोड़ता हुआ ÷ दो ठिकाणे जाता है–छेदोपस्थापनीय चारित्र में, या असंयम में जाता है।

सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाला सूक्ष्म सम्पराय को छोड़ता

---

* जैसे पहले तीर्थङ्कर के साधु दूसरे अजितनाथ भगवान् के तीर्थ में प्रवेश करते हैं तब छेदोपस्थापनीय चारित्र को छोड़ कर सामायिक चारित्र को अङ्गीकार करते हैं। इस अपेक्षा से ऐसा कहा गया है कि छेदोपस्थापनीय चारित्र को छोड़ता हुआ सामायिक चारित्र को अङ्गीकार करता है।

÷ परिहारविशुद्धि चारित्र वाला परिहारविशुद्धि चारित्र को छोड़ कर यदि वापिस गच्छ में आता है तो छेदोपस्थापनीय चारित्र को अङ्गीकार करता है। यदि काल कर जाता है तो देवगति में जाता है असंयतपणा अङ्गीकार करता है।

हुआ ÷ चार ठिकाणे जाता है–सामायिक चारित्र में, या छेदोपस्थापनीय में, या यथाख्यात में, या असंयम में जाता है। यथाख्यात चारित्र वाला यथाख्यात चारित्र को छोड़ता हुआ * तीन ठिकाणे जाता है–सूक्ष्म सम्पराय चारित्र में, या असंयम में या मोक्ष में जाता है।

२५–संज्ञाद्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला संज्ञा (आहारादि में आसक्ति) युक्त होता है या नोसंज्ञा युक्त होता ? हे गौतम ! संज्ञा युक्त होता है (संज्ञा पावे चारों ही), या नोसंज्ञा युक्त होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि का भी कह देना चाहिये। सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाला नोसंज्ञा युक्त

÷सूक्ष्मसम्पराय वाला चारित्र वाला जब श्रेणि से पड़ता है तो यदि वह पहले सामायिक चारित्र वाला हो तो सामायिक चारित्र को अङ्गीकार करता है और यदि वह पहले छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला हो तो छेदोपस्थापनीय चारित्रको अङ्गीकार करता है। जब वह श्रेणिपर चढ़ता है तब यथाख्यात चारित्रको प्राप्त करता है। यदि काल कर जाता है तो देवगतिमें जाता है असंयम अङ्गीकार करता है।

* यथाख्यात चारित्र वाला यदि श्रेणि से पड़े तो यथाख्यातपणे का त्याग करता हुआ सूक्ष्म सम्परायपणे को प्राप्त करता है और यदि उपशम श्रेणि में (उपशान्तमोह अवस्था में) काल कर जाता है तो देवगति में जाता है असंयतपणे को प्राप्त करता है। यदि स्नातक होता है तो सिद्धगति को प्राप्त करता है।

होता है (इनमें संज्ञा-आहारादि की आसक्ति नहीं होती है)।

२६-आहारक द्वार-अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला आहारक होता है या अनाहारक होता है? हे गौतम! आहारक होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि, और सूक्ष्मसम्पराय का कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला आहारक या अनाहारक होता है।

२७-भवद्वार-अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला कितने भव करता है? हे गौतम! जघन्य एक भव करता है, उत्कृष्ट ८ भव करता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धि, सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाला जघन्य एक भव, उत्कृष्ट तीन भव करता है अथवा यथाख्यात चारित्र वाला उसी भव में मोक्ष जाता है।

२८-आकर्ष (आगरिसे) द्वार-अहो भगवान्! सामायिक चारित्र कितनी बार आता है? हे गौतम! एक भव आसरी जघन्य एक बार, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ बार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो बार, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार बार आता है।

छेदोपस्थापनीय चारित्र एक भव आसरी जघन्य एक बार, उत्कृष्ट १२० बार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो बार, उत्कृष्ट ९६० बार आता है। परिहार विशुद्धि चारित्र एक भव आसरी जघन्य एक बार, उत्कृष्ट तीन बार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो बार, उत्कृष्ट

हुआ ÷ चार ठिकाणे जाता है–सामायिक चारित्र में, या छेदोपस्थापनीय में, या यथाख्यात में, या असंयम में जाता है। यथाख्यात चारित्र वाला यथाख्यात चारित्र को छोड़ता हुआ * तीन ठिकाणे जाता है–सूक्ष्म सम्पराय चारित्र में, या असंयम में या मोक्ष में जाता है।

२५–संज्ञाद्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला संज्ञा (आहारादि में आसक्ति) युक्त होता है या नोसंज्ञा युक्त होता? हे गौतम! संज्ञा युक्त होता है (संज्ञा पावे चारों ही), या नोसंज्ञा युक्त होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि का भी कह देना चाहिये। सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाला नोसंज्ञा युक्त

÷सूक्ष्मसम्पराय वाला चारित्र वाला जब श्रेणि से पड़ता है तो यदि वह पहले सामायिक चारित्र वाला हो तो सामायिक चारित्र को अङ्गीकार करता है और यदि वह पहले छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला हो तो छेदोपस्थापनीय चारित्रको अङ्गीकार करता है। जब वह श्रेणिपर चढ़ता है तब यथाख्यात चारित्रको प्राप्त करता है। यदि काल कर जाता है तो देवगतिमें जाता है असंयम अङ्गीकार करता है।

* यथाख्यात चारित्र वाला यदि श्रेणि से पड़े तो यथाख्यातपणे का त्याग करता हुआ सूक्ष्म सम्परायपणे को प्राप्त करता है और यदि उपशम श्रेणि में (उपशान्तमोह अवस्था में) काल कर जाता है तो देवगति में जाता है असंयतपणे को प्राप्त करता है। यदि स्नातक होता है तो सिद्धगति को प्राप्त करता है।

होता है (इनमें संज्ञा–आहारादि की आसक्ति नहीं होती है)।

२६–आहारक द्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला आहारक होता है या अनाहारक होता है? हे गौतम! आहारक होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि, और सूक्ष्मसम्पराय का कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला आहारक या अनाहारक होता है।

२७–भवद्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला कितने भव करता है? हे गौतम! जघन्य एक भव करता है, उत्कृष्ट ८ भव करता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धि, सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाला जघन्य एक भव, उत्कृष्ट तीन भव करता है अथवा यथाख्यात चारित्र वाला उसी भव में मोक्ष जाता है।

२८–आकर्ष (आगरिसे) द्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र कितनी बार आता है? हे गौतम! एक भव आसरी जघन्य एक बार, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ बार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो बार, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार बार आता है।

छेदोपस्थापनीय चारित्र एक भव आसरी जघन्य एक बार, उत्कृष्ट १२० बार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो बार, उत्कृष्ट ९६० बार आता है। परिहार विशुद्धि चारित्र एक भव आसरी जघन्य एक बार, उत्कृष्ट तीन बार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो बार, उत्कृष्ट

की स्थिति एक जीव आसरी जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट २९ वर्ष कम करोड़ पूर्व वर्ष की होती है। सूक्ष्म सम्पराय की स्थिति एक जीव आसरी अनेक जीव आसरी जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अनेक जीव आसरी सामायिक चारित्र और यथाख्यात चारित्र सव्वद्धा (सर्वकाल में) पाया जाता है। छेदोपस्थापनीय चारित्र अनेक जीव आसरी * जघन्य २५० वर्ष, उत्कृष्ट ५० लाख करोड़ सागर तक होता है। परिहारविशुद्धि चारित्र अनेक

कम नौ वर्ष की उम्र में दीक्षा ग्रहण करे। उसकी दीक्षा पर्याय बीस वर्ष की होवे तब उसको दृष्टिवाद अङ्ग पढ़ने की आज्ञा मिलती है। इसके बाद वह परिहार विशुद्धि चारित्र अङ्गीकार करता है। परिहार विशुद्धि चारित्र की जघन्य मर्यादा १८ महीने की है। इस लिए १८ महीने तक उसका पालन कर फिर परिहार विशुद्धि कल्प को ही अङ्गीकार करे। इसप्रकार निरन्तर यावज्जीवन परिहार विशुद्धि कल्प का ही पालन करे। इसप्रकार परिहार विशुद्धि चारित्र की उत्कृष्ट स्थिति २९ वर्ष कम करोड़ पूर्व वर्ष की होती है।

* उत्सर्पिणी काल में प्रथम तीर्थंकर का तीर्थ २५० वर्ष तक रहता है। तब तक छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है। इस लिए छेदोपस्थापनीय चारित्र का जघन्य काल २५० वर्ष होता है। अवसर्पिणी काल में प्रथम तीर्थङ्कर का तीर्थ ५० लाख करोड़ सागरोपम तक रहता है। तब तक छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है। इसलिए उत्कृष्ट ५० लाख करोड़ सागरोपम तक होना कहा है।

ओधिक और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त दस हजार वर्ष, करोड़ पूर्व द
हजार वर्ष।(३)तीसरा गम्मा ओघिक और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहू
पल का असंख्यातवां भाग, करोड़ पूर्व पल का असंख्यातव
भाग। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक–अन्तर्मुहू
दस हजार वर्ष, अन्तर्मुहूर्त पल का असंख्यातवां भाग। (५
पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त दस हजार वर्ष
अन्तर्मुहूर्त दस हजार वर्ष। (६) छठा गम्मा –जघन्य औ
उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त पल का असंख्यातवां भाग, अन्तर्मुहूर्त पल
का असंख्यातवां भाग। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट औ
ओघिक–करोड़ पूर्व दस हजार वर्ष, करोड़ पूर्व पल के असं
ख्यातवें भाग, । (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य-
करोड़ पूर्व दस हजार वर्ष, करोड़ पूर्व दस हजार वर्ष। (९)
नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—करोड़ पूर्व पल का असं
ख्यातवां भाग, करोड़ पूर्व पल का असंख्यातवां भाग।

पर एक–पहली नारकी से सातवीं नारकी तक–संज्ञी तिर्य
ञ्च और संज्ञी मनुष्य आकर उत्पन्न होते हैं। कितनी स्थिति
में उत्पन्न होते हैं ? पहली नारकी में जघन्य दस हजार वर्ष,
उत्कृष्ट एक सागर। दूसरी नारकी में जघन्य एक सागर, उत्कृष्ट तीन
सागर। तीसरी नारकी में जघन्य तीन सागर, उत्कृष्ट सात सागर।
चौथी नारकी में जघन्य सात सागर, उत्कृष्ट दस सागर, पांचवीं
नारकी में जघन्य दस सागर, उत्कृष्ट सतरह सागर। छठी नारकी
में जघन्य १७ सागर, उत्कृष्ट २२ सागर। सातवीं नारकी में

जीव आसरी * जघन्य १४२ वर्ष, उत्कृष्ट दो करोड़ पूर्व में ५८ वर्ष कम होता है।

---

* परिहार विशुद्धि चारित्र का काल १४२ वर्ष होता है। जैसे कि उत्सर्पिणी काल में प्रथम तीर्थङ्कर के पास सौ वर्ष की आयुष्य वाला मनुष्य परिहारविशुद्धि चारित्र ग्रहण करे और उसके जीवन के अन्तिम समय में उसके पास सौ वर्ष की आयुष्य वाला मनुष्य परिहारविशुद्धि चारित्र स्वीकार करे। उसके बाद फिर कोई उस चारित्र को ग्रहण न कर सके। इस तरह दो सौ होते हैं। परन्तु प्रत्येक के उनतीस उनतीस वर्ष जाने के बाद परिहारविशुद्धि चारित्र की प्राप्ति होती है। इसलिए दो सौ वर्ष में से ५८ वर्ष कम कर देने से १४२ बाकी रहे। इतने वर्ष परिहार विशुद्धि चारित्र का जघन्य काल होता है। चूर्णिकार की व्याख्या भी इसी तरह की है किन्तु वह अवसर्पिणी काल के अन्तिम तीर्थङ्कर की अपेक्षा से है।

परिहारविशुद्धि चारित्र का उत्कृष्ट काल ५८ वर्ष कम दो करोड़ पूर्व का है। जैसे कि अवसर्पिणी काल के प्रथम तीर्थङ्कर के पास करोड़ पूर्व वर्ष की आयु वाला मनुष्य परिहारविशुद्धि चारित्र अङ्गीकार करे और उसके जीवन के अन्तिम समय में उसके पास करोड़ पूर्व की आयु वाला मनुष्य परिहार विशुद्धि चारित्र अङ्गीकार करे। इस तरह दो करोड़ पूर्व वर्ष हुए। इन में से प्रत्येक के उनतीस उनतीस वर्ष कम कर देने से ५८ वर्ष कम दो करोड़ पूर्व परिहारविशुद्धि चारित्र का उत्कृष्ट काल है।

२० अन्तर द्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र व
कितने काल का अन्तर होता है ? हे गौतम ! एक जी
आसरी जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद्ग
परावर्तन का होता है। इसी तरह यथाख्यात तक चारों ह
चारित्र का कह देना चाहिए। अनेक जीव आसरी सामायि
चारित्र और यथाख्यात चारित्र का अन्तर नहीं पड़ता है
छेदोपस्थापनीय चारित्र का जघन्य अन्तर * ६३ हजार वर्ष क
और उत्कृष्ट अन्तर १८ कोड़ाकोड़ी सागरोपम का होता है।

* अवसर्पिणी काल के दुषमा नामक पांचवें आरे तक छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है। इसके बाद छठा आरा जो २१ हजार वर्ष का होता है उसमें छेदोपस्थापनीय चारित्र का अभाव होता है। इसी तरह उत्सर्पिणी काल का पहला और दूसरा आरा जो कि इक्कीस २ हजार वर्ष के होते हैं, उनमें भी छेदोपस्थापनीय चारित्र का अभाव होता है। इस तरह ६३ हजार वर्ष तक छेदोपस्थापनीय चारित्र का जघन्य अन्तर होता है। इसका उत्कृष्ट अन्तर १८ कोडाकोडी सागरोपम का होता है। वह इस प्रकार है-उत्सर्पिणी काल में चौवीसवें तीर्थंकर के तीर्थ तक छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है। इसके बाद उत्सर्पिणी के चौथा, पांचवां, छठा आरा जो कि क्रम से दो, तीन और चार कोडाकोडी सागरोपम के होते हैं, उनमें छेदोपस्थापनीय चारित्र का अभाव होता है। इसी तरह अवसर्पिणी काल का पहला दूसरा और तीसरा आरा, जो कि क्रमशः चार, तीन और दो कोडाकोडी सागरोपम के होते हैं, उनमें छेदोपस्थापनीय चारित्र का अभाव होता है। इसके बाद अवसर्पिणी

* परिहार विशुद्धि चारित्र का जघन्य अन्तर ८४ हजार वर्ष का है और उत्कृष्ट १८ कोडाकोडी सागरोपम का होता है। सूक्ष्म सम्पराय चारित्र का जघन्य अन्तर एक समय का और उत्कृष्ट अन्तर छह महीने का होता है।

२१–समुद्घातद्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र

काल के चौथे आरे में प्रथम तीर्थङ्कर के तीर्थ में छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है। इस लिए छेदोपस्थापनीय चारित्र का उत्कृष्ट अन्तर उपरोक्तरूप से १८ कोडाकोडी सागरोपम का होता है। उत्कृष्ट अन्तर १८ कोडाकोडी सागरोपम में कुछ कम रहता है और जघन्य अन्तरमें ६३ हजार वर्ष से कुछ अधिक होता है किन्तु यह न्यूनाधिकता अल्प होने के कारण यहाँ उसकी विवक्षा नहीं की गई है।

* अवसर्पिणी काल का पांचवां और छठा आरा तथा उत्सर्पिणी काल का पहला और दूसरा आरा ये प्रत्येक इक्कीस २ हजार वर्ष के होते हैं। इनमें परिहारविशुद्धि चारित्र नहीं होता है। इसलिए परिहारविशुद्धि चारित्र का जघन्य अन्तर ८४ हजार वर्ष का होता है। अवसर्पिणी काल में अन्तिम चौवीसवें तीर्थङ्कर के बाद पांचवें आरे में परिहारविशुद्धि चारित्र का काल अल्प है और इसी तरह उत्सर्पिणी काल के तीसरे आरे में परिहारविशुद्धि चारित्र स्वीकार करने के पहले का काल अल्प है, इसलिये उसकी यहाँ पर विवक्षा नहीं की गई है। उत्कृष्ट अन्तर १८ कोडाकोडी सागरोपम का होता है। इसका खुलासा छेदोपस्थापनीय चारित्र की तरह समझ लेना चाहिए।

वाले में कितने समुद्घात पाये जाते हैं? हे गौतम! छह समुद्घात (केवली समुद्घात को छोड़ कर) पाये जाते हैं। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का भी कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धि चारित्र में पहले के तीन समुद्घात पाये जाते हैं। सूक्ष्म सम्पराय में समुद्घात नहीं होता है। यथाख्यात चारित्र में एक केवलीसमुद्घात पाया जाता है।

३२—क्षेत्रद्वार—अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला लोक के संख्यातवें भाग में होता है या असंख्यातवें भाग में होता है? हे गौतम! लोक के असंख्यातवें भाग में होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय का भी कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला * लोक के असंख्यातवें भाग में होता है तथा लोक के असंख्याता भागों में होता है अथवा सम्पूर्ण लोक में भी होता है।

३३—स्पर्शनद्वार—अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला कितने क्षेत्र को स्पर्श करता है? हे गौतम! जितने क्षेत्र में वह रहता है उतने ही क्षेत्र को स्पर्श करता है अर्थात् जितने

---

* यथाख्यात चारित्र वाला केवलिसमुद्घात करते समय जब शरीरस्थ होता है या दण्ड कपाटावस्था में होता है तब लोक के असंख्यातवें भाग में रहता है। मन्थान अवस्था में वह लोक का बहुत भाग व्याप्त कर लेता है थोड़ा सा भाग अव्याप्त रहता है तब वह लोक के असंख्याता भागों में रहता है। जब वह सम्पूर्ण लोक को व्याप्त कर लेता है तब सम्पूर्ण लोक में रहता है।

क्षेत्र की अवगाहना कही गई है, उतने ही क्षेत्र की स्पर्शना जाननी चाहिए। इसी तरह शेष चार चारित्र का भी जान लेना चाहिए।

सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाले लोक के असंख्यातवें भाग को स्पर्शते हैं। यथाख्यात चारित्र वाला लोक के असंख्यातवें भाग को तथा लोक के असंख्याता भागों को अथवा सम्पूर्ण लोक को स्पर्शता है *।

३४-भावद्वार- अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला किस भाव में होता है? हे गौतम! क्षायोपशमिक भाव में होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय चारित्र का भी कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला औपशमिक भाव में अथवा क्षायिक भाव में होता है।

३५-परिमाण द्वार-अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाले एक समय में कितने होते हैं? हे गौतम! वर्तमान आसरी सिय होते हैं और सिय नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार होते हैं। छेदोपस्थापनीय जघन्य एक दो तीन उत्कृष्ट प्रत्येक सौ होते हैं। इसी तरह परिहार विशुद्धि चारित्र का भी कह देना चाहिए। वर्तमान आसरी सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाले सिय होते हैं,

---

* इसका खुलासा क्षेत्र द्वार की तरह जान लेना चाहिए।

सिय नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३-, उत्कृष्ट १६२ (१०८ क्षपक श्रेणि के और ५४ उपशम श्रेणि के)। वर्तमान आसरी यथाख्यात चारित्र वाले सिय होते हैं, सिय नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट १६२ (१०८ क्षपक श्रेणि के, ५४ उपशम श्रेणि के)। होते हैं।

भूत काल आसरी सामायिक चारित्र वाले नियमा प्रत्येक हजार करोड़ होते हैं।

* भूतकाल आसरी छेदोपस्थापनीय चारित्र वाले सिय होते हैं, सिय नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य उत्कृष्ट प्रत्येक सौ करोड़ होते हैं। भूतकाल आसरी परिहार वशुद्धि चारित्र वाले सिय होते हैं, सिय नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार होते हैं। भूतकाल आसरी सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाले सिय होते हैं सिय नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ

---

* छेदोपस्थापनीय चारित्र वालों का उत्कृष्ट परिमाण प्रथम तीर्थङ्कर के तीर्थ आसरी संभवित होता है। परन्तु जघन्य परिमाण बराबर समझ में नहीं बैठता है। क्योंकि पांचवें आरे के अन्त में भरतादि दस क्षेत्रों में प्रत्येक क्षेत्र में दो दो के हिसाब से बीस छेदोपस्थापनीय चारित्र वाले होते हैं। कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि जघन्य परिमाण भी प्रथम तीर्थङ्कर के तीर्थ आसरी ही जानना चाहिए। जघन्य प्रत्येक सौ करोड़ में कुछ कम और उत्कृष्ट प्रत्येक सौ करोड़ से कुछ अधिक होते हैं ऐसा जानना चाहिए। (टीका)

होते हैं। भूतकाल आसरी यथाख्यात चारित्र वाले नियमा प्रत्येक करोड़ होते हैं।

३६-अल्प बहुत्व द्वार-सब से थोड़े * सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाले, (प्रत्येक सौ)। २ उससे परिहार विशुद्धि चारित्र वाले संख्यातगुणा, (प्रत्येक हजार)। ३ उससे यथाख्यात चारित्र वाले संख्यातगुणा (प्रत्येक करोड़)। ४ उससे छेदोपस्थापनीय चारित्र वाले संख्यातगुणा (प्रत्येक सौ करोड़) ५ उससे सामायिक चारित्र वाले संख्यातगुणा (प्रत्येक हजार करोड़) होते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १८८

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के आठवें उद्देशे में

---

* सब से थोड़े सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाले हैं क्योंकि उनका काल थोड़ा है और वे निर्ग्रन्थ नियंठा के तुल्य होने से एक समय में प्रत्येक सौ होते हैं। उनसे परिहार विशुद्धि चारित्र वाले संख्यातगुणा हैं क्योंकि उनका काल सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वालों से अधिक है। ये पुलाक की तरह प्रत्येक हजार होते हैं। उससे यथाख्यात चारित्र वाले संख्यात गुणा हैं क्योंकि उनका परिमाण प्रत्येक करोड़ है। उनसे छेदोपस्थापनीय चारित्र वाले संख्यातगुणा हैं क्योंकि उनका परिमाण प्रत्येक सौ करोड़ है। उनसे सामायिक चारित्र वाले संख्यातगुणा हैं क्योंकि उनका परिमाण कषायकुशील की तरह प्रत्येक हजार करोड़ है। (टीका)।

'नारकी में नेरीये किस तरह उत्पन्न होते हैं' उसका थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१–अहो भगवान्! नेरीया (नैरयिक) नरक में कैसे उत्पन्न होते हैं? हे गौतम! जैसे कोई कूदने वाला पुरुष कूदता हुआ अपनी इच्छा से क्रियासाधन द्वारा भविष्य कालमें पहले स्थान को छोड़ कर अगले स्थान को प्राप्त करता हुआ विचरता है, इसी तरह जीव भी इस भव को छोड़ कर अगले भव को स्वीकार करता है।

२–अहो भगवान्! नरक में उपजने वाले जीवों की कैसी शीघ्र गति होती है? जैसे कोई शिल्प कला में निपुण तीसरे चौथे आरे का उत्पन्न हुआ तरुण बलवान् पुरुष हाथ को संकोचे और पसारे, मुट्ठी को खोले और बन्द करे, आंख को खोले और बन्द करे, क्या इतनी देर लगती है? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे (यह अर्थ समर्थ नहीं)। हाथ को संकोचने और पसारने आदि में असंख्याता समय लगते हैं किन्तु नरक में उपजने वाले को एक समय, दो समय, तीन समय लगते हैं।

३–अहो भगवान्! जीव पर भव का आयुष्य किस प्रकार बांधते हैं? हे गौतम! अध्यवसाय द्वारा, मन वचन काया के योग द्वारा और कर्मबन्ध के हेतु द्वारा जीव परभव का आयुष्य बांधते हैं।

४–अहो भगवान्! उन जीवों की गति कैसे होती है? हे गौतम! आयु का क्षय हो जाने से भव का क्षय हो जाने से,

स्थिति का क्षय हो जाने से उन जीवों की गति होती है।

५—अहो भगवान्! जीव आत्म ऋद्धि (अपनी शक्ति) से उपजता है या परऋद्धि से उपजता है? हे गौतम! आत्म ऋद्धि से उपजता है किन्तु परऋद्धि से नहीं उपजता है।

६—अहो भगवान्! जीव अपने कर्म से उपजते हैं या पर-कर्म से उपजते हैं? हे गौतम! जीव अपने कर्म से उपजते हैं किन्तु पर-कर्म से नहीं उपजते हैं।

७—अहो भगवान्! जीव अपने प्रयोग से उपजते हैं या पर-प्रयोग से उपजते हैं? हे गौतम! अपने प्रयोग से उपजते हैं किन्तु पर-प्रयोग से नहीं उपजते हैं।

इसी तरह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिए। सिर्फ इतनी विशेषता है कि पांच स्थावर में विग्रह गति चार समय की होती है।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १८६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के नवमें उद्देशे में 'भवी नेरीया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! भवी नेरीया नरक में किस तरह उपजता है? हे गौतम! जिस तरह आठवें उद्देशे में सात द्वार

गये हैं, उसी तरह यहाँ भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि 'भवी' शब्द जोड़ देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १६०

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के दसवें उद्देशे में 'अभवी नेरीया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! अभवी नेरीया नरक में किस तरह उपजता है ? हे गौतम ! जिस तरह आठवें उद्देशे में सात द्वार कहे हैं उसी तरह यहाँ भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ 'अभवी' शब्द जोड़ देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १६१

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के ग्यारहवें उद्देशे में 'समदृष्टि नेरीया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! समदृष्टि नेरीया नरक में किस तरह उपजता है ? हे गौतम ! जिस तरह आठवें उद्देशे में सात द्वार कहे हैं उसी तरह यहाँ भी सात द्वार कह देने चाहिए। सिर्फ इतनी विशेषता है कि यहाँ पांच स्थावर छोड़ कर शेष १६ दण्डक में 'समदृष्टि' शब्द जोड़ देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

जघन्य २२ सागर उत्कृष्ट ३३ सागर की स्थिति में उत्पन्न होते हैं। (२) परिमाण—मनुष्य एक समय में १, २, ३ यावत् संख्याता उत्पन्न होते हैं। तिर्यञ्च एक समय में १, २, ३ यावत् असंख्याता उत्पन्न होते हैं किन्तु इतनी विशेषता है कि सातवीं नरक में तीसरे और नवमें गम्मे में संख्याता उत्पन्न होते हैं। (३) संहनन (संघयण)—पहली दूसरी नारकी में ६ संहनन वाला जाता है। तीसरी में ५ संहनन वाला, चौथी में ४ संहनन वाला, पांचवीं में ३ संहनन वाला, छठी में २ संहनन वाला और सातवीं में एक वज्रऋषभ नाराच संहनन वाला जीव जाता है।

(४) अवगाहना—तिर्यञ्च जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट १००० योजन की अवगाहना वाला जाता है। पहली नारकी में जाने वाले मनुष्य की अवगाहना जघन्य प्रत्येक अंगुल की होती है और दूसरी से सातवीं नारकी तक जघन्य प्रत्येक हाथ की, उत्कृष्ट ५०० धनुष की होती है। (५) संस्थान (संठाण)—छही संस्थान वाला जीव सातों नारकियों में जाता है। (६) लेश्या—जाने वालों में छह छह लेश्या पाई जाती है (७) दृष्टि—जानेवालों में दृष्टि तीन तीन होती है। (८) ज्ञान—जानेवाले तिर्यंच में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना, जानेवाले मनुष्य में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। (९) योग—जानेवालों में योग तीन तीन। (१०) उपयोग—जानेवालों में उपयोग दो दो साकार उपयोग और निराकार उपयोग।

थोकड़ा नं० ११२

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के बारहवें उद्देशे में 'मिथ्यादृष्टि नेरीया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! मिथ्यादृष्टि नेरीया नरक में किस तरह उपजता है ? हे गौतम ! जिस तरह आठवें उद्देशे में सात द्वार कहे हैं, उसी तरह यहाँ भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ 'मिथ्यादृष्टि' शब्द जोड़ना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

श्री सेठिया जैन ग्रन्थमाला के प्रकाशनों की सूची

श्री जैन सिद्धान्त बोल संग्रह भाग १ से ७, प्रत्येक भाग का	३॥)
आचारांग सूत्र प्र.श्रु. सार्थ	३॥)
प्रश्न व्याकरण सूत्र सार्थ	३।≈)
उत्तराध्ययन सूत्र सार्थ	४॥)
उत्तराध्ययन सूत्र अ.१ से ४ सार्थ	१)
उत्तराध्ययन सूत्र (ब्लॉक)	॥≈)
दशवैकालिक सूत्र (ब्लॉक)	।)
नमिपव्वज्जा सार्थ	।)
आर्हत प्रवचन	१।)
जैन सिद्धान्त कौमुदी	१॥)
अर्धमागधी धातु रूपावलि	।≈)
,, शब्द रूपावलि	─)
पन्नवणासूत्र के थोकड़ों का भाग १ से ३, प्रत्येक का	॥)
भगवती सूत्र के थोकड़ों का भाग १	॥)
,, ,, ,, भाग २	॥≈)
,, ,, ,, भाग ३	॥≈)
,, ,, ,, भाग ४	॥≈)
,, ,, ,, भाग ५	॥≈)
,, ,, ,, भाग ६	)८२
,, ,, ,, भाग ७	)६२
,, ,, ,, भाग ८	)८५
,, ,, ,, भाग ९	)
पचीस बोलका थोकड़ा	)।६
अट्ठाणु बोलका बासठिया	─)।
सरल बोध सार संग्रह	॥─)
धर्म बोध संग्रह	≈)
प्रस्तार रत्नावली	३॥)
सामायिक सूत्र सार्थ	)।६
सामायिक प्रतिक्रमणसूत्र मूल	)।६
प्रतिक्रमण सूत्र सार्थ	)३।
आनुपूर्वी	)४
कर्त्तव्य कौमुदी दूसरा भाग	।─)
सूक्ति संग्रह	।)
उपदेश शतक	≈)॥
मुक्ति के पथ पर	१)
अपरिचिता	१)
हिन्दी बाल शिक्षा छठा भाग	॥≈)
शिक्षा संग्रह पहला भाग	≡)
शिक्षासार संग्रह	।)
संक्षिप्त कानून संग्रह	।≈)
मांगलिक स्तवनसंग्रह २ रा भाग	≡)
बृहदालोयणा	─)।
जैन विविध ढ़ाल संग्रह	।॥)
अंजना सती का रास	।)
गुण विलास	।॥)
जैनागम तत्त्व दीपिका	॥)
श्रीलाल नाममाला	।)
वृत्तबोध	≡)
मुहावरों का जेबी कोष	।॥)

पता—अगरचन्द भैरोंदान सेठिया जैन पारमार्थिक संस्था, बीकानेर

श्री सेठिया जैन ग्रन्थमाला पुष्प नं० १३८

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों का

नवम् भाग

(छब्बीसवें शतक से इकतालीसवें शतक तक)

(थोकड़ा संख्या १६३ से २०८ तक)

अनुवादक—

पं० घेवरचन्द्र बाँठिया 'वीरपुत्र'

प्रकाशक—

अगरचन्द भैरोंदान सेठिया

बीकानेर

प्रथमावृत्ति १००० | श्रावण वदि ६ वीर सं० २४८८ वि० सं० २०१६ | मूल्य ६२ नये पैसे

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	१६	वंधक भी होते हैं	वंधक भी होते हैं और अवं- धक भी होते हैं
६	११	वाका	बाकी
८	१६	चाहए	चाहिए
८	२०	भागे	भोगे
६	१६	सिर्फ	सिर्फ
१४	११	भागे	भोगे
१५	१५	१ ना संज्ञा	१ नो संज्ञा
१५	१६	पापकम	पापकर्म
२१	५	अयागी	अयोगी
३५	११	हैं	हैं
४४	१	क हैं	के हैं
४४	१०	चार समुद्घात	समुच्चय एके न्द्रिय में चार समुद्घात
६५	१६	पूण	पूर्ण
६८	११	७ उदीरण	८ उदीरण
६६	१०	अगुल	अंगुल
७४	२०	तियंञ्च	तिर्यञ्च

उपरोक्त अशुद्धियों के सिवाय 'ए' की मात्रा पतली होने से बहुत जगह अनुस्वार की तरह दिखती है और इ ई की मात्राएं भी पूरी साफ नहीं उठी हैं। किन्तु हमने ऐसी अशुद्धियां शुद्धिपत्र में नहीं निकाली हैं क्योंकि पूर्वापर का ख्याल रखने से पढने में भूल होने की संभावना नहीं रहती है।

अनुक्रमणिका

दो शब्द

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों का नववां भाग पाठकों की सेवा में उपस्थित करते हुए हमें बड़ा हर्ष तथा संतोष होता है। इस भाग में श्री भगवती सूत्र के छब्बीसवें शतक से इकतालीसवें शतक तक के थोकड़े (थोकड़ा की संख्या १६३ से २०८ तक) संगृहीत हैं। यह तो पाठकों को विदित ही है कि श्री भगवती सूत्र का द्रव्यानुयोग संबंधी विषय अतिशय गहन और दुरूह है। शास्त्रीय विषय को सरल और सुबोध भाषा में यथार्थ रूप से विवेचन करने का हमारा प्रयास रहा है। इसीलिए थोकड़े सीखने सिखाने वालों में प्रचलित प्राकृत भाषा के शब्दों का प्रयोग करने में भी हमने संकोच नहीं किया है। हम अपने प्रयास में कहाँ तक सफल हुए हैं यह निर्णय करना पाठकों का काम है। पर हम अपने सुज्ञ पाठकों से यह निवेदन करना आवश्यक समझते हैं कि वे इस भाग में विषय विवेचन में यदि कहीं त्रुटि या किसी प्रकार की कमी अनुभव करें तो हमें सूचित करने की कृपा करें ताकि हम अपनी भूल सुधार लें तथा नई आवृत्ति में आवश्यक संशोधन किया जा सके।

पहले के आठ भागों की तरह इस भाग के संकलन संशोधन में भी श्रीमान् परम प्रतापी पूज्य श्री १००८ श्री गणेशीलाल जी महाराज साहेब के सुशिष्य शास्त्र मर्मज्ञ पंडित रत्न स्थविर मुनि श्री पन्नालालजी महाराज साहेब का पूर्ण सहयोग रहा है। बल्कि कहना तो यह चाहिए कि यह आपकी महती कृपा और परिश्रम का ही फल है कि हम पाठकों की सेवा में इस अन्तिम भाग को इस रूप में प्रस्तुत कर सके हैं। अतः हम पूज्य मुनि श्री के प्रति विनम्र भाव से कृतज्ञता प्रगट करते हैं।

थोकड़ों का अनुवाद एवं संपादन श्रीमान् पं० घेवरचन्द्र जी बाँठिया 'वीरपुत्र' ने किया है अतः हम उनके प्रति भी आभार प्रदर्शित करते हैं।

निवेदक :—

जेठमल सेठिया

थोकड़ा नं १६३

श्री भगवती सूत्र के २६ वें शतक के ११ उद्देशों में ४७ बोलों की 'बन्धी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

जीवा य लेस्स पक्खिय दिट्ठि, अन्नाण नाण सण्णाओ
वेय कसाय उवओग जोग, एक्कारस वि ठाणा ॥१॥

अर्थ—१ समुच्चय जीव, ८ लेश्या (६ लेश्या, १ सलेशी, १ अलेशी), २ पाक्षिक (कृष्ण पाक्षिक, शुक्ल पाक्षिक), ३ दृष्टि (सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि), ४ अज्ञान (३ अज्ञान, १ समुच्चय अज्ञान), ६ ज्ञान (५ ज्ञान, १ समुच्चय ज्ञान), ५ संज्ञा (४ संज्ञा, १ नोसंज्ञा), ५ वेद (३ वेद, १ सवेदी, १ अवेदी), ६ कषाय (४ कषाय १ सकषायी, १ अकषायी), ५ योग (मनयोग, वचनयोग काययोग, सयोगी, अयोगी), २ उपयोग (साकार उपयोग, अनाकार उपयोग), ये सब ४७ बोल हुए।

१—नारकी में ३५ बोल पाये जाते हैं—(समुच्चय जीव का १, लेश्या का ४, पक्ष का २, दृष्टि का ३, ज्ञान का ४, अज्ञान का ४, संज्ञा का ४, वेद का २, कषाय का ५, योग का ४, उपयोग का २, ये ३५ बोल)।

भवनपति वाणव्यन्तर में ३७ बोल पाये जाते हैं (नारकी

में कहे हुए ३५ बोलों में एक लेश्या और एक वेद-नपुंसक वेद इनमें नहीं है पर स्त्री वेद व पुरुष वेद है ये २ बोल बढ गये)। ज्योतिषी देवों में और पहले दूसरे देवलोक में ३४ बोल पाये जाते हैं। (ऊपर कहे हुए ३७ में से ३ लेश्या घट गई)। तीसरे देवलोक से बारहवें देवलोक तक ३३ बोल पाये जाते हैं। (ऊपर कहे हुए ३४ में से एक वेद (स्त्री वेद) कम हो गया)। नवग्रैवेयक में ३२ बोल पाये जाते हैं (३३ में से एक दृष्टि (मिश्र दृष्टि) कम हो गई। पांच अनुत्तर विमान में २६ बोल पाये जाते हैं (ऊपर कहे हुए ३२ में से १ पक्ष (कृष्णपक्ष) १ दृष्टि (मिथ्या दृष्टि) ४ अज्ञान, ये ६ बोल कम हो गये)। पृथ्वी पानी वनस्पति में २७ बोल पाये जाते हैं (समुच्चय जीव का १, लेश्या के ५, पक्ष के २, दृष्टि का १ (मिथ्या दृष्टि) अज्ञान के ३, संज्ञा के ४, वेद के २, कषाय के ५, योग के २, उपयोग के २ ये सब २७ हुए)। तेउ वायु में २६ बोल पाये जाते हैं (ऊपर कहे हुए २७ में से एक लेश्या कम हो गई)। तीन विकलेन्द्रिय में ३१ बोल पाये जाते हैं (ऊपर के २६ में १ दृष्टि-समदृष्टि, ३ ज्ञान के और १ योग-वचन का, ये ५ बोल बढ़गये)। तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में ४० बोल पाये जाते हैं (४७ में से १ अलेशी, २ ज्ञान (मनपर्यय और केवल) १ नोसंज्ञा, १ अवेदी, १ अकषायी, १ अयोगी, ये ७ बोल कम हो गये)। मनुष्य में ४७ बोल पाये जाते हैं।

अहो भगवान् ! क्या जीवों ने पाप कर्म बांधा, बांधते हैं,

(११) संज्ञा-जानेवालों में संज्ञा चार चार। (१२) कषाय-जानेवालों में कषाय चार चार। (१३) इन्द्रिय जानेवालों में इन्द्रिय पांच पांच। (१४) समुद्घात-जानेवाले तिर्यंचमें ५ और मनुष्य में ६। (१५) वेदना-जानेवालों में वेदना दोनों साता और असाता। (१६) वेद-पहली से छठी नारकी तक तीन तीन वेद वाले जाते हैं सातवीं में दो वेद (पुरुषवेद, पुरुष नपुंसक वेद) वाले जाते हैं। (१७) आयुष्य-जानेवाले तिर्यञ्चका जघन्य अन्तमुर्हूर्त, पहली नारकी में जाने वाले मनुष्य का जघन्य प्रत्येक मास, दूसरी से सातवीं तक जघन्य प्रत्येक वर्ष, उत्कृष्ट मनुष्य तिर्यंच का करोड़ पूर्व का होता है। (१८) अध्यवसाय-जानेवालों में शुभ और अशुभ दोनों होते हैं। (१६) अनुबन्ध-आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। (२०) कायसंवेध-कायसंवेध के दो भेद-भवादेश (भव की अपेक्षा), कालादेश (काल की अपेक्षा)। भवादेश से-तिर्यञ्च और मनुष्य पहली नारकी से छठी नारकी तक जघन्य दो भव करते हैं और उत्कृष्ट ८ भव करते हैं। सातवीं नारकी में तिर्यंच छह गम्मा (तीजा छठा नवमा टल्या) आसरी जाने आसरी तीन भव सात भव करते हैं और आने आसरी दो भव छह भव करते हैं। तीन गम्मा (तीजा छठा नवमा) जाने आसरी तीन भव पांच भव करते हैं और आने आसरी तीन गम्मा (सातवां आठवां नवमा) दो भव चार भव करते हैं। मनुष्य सातवीं नारकी के दो भव करता है। कालादेश (काल की अपेक्षा) से ६ गमे कह देने

धंगे १—हे गौतम ! जीवों में बन्ध आसरी ४ भांगे होते
—* १ कितनेक जीवों ने पाप कर्म बांधा था, बांधते हैं,
धंगे। २ कितनेक जीवों ने पाप कर्म बांधा था, बांधते हैं,
हीं बांधेंगे। ३ कितनेक जीवों ने पाप कर्म बांधा था, अब
हीं बांधते हैं, आगे बांधेंगे। ४ कितनेक जीवों ने पाप कर्म
ांधा था, अब नहीं बांधते हैं, आगे नहीं बान्धेंगे।

४७ बोलों में से २० बोलों में (१ समुच्चय जीव,
१ †सलेशी, १ शुक्लेशी, १ × शुक्लपक्षी,

---

* इनमें से पहला भांगा अभव्य की अपेक्षा से है। दूसरा भांगा उन जीवों की अपेक्षा से है जो क्षपक श्रेणी को प्राप्त होनेवाले हैं। तीसरा भांगा उन जीवों की अपेक्षा से है जिन्होंने मोहनीय कर्म का उपशम किया है अर्थात् जो उपशम श्रेणी को प्राप्त हुए हैं। चौथा भांगा उन जीवों की अपेक्षा से है जिन्होंने मोहनीय कर्म का क्षय कर दिया है।

† सलेशी जीव में चार भांगे होते हैं—क्योंकि शुक्ल लेश्यावाले जीव पाप कर्म के बंधक भी होते हैं। कृष्णादि पाँच लेश्या वालों में पहले के दो भागें ही पाये जाते हैं। क्योंकि उनमें वर्तमान काल में मोहनीय रूप पाप कर्म का क्षय या उपशम नहीं है, इसलिए उनमें अन्त के दो भांगे नहीं होते हैं।

× जिन जीवों का संसार परिभ्रमण अर्द्ध पुद्गल परावर्तन से अधिक बाकी है उनको कृष्णपाक्षिक कहते हैं और जिन जीवों का संसार परिभ्रमण अर्द्ध पुद्गल परावर्तन से अधिक बाकी नहीं है किन्तु अर्द्ध पुद्गल परावर्तन में ही मोक्ष चले जावेंगे उन्हें शुक्ल पाक्षिक कहते हैं। कृष्ण पाक्षिक में पहले के दो भांगे ही होते हैं कृष्णपाक्षिक में दूसरा भांगा कृष्णपाक्षिक से शुक्लपाक्षिक बननेवा

१ ÷समदृष्टि, १ सज्ञानी, १ मतिज्ञानी, १ श्रुत ज्ञानी, १ अवधिज्ञानी, १ मनः पर्यय ज्ञानी, १ *नो संज्ञा, १ अवेदी, १ ×सकषायी, १ लोभकषायी, १ सयोगी, १ मनयोगी, १ वचनयोगी,

---

जीव की अपेक्षा घटित होता है क्योंकि उस जीवने कृष्णपाक्षिक पणे बांधा था, बाँधता है पर भविष्य में शुक्लपाक्षिक हो जाने से कृष्णपाक्षिक पणे नहीं बाँधेगा। शुक्लपाक्षिक में चार भांगे पाये जाते हैं —पहला भाँगा तो नववें गुणस्थान में दो समय बाकी रहने तक है। दूसरा भांगा—नववें गुणस्थान में एक समय बाकी रहने तक है। तीसरा भांगा उपशम श्रेणी में गिरने की अपेक्षा से है। चौथा भांगा क्षपकपणा की अपेक्षा से है।

÷सम्यग्दृष्टि में शुक्लपाक्षिक की तरह चार भांगे पाये जाते हैं।

*आहार आदि की संज्ञा-आसक्ति वाले जीवों में क्षपकपणा और उपशमकपणा नहीं होता है। इसलिए उनमें पहला और दूसरा ये दो भांगे ही पाये जाते हैं। नोसंज्ञा अर्थात् आहारादि की आसक्ति रहित जीवों में मोहनीय कर्म का क्षय तथा उपशम सम्भव होने से चारों भांगे पाये जाते हैं।

× सकषायी में चार भांगे होते हैं। पहला भांगा अभव्य जीव की अपेक्षा से होता है। दूसरा भांगा उस भव्य जीव की अपेक्षा से होता है जिसका मोहनीय कर्म क्षय होनेवाला है। तीसरा भांगा उपशमक सूक्ष्म सम्पराय की अपेक्षा से है। चौथा भांगा क्षपक सूक्ष्म सम्पराय की अपेक्षा से है। इसी तरह लोभकषायी में चार भांगे समझने चाहिए। क्रोध कषायी में पहला और दूसरा ये दो भांगे ही पाये जाते हैं। पहला भांगा अभव्य की अपेक्षा से है और दूसरा भांगा भव्य विशेष की अपेक्षा से है। तीसरा और चौथा भांगा नहीं होता क्योंकि जब क्रोध का उदय होता है तब अबन्धकपणा नहीं होता है।

१ काययोगी १ साकार उपयोग, १ अनाकार उपयोग= २०) समुचय पाप और मोहनीय कर्म में समुच्चय जीव मनुष्य आसरी चारों भागें पाये जाते हैं। नवमे गुणस्थान के दो समय बाकी रहते एक पहला भांगा पाया जाता है एक समय बाकी रहते एक दूसरा भांगा पाया जाता है। उपशम मोह में (ग्यारहवें गुणस्थान में) एक तीसरा भांगा पाया जाता है। क्षीण मोह में (बारहवें गुणस्थान में) एक चौथा भांगा पाया जाता है। १ अलेशी, १ अयोगी, १ केवली में एक चौथा भांगा पाया जाता है।

अकषायी में तीसरा और चौथा ये दो भांगे पाये जाते हैं। ये सब २४ बोल हुए। बाकी २३ बोलों में पहला और दूसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। बाकी २३ दण्डक में जितने-जितने बोल पाये जाते हैं पहला और दूसरा ये दो-दो भांगे पाये जाते हैं।

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, नाम, गोत्र, अन्तराय इन पांच कर्मों में समुच्चय जीव, मनुष्य आसरी १८ बोलों में (ऊपर २० कहे उनमें से सकषायी और लोभकषायी ये दो बोल छोड़ कर) चारों भांगे पाये जाते हैं। दसवें गुणस्थान के दो समय बाकी रहते तो एक पहला भांगा पाया जाता है। एक समय बाकी रहते एक दूसरा भांगा पाया जाता है। उपशम मोह (ग्यारहवें गुणस्थान) में एक तीसरा भांगा पाया जाता है।

क्षीणमोह (बारहवें गुणस्थान) में एक चौथा भांगा पाया जाता है। अलेशी, अयोगी, केवली में एक चौथा भांगा पाया जाता है। अकषायी में तीसरा और चौथा ये दो भांगे पाये जाते हैं। बाकी २५ बोलों में पहला और दूसरा ये दो दो भांगे पाये जाते हैं। बाकी २३ दण्डक में जिसमें जितने-जितने बोल पाये जाते हैं उन सब में पहला और दूसरा ये दो दो भांगे पाये जाते हैं। जैसे नारकी में ३५ बोल पाये जाते हैं उनमें पहला दूसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। इसी तरह भवनपति वाणव्यन्तर में ३७ बोलों में पहला दूसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। इस तरह बाकी सब दण्डक में कह देना चाहिए।

वेदनीय कर्म *समुच्चय जीव मनुष्य आसरी ४२ बोलों में

---

* वेदनीय कर्म में पहला भांगा अभव्य की अपेक्षा होता है। तथा तेरहवें गुणस्थान में दो समय बाकी रहते भी पहला भांगा पाया जाता है। जो भव्य जीव मोक्ष जानेवाले हैं उनकी अपेक्षा से दूसरा भांगा होता है तथा तेरहवेंगुणस्थान में एक समय बाकी रहते भी दूसरा भांगा पाया जाता है। तीसरा भांगा सम्भव नहीं है क्योंकि जो जीव एक बक्त वेदनीय कर्म के अबन्धक हो जाते हैं वे फिर कभी भी वेदनीय कर्म का बन्ध नहीं करते हैं। चौथा भांगा अयोगी केवली के पहले समय की अपेक्षा से होता है।

(१ समुच्चय जीव, २ *सलेशी, ३ †शुक्ल लेशी, ४ शुक्लपक्षी, ५ समदृष्टि, ६ सज्ञानी, ७ केवल ज्ञानी, ८ नोसंज्ञा, ९ अवेदी, १० अकषायी, ११ साकार उपयोग, १२ अनाकार उपयोग) तीन भांगे पाये जाते हैं—पहला, दूसरा और चौथा। तेरहवें गुणस्थान के दो समय बाकी रहते पहला भांगा पाया जाता है और एक समय बाकी रहते दूसरा भांगा पाया जाता है और चौदहवें गुणस्थान में चौथा भांगा पाया

---

* सलेशी जीव में पूर्वोक्त हेतु से तीसरे भांगे को छोड़कर बाकी तीन भांगे पाये जाते हैं। किन्तु कोई शंका करते हैं कि चौथा भांगा (पहले बान्धा था, अब नहीं बांधता है और आगे भी नहीं बान्धेगा) सलेशी में घटित नहीं हो सकता है। यह भांगा तो अलेशी (लेश्या रहित) अयोगी में ही घटित हो सकता है। क्योंकि लेश्या तेरहवें गुणस्थान तक होती है और वहाँ तक वेदनीय कर्म का बन्ध भी होता है।

इसका समाधान इस प्रकार है कि इस सूत्र के वचन से आयोगी अवस्था के प्रथम समय में घन्टा लाला न्याय (जैसे घन्टा बजा चुकने पर भी उसके झणकार की आवाज पीछे तक रहती है, उसी तरह) से परम शुक्ल लेश्या सम्भवित है। इसीलिए सलेशी में चौथा भांगा घटित हो सकता है।

† शुक्ल लेश्या वाले में सलेशी की तरह तीन भांगे होते हैं। शैलेशी अवस्था में रहे हुए केवली और सिद्ध लेश्या रहित होते हैं। इनमें सिर्फ एक चौथा भांगा ही होता है।

कृष्णादि पांच लेश्या वाले जीवों में और कृष्ण पाक्षिक जीवों में अयोगीपने का अभाव है। इसलिए इनमें पहले के दो भांगे ही पाये जाते हैं। शुक्ल पाक्षिक में अयोगीपना हो सकता है, इसलिए उसमें पहला दूसरा और चौथा ये तीन भांगे पाये जाते हैं।

जाता है। अलेशी और अयोगी में सिर्फ एक चौथा भांगा पाया जाता है। बाकी ३३ बोलों में पहला और दूसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। २३ दण्डक में जिसमें जितने-जितने बोल पाये जाते हैं, उन सब में पहला और दूसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं।

आयुष्य कर्म आसरी समुच्चय जीव के ४७ में से ६ बोलों में इस प्रकार भांगे पाये जाते हैं—कृष्ण पक्षी में पहला और तीसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। मिश्रदृष्टि, अवेदी, अकषायी इन तीन बोलों में तीसरा और चौथा ये दो भांगे पाये जाते हैं। अलेशी, अयोगी, केवलज्ञानी, इन तीन बोलों में एक चौथा भांगा पाया जाता है। मनः पर्ययज्ञान, और नोसंज्ञा इन दो बोलों में पहला, तीसरा और चौथा ये तीन भांगे पाये जाते हैं। बाकी ३८ बोलों में चारों भांगे पाये जाते हैं। नारकी में ३५ बोल पाये जाते हैं। उनमें से कृष्णलेशी और कृष्णपक्षी में पहला और तीसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। मिश्र दृष्टि में तीसरा और चौथा ये दो भांगे पाये जाते हैं। बाकी ३२ बोलों में चारों ही भांगे पाये जाते हैं। भवनपति से लेकर नवग्रैवेयक तक जितने-जितने बोल पाये जायँ उतने उतने कह देने चाहिए। कृष्णपक्षी में पहला और तीसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। मिश्रदृष्टि में (भवनपति से लेकर बारहवें देवलोक तक) तीसरा और चौथा ये दो भांगे पाये जाते हैं। बाकी बोलों में चारों ही भांगे पाये जाते हैं। चार

अनुत्तर विमान के देवों में चारों ही भांगे पाये जाते हैं, सर्वार्थ सिद्ध के देवों में दूसरा, तीसरा और चौथा ये तीन भांगे पाये जाते हैं। पृथ्वी, पानी, वनस्पति के २७ बोलों में से तेजोलेश्या में एक तीसरा भांगा पाया जाता है। कृष्णपक्षी में पहला और तीसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। बाकी २५ बोलों में चारों ही भांगे पाये जाते हैं। तेउकाय और वायुकाय में २६ बोल होते हैं, उन सब में पहला और तीसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। तीन विकलेन्द्रिय में ३१ बोल होते हैं। उनमें से समदृष्टि, सज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी इन चार बोलों में सिर्फ एक तीसरा भांगा पाया जाता है। बाकी २७ बोलों में पहला और तीसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं।

तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में ४० बोल होते हैं—उनमें से कृष्णपक्षी में पहला और तीसरा ये दो भांगे पाये जाते हैं। मिश्रदृष्टि में तीसरा और चौथा ये दो भांगे पाये जाते हैं। समदृष्टि, सज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी इन पाँच बोलों में पहला, तीसरा और चौथा ये तीन भांगे पाये जाते हैं बाकी ३३ बोलों में चारों भांगे पाये जाते हैं।

मनुष्य में ४७ बोल होते हैं, उनमें से अलेशी, केवलज्ञानी और आयोगी इन तीन बोलों में सिर्फ एक चौथा भांगा पाया जाता है। मिश्रदृष्टि, अवेदी, अकषायी, इन तीन बोलों में तीसरा और चौथा ये दो भांगे पाये जाते हैं। समदृष्टि, सज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्यय-

ज्ञानी, नोसंज्ञा इन सात बोलों में पहला, तीसरा और चौथा ये तीन भांगे पाये जाते हैं। कृष्णपक्षी में पहला और तीसरा ये दो भांगे पाये जाते है। बाकी ३२ बोलों में चारों ही भांगे पाये जाते हैं।

यह पहला ओघिक उद्देश्य सम्पूर्ण हुआ।

अब ग्यारह उद्देशों के नाम कहे जाते हैं—१ ओघिक (सामान्य)। २ अणंतरोववन्नए—अनन्तरोपपन्न (एक समय के उत्पन्न हुए), ३ परंपरोववन्नए—परम्परोपपन्न (जिनको उत्पन्न हुए बहुत समय हो गया है), ४ अनन्तरावगाढ़ (पहले समय के अवगाहे हुए), ५ परम्परावगाढ (बहुत समय के अवगाहे हुए), ६ अनन्तराहारक (पहले समय के आहारक), ७ परम्पराहारक (बहुत समय के आहारक), ८ अनन्तरपर्याप्तक (पहले समय के पर्याप्तक), ९ परम्पर पर्याप्तक (बहुत समय के पर्याप्तक), १० चरम (उसी भव में मोक्ष जानेवाले), ११ अचरम (बहुत भवों के बाद मोक्ष जानेवाले अथवा नहीं जानेवाले)।

दूसरा उद्देशा—अणंतरोववन्नए, चौथा उद्देशा—अनन्तरावगाढ, छठा उद्देशा—अनन्तराहारक, आठवां उद्देशा—अनन्तर पर्याप्तक—इन चार उद्देशों में नारकी से लेकर बारहवें देवलोक तक ४७ बोल की बन्धी के थोकड़े में जितने २ बोल पाया जाना बताया है उनमें तीन तीन बोल कम कर देना। (ओघिक में ४७ बोल कहे गये हैं, उनमें से मिश्रदृष्टि, मन-

योगी, वचनयोगी ये तीन बोल कम कर देने चाहिए)। क्योंकि ये पहले समय के उत्पन्न हुए हैं इसलिये इनमें उक्त तीन बोल नहीं पाये जाते। नवग्रैवेयक में ३० बोल पाये जाते हैं। ३२ में से मन वचन जोग कम हुए। और पांच अनुत्तर विमान में २४ बोल पाये जाते हैं। इनमें भी मन योग वचन योग कम हुए।

पांच स्थावर में, ओघिक उद्देशे में जितने बोल कहे हैं उतने कह देने चाहिए। तीन विकलेन्द्रियों में ३० बोल पाये जाते हैं। तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में ३५ बोल पाये जाते हैं (ओघिक में ४० बोल कहे गये हैं उनमें से मिश्रदृष्टि-विभंग ज्ञान, अवधिज्ञान, मनयोग, वचनयोग ये पांच बोल कम कर देने चाहिए)। मनुष्य में ३६ बोल पाये जाते हैं (ओघिक में ४७ बोल कहे गये हैं, उनमें से अलेशी, मिश्रदृष्टि, विभंग ज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवल ज्ञान, नोसंज्ञा, अवेदी, अकषायी, मनयोगी, वचनयोगी, अयोगी, ये ११ बोल कम कर देने चाहिए)। इस प्रकार २४ ही दण्डक में सात कर्मों आसरी (आयुष्य को छोड़ कर) ये बोल कहे गये हैं उन सब में पहला और दूसरा ये दो दो भांगे पाये जाते हैं।

आयुष्य कर्म आसरी मनुष्य को छोड़ कर बाकी २३ दण्डक में सिर्फ एक तीसरा भांगा पाया जाता है (सात कर्मों आसरी जिस दण्डक में जितने जितने बोल कहे गये हैं, उतने उतने बोल यहाँ भी कह देने चाहिए)। मनुष्य में ३६ बोल

कहे गये हैं उनमें से कृष्णपक्षी में एक तीसरा भांगा पा जाता है। बाकी ३५ बोलों में तीसरा और चौथा ये भांगे पाये जाते हैं।

तीसरा उद्देशा—परम्परोववन्नए, पाँचवाँ उद्देशा—परम्परोगाढ़, सातवाँ उद्देशा-परम्पराहारक, नवमा उद्देशा-परम्पर पर्याप्तक और दशवां उद्देशा-चरम, ये पांच उद्देशा ओधिक की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतना फर्क है कि यहां समुच्चय जीव का बोल नहीं कहना चाहिए। ग्यारहवाँ अचरम उद्देशा-चरम उद्देशा की तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ ४४ बोल ही कहने चाहिए (पहले ४७ बोल कहे गये हैं। उनमें से अलेशी, केवलज्ञानी और अयोगी ये तीन बोल यहाँ नहीं कहने चाहिए) पहले चार भांगे कहे गये हैं, उनमें से चौथा भांगा यहाँ नहीं कहना चाहिए। सर्वार्थसिद्ध और समुच्चय जीव का बोल नहीं कहना चाहिए।

सेवं भंते' सेवं भंते

थोकड़ा नं० १६४

श्री भगवती जी सूत्र के २७वें शतक के ११ उद्देशों में-* करिंसु शतक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

* जैसे छब्बीसवें शतक के प्रश्न में 'बन्धि' पद आया है इसलिए छब्बीसवें शतक का नाम 'बन्धिशतक' कहा गया है। इसी तरह यहाँ सत्ताईसवें शतक के पहले में 'करिंसु' पद आया है इसलिए इस सत्ताईसवें शतक का नाम 'करिंसु शतक' कहा गया है। यद्यपि कर्म

चाहिये* (१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक-(तिर्यञ्चका) अन्तर्मुहूर्त (मनुष्यका) प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा—ओघिक और जघन्य—अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार करोड़ पूर्व ४० हजार वर्ष। (३) तीसरा गम्मा ओघिक और उत्कृष्ट—अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास एक सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। (४) चौथा गम्मा—जघन्य और ओघिक-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक मास चार सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा—जघन्य और जघन्य—अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक मास ४० हजार वर्ष। (६) छठा गम्मा—जघन्य और उत्कृष्ट—अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास एक सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक मास चार सागरोपम। (७) सातवां गम्मा—उत्कृष्ट और ओघिक—करोड़ पूर्व दस हजार वर्ष, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। (८) आठवां गम्मा—उत्कृष्ट और जघन्य—करोड़ पूर्व दस हजार वर्ष, चार करोड़ पूर्व ४० हजार वर्ष। (९) नवमा गम्मा—उत्कृष्ट और उत्कृष्ट—करोड़ पूर्व एक सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। दूसरी नारकी से ९ गम्मे—(१) पहला गम्मा—ओघिक और ओघिक—(तिर्यंचका)

*पहली नारकी में जघन्य में तिर्यंच का अन्तर्मुहूर्त से कहना, मनुष्य का प्रत्येक मास से कहना।

१—अहो भगवन् ! क्या जीव ने १—पाप कर्म किये, करता है, करेगा ? २—पाप कर्म किये, करता है, नहीं करेगा ? ३—पाप कर्म किये, नहीं करता है, करेगा ? ४—पाप कर्म किये, नहीं करता है, नहीं करेगा ? हे गौतम ! किसी जीव ने पाप कर्म किया, करता है, करेगा। किसी जीव ने पाप कर्म किया, करता है, नहीं करेगा। किसी जीव ने पाप कर्म किया, नहीं करता है, करेगा। किसी जीव ने पाप कर्म किया, नहीं करता है, नहीं करेगा।

२—अहो भगवन् ! क्या सलेशी जीव ने पाप कर्म किये, करता है, करेगा ? हे गौतम ! यह सारा वर्णन छब्बीसवें 'बन्धीशतक' की तरह ८ कर्म और एक समुच्चय पापकर्म ये ९ दण्डक और ११ उद्देशा कह देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १६५

श्री भगवती जी सूत्र के २८ वें शतक के ११ उद्देशों में 'समज्जिया शतक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन् ! जीवों ने किस गति में पाप कर्मों का समर्जन किया यानी बांधे और किस गति में समाचरण-

---

का बन्ध और 'कर्म करण' में कोई फर्क नहीं है तथापि सामान्य रूप से कर्म बांधना 'कर्मबन्ध' कहलाता है और 'करण' के द्वारा 'संक्रम' आदि रूप में परिणमाना' कर्मकरण कहलाता है। यह विशेषता बतलाने के लिए ही 'बन्ध' और 'करण' का पृथक् पृथक् निर्देश किया गया है।

कहे गये हैं उनमें से कृष्णपक्षी में एक तीसरा भांगा पाया जाता है। बाकी ३५ बोलों में तीसरा और चौथा ये दो भांगे पाये जाते हैं।

तीसरा उद्देशा—परम्परोववन्नए, पाँचवाँ उद्देशा—परम्परोवगाढ़, सातवाँ उद्देशा-परम्पराहारक, नवमा उद्देशा-परम्परपर्याप्तक और दशवां उद्देशा-चरम, ये पांच उद्देशा ओघिक की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतना फर्क है कि यहाँ समुच्चय जीव का बोल नहीं कहना चाहिए। ग्यारहवाँ अचरम उद्देशा-चरम उद्देशा की तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ ४४ बोल ही कहने चाहिए (पहले ४७ बोल कहे गये हैं। उनमें से अलेशी, केवलज्ञानी और अयोगी ये तीन बोल यहाँ नहीं कहने चाहिए) पहले चार भांगे कहे गये हैं, उनमें से चौथा भांगा यहाँ नहीं कहना चाहिए। सर्वार्थसिद्ध और समुच्चय जीव का बोल नहीं कहना चाहिए।

सेवं भंते सेवं भंते

थोकड़ा नं० १६४

श्री भगवती जी सूत्र के २७वें शतक के ११ उद्देशों में-* करिंसु शतक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

---

* जैसे छब्बीसवें शतक के प्रश्न में 'बन्धि' पद आया है इसलिए छब्बीसवें शतक का नाम 'बन्धिशतक' कहा गया है। इसी तरह यहाँ सत्ताईसवें शतक के पहले में 'करिंसु' पद आया है इसलिए इस सत्ताईसवें शतक का नाम 'करिंसु शतक' कहा गया है। यद्यपि कर्म

१—अहो भगवन् ! क्या जीव ने १—पाप कर्म किये, करता है, करेगा ? २—पाप कर्म किये, करता है, नहीं करेगा ? ३—पाप कर्म किये, नहीं करता है, करेगा ? ४—पाप कर्म किये, नहीं करता है, नहीं करेगा ? हे गौतम ! किसी जीव ने पाप कर्म किया, करता है, करेगा। किसी जीव ने पाप कर्म किया, करता है, नहीं करेगा। किसी जीव ने पाप कर्म किया, नहीं करता है, करेगा। किसी जीव ने पाप कर्म किया, नहीं करता है, नहीं करेगा।

२—अहो भगवन् ! क्या सलेशी जीव ने पाप कर्म किये, करता है, करेगा ? हे गौतम ! यह सारा वर्णन छब्बीसवें 'बन्धीशतक' की तरह ८ कर्म और एक समुच्चय पापकर्म ये ९ दण्डक और ११ उद्देशा कह देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १६५

श्री भगवती जी सूत्र के २८ वें शतक के ११ उद्देशों में 'समज्जिया शतक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन् ! जीवों ने किस गति में पाप कर्मों का समर्जन किया यानी बाँधे और किस गति में समाचरण

...ा बन्ध और 'कर्म करण' में कोई फर्क नहीं है तथापि सामान्य रूप ...ं कर्म बांधना "कर्मबन्ध" कहलाता है और 'करण' के द्वारा 'संक्रम' ...ादि रूप में परिणमाना' कर्मकरण कहलाता है। यह विशेषता ...तलाने के लिए ही 'बन्ध' और 'करण' का पृथक् पृथक् निर्देश ...किया गया है।

कहे गये हैं उनमें से कृष्णपक्षी में एक तीसरा भांगा पाया जाता है। बाकी ३५ बोलों में तीसरा और चौथा ये दो भांगे पाये जाते हैं।

तीसरा उद्देशा—परम्परोववन्नए, पाँचवाँ उद्देशा—परम्पराोगाढ़, सातवाँ उद्देशा-परम्पराहारक, नवमा उद्देशा-परम्पर पर्याप्तक और दशवां उद्देशा-चरम, ये पांच उद्देशा ओघिक की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतना फर्क है कि यहाँ समुच्चय जीव का बोल नहीं कहना चाहिए। ग्यारहवाँ अचरम उद्देशा-चरम उद्देशा की तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ ४४ बोल ही कहने चाहिए (पहले ४७ बोल कहे गये हैं। उनमें से अलेशी, केवलज्ञानी और अयोगी ये तीन बोल यहाँ नहीं कहने चाहिए) पहले चार भांगे कहे गये हैं, उनमें से चौथा भांगा यहाँ नहीं कहना चाहिए। सर्वार्थसिद्ध और समुच्चय जीव का बोल नहीं कहना चाहिए।

सेवं भंते' सेवं भंते

थोकड़ा नं० १६४

श्री भगवती जी सूत्र के २७वें शतक के ११ उद्देशों में-* करिंसु शतक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

---

* जैसे छव्वीसवें शतक के प्रश्न में 'बन्धि' पद आया है इसलिए छव्वीसवें शतक का नाम 'बन्धिशतक' कहा गया है। इसी तरह यहाँ सत्ताईसवें शतक के पहले में 'करिंसु' पद आया है इसलिए इस सत्ताईसवें शतक का नाम 'करिंसु शतक' कहा गया है। यद्यपि कर्म

शेष सारा अधिकार ११ उद्देशा, ४७ बोल, समुचय जीव, २४ दण्डक में जहाँ जो जो बोल पाये जावें वहाँ समुचय पाप कर्म और आठ कर्म में आठ आठ भांगे कह देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते॥

थोकड़ नं १६६

श्री भगवतीजी सूत्र के २९ वें शतक के ११ उद्देशों में पट्ठविसु निट्ठविसु का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

गाथा—

जीवा य लेस्स पक्खिय दिट्ठि अन्नाण नाण सण्णाओ।
वेय कसाय उवओग जोग, एकारस वि ठाणा ॥ १॥

अर्थ—१ समुचय जीव, ८ लेश्या (६ लेश्या, १ सलेशी १अलेशी), २ पाक्षिक, (कृष्ण पाक्षिक, शुक्ल पाक्षिक), ३ दृष्टि (समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि), ४ अज्ञान (३ अज्ञान १ समुचय अज्ञान), ६ ज्ञान (५ ज्ञान, १ समुचय ज्ञान), ५ संज्ञा (४ संज्ञा, १ ना संज्ञा), ५ वेद (३ वेद, १ सवेदी, १ अवेदी), ६ कषाय (४ कषाय, १ सकषायी, १ अकषायी), २ उपयोग (साकार उपयोग, अनाकार उपयोग), ये सब मिला-कर ४७ बोल हुए।

१—अहो भगवन्! क्या बहुत जीवों ने पापकर्म भोगना समकाल (एकसाथ) शुरू किया और समकाल (एक साथ) पूरा किया? २—अथवा समकाल में भोगना शुरु किया और विषम काल में (भिन्न समय

किया यानी भोगे ? हे गौतम ! १—सब जीवों ने* तिर्यञ्च योनि में पापकर्मों का उपार्जन किया और तिर्यंचगति में ही भोगे । २ अथवा सब जीवों ने तिर्यंच योनि में बांधे और नैरयिक योनि में भोगे । ३—अथवा सब जीवों ने तिर्यञ्च योनि में बाँधे और मनुष्य योनि में भोगे । ४—अथवा सब जीवों ने तिर्यञ्च योनिमें बाँधे और देव योनि में भोगे । ५—अथवा सब जीवों ने तिर्यञ्च योनि में बाँधे और मनुष्य योनि में भोगे । ६—अथवा सब जीवों ने तिर्यञ्च योनि में बांधे नरक योनि में और देव योनि में भोगे । ७—अथवा सब जीवों ने तिर्यञ्च योनि में बाँधे मनुष्य योनि में और देवयोनि में भोगे । ८—अथवा सब जीवों ने तिर्यञ्च योनि में बाँधे नरक योनि में, मनुष्य योनि में और देव योनि में भोगे ।†

---

* तिर्यञ्च योनि बहुत जीवों का आश्रय है । इसलिए तिर्यञ्च योनि सब जीवों की माता है । इसलिए नारकी आदि सब जीव तिर्यञ्च योनि से आकर उत्पन्न हुए हों इस अपेक्षा से यह समझना चाहिए कि पहले सब जीव तिर्यञ्च योनि में थे । और वहाँ उन्होंने नरक गति आदि के हेतु भूत कर्मों का उपार्जन किया था ।

† इनमें असंयोगी १, दो संयोगी ३, तीन संयोगी ३, चार संयोगी १, ये ८ भांगे होते हैं । पहला भांगा जीव तिर्यञ्च गति से निकल कर दूसरी गति में गया ही नहीं । दूसरा, तीसरा और चौथा भांगा—दो गति के सिवाय तीसरी गति में गया ही नहीं । पांचवां छठा सातवां भांगा—तीन गति के सिवाय चौथी गति में गया ही नहीं । आठवां भांगा—जीव चारों गतियों में गया । इनमें मूल स्थान तिर्यञ्च गति है ।

(११) संज्ञा-जानेवालों में संज्ञा चार चार। (१२) कषाय-जानेवालों में कषाय चार चार। (१३) इन्द्रिय जानेवालों में इन्द्रिय पांच पांच। (१४) समुद्घात-जानेवाले तिर्यंचमें ५ और मनुष्य में ६। (१५) वेदना-जानेवालों में वेदना दोनों साता और असाता। (१६) वेद-पहली से छठी नारकी तक तीन तीन वेद वाले जावे हैं सातवीं में दो वेद (पुरुषवेद, पुरुष नपुंसक वेद) वाले जावे हैं। (१७) आयुष्य-जानेवाले तिर्यञ्चका जघन्य अन्तर्मुहूर्त, पहली नारकी में जाने वाले मनुष्य का जघन्य प्रत्येक मास, दूसरी से सातवीं तक जघन्य प्रत्येक वर्ष, उत्कृष्ट मनुष्य तिर्यंच का करोड़ पूर्व का होता है। (१८) अध्यवसाय-जानेवालों में शुभ और अशुभ दोनों होवे हैं। (१९) अनुबन्ध-आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है। (२०) कायसंवेध-कायसंवेध के दो भेद-भवादेश (भव की अपेक्षा), कालादेश (काल की अपेक्षा)। भवादेश से-तिर्यञ्च और मनुष्य पहली नारकी से छठी नारकी तक जघन्य दो भव करते हैं और उत्कृष्ट ८ भव करते हैं। सातवीं नारकी में तिर्यंच छह गम्मा (तीजा छठा नवमा टल्या) आसरी जाने आसरी तीन भव सात भव करते हैं और आने आसरी दो भव छह भव करते हैं। तीन गम्मा (तीजा छठा नवमा) जाने आसरी तीन भव पांच भव करते हैं और आने आसरी तीन गम्मा (सातवां आठवां नवमा) दो भव चार भव करते हैं। मनुष्य सातवीं नारकी के दो भव करता है। कालादेस (काल की अपेक्षा) से ९ गम्मे कह देते

चाहिये* (१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–(तिर्यञ्चका) अन्तमुहूर्त (मनुष्यका) प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–अन्तमुहूर्त प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार करोड़ पूर्व ४० हजार वर्ष। (३) तीसरा गम्मा ओघिक और उत्कृष्ट–अन्तमुहूर्त प्रत्येक मास एक सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–अन्तमुहूर्त प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार अन्तमुहूर्त चार प्रत्येक मास चार सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–अन्तमुहूर्त प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार अन्तमुहूर्त चार प्रत्येक मास ४० हजार वर्ष। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–अन्तमुहूर्त प्रत्येक मास एक सागरोपम, चार अन्तमुहूर्त चार प्रत्येक मास चार सागरोपम। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–करोड़ पूर्व दस हजार वर्ष, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–करोड़ पूर्व दस हजार वर्ष, चार करोड़ पूर्व ४० हजार वर्ष। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–करोड़ पूर्व एक सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। दूसरी नारकी से ९ गम्मे–(१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–(तिर्यंचका)

*पहली नारकी में जघन्य में तिर्यंच का अन्तमुहूर्त से कहना, मनुष्य का प्रत्येक मास से कहना।

अन्तर्मुहूर्त (मनुष्यका) प्रत्येक वर्ष* एक सागरोपम चार करोड़ पूर्व बारह सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य –अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष एक सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा–ओघिक और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार करोड़ पूर्व बारह सागरोपम। (४) चौथा गम्मा–जघन्य और ओघिक–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष एक सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष बारह सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा–जघन्य और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष एक सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष चार सागरोपम। (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष बारह सागरोपम। (७) सातवां गम्मा–उत्कृष्ट और ओघिक–करोड़ पूर्व एक सागरोपम, चार करोड़ पूर्व बारह सागरोपम। (८) आठवां गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–करोड़ पूर्व एकसागरोपम, चार करोड़ पूर्व चार सागरोपम। (९) नवमा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–करोड़ पूर्व तीन सागरोपम, चार करोड़ पूर्व बारह सागरोपम। तीसरी नारकी से ९ गम्मे इसप्रकार कहने चाहिए –(१) पहला गम्मा–ओघिक और ओघिक–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार करोड़पूर्व अट्ठाईस सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा–ओघिक और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार करोड़ पूर्व बारह सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा-

*दूसरी नारकी से सातवीं नारकी तक जघन्यमें तिर्यंचका अन्तर्मुहूर्त से मनुष्य का प्रत्येक वर्ष से कहना।

ओघिक और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार करोड़ पूर्व अट्ठाईस सागरोपम। (४) चौथा गम्मा-जघन्य और ओघिक-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष अट्ठाईस सागरोपम। (५) पांचवाँ गम्मा-जघन्य और जघन्य-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष बारह सागरोपम। (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष अट्ठाईस सागरोपम। (७) सातवां गम्मा-उत्कृष्ट और ओघिक-करोड़ पूर्व तीन सागरोपम, चार करोड़ पूर्व अट्ठाईस सागरोपम। (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-करोड़पूर्व तीन सागरोपम, चार करोड़पूर्व बारह सागरोपम। (९) नवां गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-करोड़पूर्व सात सागरोपम, चार करोड़ पूर्व अट्ठाईस सागरोपम।

चौथी नारकी से सात सागरोपम और दस सागरोपम से ९ गम्मे कह देने चाहिए-(१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चालीस सागरोपम (२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार करोड़ पूर्व अट्ठाईस सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चालीस सागरोपम। (४) चौथा गम्मा-जघन्य और ओघिक-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक

वर्ष ४० सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा-जघन्य और जघन्य-अन्तमुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार अन्तमुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष अट्ठाईस सागरोपम। (६) छठा गम्मा- जघन्य और उत्कृष्ट-अन्तमुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार अन्तमुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष चालीस सागरोपम। (७) सातवां गम्मा-उत्कृष्ट और ओघिक-करोड़ पूर्व सात सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चालीस सागरोपम। (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-करोड़ पूर्व सात सागरोपम, चार करोड़पूर्व अट्ठाईस सागरोपम। (९) नवां गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-करोड़पूर्व दस सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चालीस सागरोपम।

पांचवीं नारकी से १० सागरोपम और १७ सागरोपम से ९ गम्मा कह देना चाहिए। (१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-अन्तमुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार करोड़ पूर्व ६८ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य-अन्तमुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चालीस सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-अन्तमुहूर्त प्रत्येकवर्ष १७ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व ६८ सागरोपम। (४) चौथा [illegible] ओघिक-अन्त-

और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष ६८ सागरोपम। (७) उत्कृष्ट और ओघिक-करोड़ पूर्व दस सागर, चार करोड़ पूर्व ६८ सागरोपम। (८) आठवां गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-करोड़ पूर्व दस सागरोपम, चार करोड़ पूर्व चालीस सागरोपम। (९) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-करोड़ पूर्व १७ सागरोपम, चार करोड पूर्व ६८ सागरोपम।

छठी नारकी से १७ सागरोपम और २२ सागरोपम से ९ गम्मे कह देने चाहिए-(१) पहला गम्मा-ओघिक और ओघिक-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व ८८ सागरोपम। (२) दूसरा गम्मा-ओघिक और जघन्य अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व ६८ सागरोपम। (३) तीसरा गम्मा-ओघिक और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष बाईस सागरोपम, चार करोड़ पूर्व ८८ सागरोपम। (४) चौथा गम्मा जघन्य और ओघिक-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, ४ अन्तर्मुहूर्त ४ प्रत्येक वर्ष ८८ सागरोपम। (५) पांचवां गम्मा-जघन्य और जघन्य-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, ४ अन्तर्मुहूर्त ४ प्रत्येक वर्ष ६८ सागरोपम। (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, ४ अन्तर्मुहूर्त ४ प्रत्येक वर्ष ८८ सागरोपम। (७) सातवां गम्मा-उत्कृष्ट और ओघिक-करोड़ पूर्व १७ सागरोपम, चार करोड़ पूर्व ८८

में) पूरा किया ? ३—अथवा विषम काल में भोगना शुरु किया और समकाल में पूरा किया ? ४—अथवा विषम काल में भोगना शुरु किया और विषम काल में पूरा किया ? हे गौतम ! १—कितनेक जीवों ने पापकर्म भोगना समकाल में (एक साथ) शुरु किया और समकाल में पूरा किया। २—कितनेक जीवों ने पापकर्म भोगना समकाल में शुरु किया और विषमकाल में पूरा किया। ३—कितनेक जीवों ने पापकर्म भोगना विषमकाल में शुरु किया और समकाल में पूरा किया। ४—कितनेक जीवों ने पापकर्म भोगना विषमकाल में शुरु किया और विषम काल में पूरा किया। अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! जीव चार प्रकार के हैं—यथा—१ एक साथ आयुष्य का उदयवाले सम (एक साथ) उत्पन्न हुए, २ एक साथ आयुष्य का उदय वाले और विषम काल में (भिन्न काल में) उत्पन्न हुए, ३ विषम काल में आयुष्य का उदयवाले और समकाल में उत्पन्न हुए, ४ विषम काल में आयुष्य का उदय वाले और विषम काल में उत्पन्न हुए। १—जो जीव साथ में आयुष्य के उदय वाले हैं और सम (एक साथ) उत्पन्न हुए हैं उन्होंने आयु कर्म एक साथ भोगना शुरु किया और एक साथ पूरा किया। वे जीव एक साथ पाप भोगना शुरु करते हैं और एक साथ क्षय करते हैं। २—जो जीव (एक साथ में आयुष्य के उदय वाले हैं और विषम (भिन्न काल में)

उत्पन्न हुए हैं उन्होंने आयु कर्म एक साथ भोगना शुरु किया और विषमकाल में पूरा किया*। ये जीव एक साथ पाप भोगना शुरू करते हैं और क्षय जुदा जुदा समय में करते हैं।

३—जो जीव विषम काल में आयुष्य के उदय वाले हैं और समकाल में उत्पन्न हुए हैं उन्होंने विषम काल में आयु कर्म भोगना शुरू किया और समकाल में पूरा किया। ये जीव पाप भोगना जुदे जुदे काल में शुरू करते हैं और क्षय एक साथ करते हैं। ४—जो जीव विषम काल में आयुष्य के उदय वाले हैं और विषम काल में उत्पन्न हुए हैं, उन्होंने विषमकाल में आयुकर्म भोगना शुरू किया और विषमकाल में पूरा किया। वे जीव जुदे जुदे काल में पाप भोगना शुरू करते हैं और जुदे जुदे काल में ही क्षय करते हैं।

२—अहो भगवान्! क्या सलेशी जीवों ने एक साथ कर्म भोगना शुरू किया और एक साथ पूरा किया? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न

* जैसे मनुष्य भव में दो जीवों ने एक साथ नरकायु बाँधी। एक ने अन्तर्मुहूर्त रहते आयु बाँधी और एक ने इससे अधिक समय रहते आयु बाँधी। प्रदेश की अपेक्षा से दोनों जीवों ने एक साथ आयु भोगना शुरू किया। किन्तु दोनों नरक में भिन्न भिन्न काल में उत्पन्न हुए। जिसने अन्तर्मुहूर्त रहते आयु बाँधी थी वह पहले उत्पन्न हुआ और दूसरा बाद में। दोनों नरकायु का क्षय भी भिन्न भिन्न काल में करेंगे। तत्त्व केवली गम्य।

पूछना चाहिए। हे गौतम ! कितनेक सलेशी जीवों ने एक साथ कर्म भोगना शुरू किया और एक साथ पूरा किया, इत्यादि सब पूर्ववत् कह देना चाहिए। सलेशी से अनाकार उपयोग तक ४७ बोलों में पूर्वोक्त चार चार भांगे कह देने चाहिए। जिस तरह समुच्चय जीव का कहा उसी तरह २४ ही दण्डक में जितने जितने बोल पाये जावें उतने उतने कह देने चाहिए।

जिस तरह यह पहला उद्देशा कहा गया उसी तरह ११ ही उद्देशे कह देने चाहिए किन्तु विशेषता यह है कि दूसरा चौथा, छठा और आठवाँ इन चार उद्देशों में दो दो भांगे (पहला भांगा और दूसरा भांगा) ही कहने चाहिए। शेष तीसरा, पांचवाँ, सातवाँ नवाँ, दशवाँ और ग्यारहवाँ ये ६ उद्देशों में पहले की तरह ही चार चार भांगे कहना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १६७

श्री भगवतीजी सूत्र के ३० वें शतक के पहले उद्दे में 'समवसरण' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

गाथा

जीवा य लेस्स पक्खिय दिट्ठि, अन्नाण नाण सण्णाओ।
वेय कसाय उवओग जोग, एक्कारस वि ठाणा ॥ १ ॥

अर्थ—१ समुच्चय जीव, ८ लेश्या (६ लेश्या, १ सलेशी,

१ अलेशी), २ पाक्षिक (कृष्ण पाक्षिक, शुक्ल पाक्षिक) ३ दृष्टि (समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि), ४ अज्ञान (३ अज्ञान, १ समुच्चय अज्ञान), ६ ज्ञान (५ ज्ञान, १ समुच्चय ज्ञान), ५ संज्ञा (४ संज्ञा, १ नोसंज्ञा), ५ वेद (३ वेद, १ सवेदी, १ अवेदी), ६ कषाय (४ कषाय, १ सकषायी, १ अकषायी), २ उपयोग (साकार उपयोग, अनाकार उपयोग), ५ जोग (३मन वचन, काया का जोग, १ सजोगी, १ अजोगी)। ये सब मिलाकर ४७ बोल हुए।

१—अहो भगवान् ! समवसरण (मत) कितने प्रकार का है ? हे गौतम ! चार प्रकार का है—* १ क्रियावादी, २ अक्रियावादी, ३ अज्ञानवादी, ४ विनयवादी।

---

* १ क्रियावादी—आत्मा का अस्तित्व मानने वाले तथा ज्ञान और क्रिया से मोक्ष माननेवाले। इनके १८० भेद हैं।

२ अक्रियावादी—आत्मा आदि का अस्तित्व न मानने वाले इनके ८४ भेद हैं।

३ अज्ञानवादी—अज्ञान से मोक्ष मानने वाले इनके ६७ भेद हैं।

४ विनयवादी—सब का विनय करने से ही मोक्ष मानने वाले। जैसे—कुत्ता, बिल्ली, गाय, भैंस आदि सब का विनय करने से मोक्ष मानने वाले। इनके ३२ भेद हैं।

इन चारों के सब मिलाकर ३६३ मत होते हैं। यद्यपि ये सभी मिथ्यादृष्टि हैं, किन्तु यहाँ क्रियावादी का जो वर्णन है वह सम्यक् अस्तित्व मानने वाले सम्यक्दृष्टियों का है इसलिये इन्हें समदृष्टि समझना चाहिये।

समुचय जीव में ४७ बोल पाये जाते हैं। कृष्ण पाक्षिक मिथ्या दृष्टि और चार अज्ञान में तीन समवसरण (क्रियावाद को छोड़कर) पाये जाते हैं। चारों गति का आयुष्य बांध हैं। ये भव्य अभव्य दोनों होते हैं। मिश्र दृष्टि में दो समवसरण (अज्ञानवादी, विनयवादी) पाये जाते हैं। आयुष्य क अबंध है। नियमा भव्य है। समदृष्टि में और चार ज्ञान ं एक समवसरण (क्रियावादी) पाया जाता है। नारक देवता-मनुष्य का और तिर्यंच मनुष्य—वैमानिक देव* क आयुष्य बाँधते हैं। ये नियमा भव्य होते हैं। कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोत लेश्या में चारों समवसरण पाये जाते हैं। जिसमें क्रियावादी नारकी देवता मनुष्य का आयुष्य बाँधते हैं और क्रियावादी तिर्यंच मनुष्य इन लेश्याओं में आयु नहीं बाँधते। नियमा भव्य होते हैं। बाकी तीन समवसरण वाले चारों गति का आयुष्य बाँधते हैं। भव्य अभव्य दोनों होते हैं। तेजो लेश्या, पद्म लेश्या और शुक्ल लेश्या में चारों समवसरण पाये जाते हैं। जिसमें क्रियावादी देवता मनुष्य का और मनुष्य तिर्यञ्च (क्रियावादी) वैमानिक का आयुष्य बाँधते हैं। नियमा भव्य होते हैं। बाकी तीन समवसरण वाले देवता-तिर्यंच और मनुष्य का आयुष्य बाँधते हैं तथा मनुष्य तिर्यंच

---

* यहाँ जो वैमानिक देव का आयुष्य बाँधना बताया गया है वह विशिष्ट सम्यग्दृष्टि क्रियावादी की अपेक्षा से है। विशेष खुलासा पृष्ठ ४० से ४२ पर देखें।

को छोड़कर बाकी तीन गति का आयुष्य बाँधते हैं।
भव्य दोनों हैं। मनःपर्यय ज्ञान और नो संज्ञा में एक सम-
(क्रियावादी) पाया जाता है। वैमानिक का आयुष्य
हैं। नियमा भव्य होते हैं। अवेदी, अकषायी, अलेशी,
ज्ञानी और अयागी में एक समवसरण (क्रियावादी) पाया
है, आयुष्य का अबन्ध है। नियमा भव्य होते हैं। बाकी
बोलों में चारों समवसरण पाये जाते हैं। जिसमें क्रिया-
नारकी देवता तो मनुष्य का और मनुष्य तिर्यंच वैमा-
देव का आयुष्य बाँधते हैं। नियमा भव्य होते हैं। बाकी
न समवसरण वाले चारों गति का आयुष्य बाँधते हैं। भव्य
भव्य दोनों होते हैं।

नारकी में ३५ बोल पाये जाते हैं। कृष्ण पाक्षिक,
मिथ्या दृष्टि और चार अज्ञान में तीन समवसरण (क्रियावादी
को छोड़कर) पाये जाते हैं। मनुष्य और तिर्यञ्च का आयुष्य
बाँधते हैं। भव्य अभव्य दोनों होते हैं। मिश्र दृष्टि में दो समवसरण
(विनयवादी, अज्ञानवादी) पाये जाते हैं। आयुष्य का अबन्ध
है। नियमा भव्य हैं। समदृष्टि और चार ज्ञान (तीन ज्ञान
और एक समुच्चय ज्ञान) में एक समवसरण (क्रियावादी) पाया
जाता है। एक मनुष्य गति का आयुष्य बांधते हैं। नियमा भव्य
होते हैं। बाकी २३ बोलों में चारों समवसरण पाये जाते हैं।
जिसमें क्रियावादी मनुष्य गति का आयुष्य बांधता है।
नियमा भव्य होते हैं। बाकी तीन समवसरण वाले मनुष्य गति

देवता का आयुष्य बांधते हैं। नियमा भव्य होते हैं। बाकी तीन समवसरण तीन गति का (नारकी को छोड़कर) आयुष्य बांधते हैं। भव्य अभव्य दोनों होते हैं। बाकी २२ बोलों में चार समवसरण पाये जाते हैं। जिसमें क्रियावादी वैमानिक का आयुष्य बांधते हैं। नियमा भव्य होते हैं बाकी तीन समवसरण चारों गति का आयुष्य बांधते हैं। भव्य अभव्य दोनों होते हैं।

मनुष्य में ४७ बोल पाये जाते हैं। जिनमें से १८ बोल तिर्यञ्च में कहे उसी तरह से कह देने चाहिए। मनः पर्यय ज्ञान और नोसंज्ञा में एक समवसरण (क्रियावादी) पाया जाता है। एक वैमानिक देवता का आयुष्य बांधते हैं। नियमा भव्य होते हैं। अवेदी, अकषायी, अलेशी, केवलज्ञानी और अयोगी में एक समवसरण (क्रियावादी) पाया जाता है। आयुष्य का अबन्ध होता है। नियमा भव्य होते हैं। बाकी २२ बोलों में चारों समवसरण पाये जाते हैं। जिसमें क्रियावादी वैमानिक देवता का आयुष्य बांधते हैं। नियमा भव्य होते हैं। बाकी तीन समवसरण चारों गति का आयुष्य बांधते हैं। भव्य अभव्य दोनों होते हैं।

"प्रथम (ओघिक) उद्देशा सम्पूर्ण"

दूसरा, चौथा, छठा, और आठवाँ—इन चार उद्देशों में ३२ बोलों में (नारकी में जो ३५ बोल कहे गये हैं, उनमें से मनयोग, वचनयोग, मिश्रदृष्टि ये तीन बोल कम

कर देने चाहिए) कृष्णपाक्षिक, मिथ्यादृष्टि और चार अज्ञान में तीन समवसरण (क्रियावादी को छोड़कर) पाये जाते हैं। आयुष्य का अवन्ध होता है। समदृष्टि और चार ज्ञान (३ ज्ञान १ समुचय ज्ञान) में एक समवसरण (क्रियावादी) पाया जाता है। आयुष्य का अवन्ध होता है। बाकी २१ बोलों में चारों समवसरण पाये जाते हैं। आयुष्य का अवन्ध होता है।

भवनपति, और वाणव्यन्तर में ३४ बोल पाये जाते हैं ओघिक में ३७ कहे उनमें से मनयोग, वचनयोग और मिश्र दृष्टि, ये तीन कम कर देने चाहिए)। उनमें से कृष्णपाक्षिक, मिथ्यादृष्टि, चार अज्ञान में तीन समवसरण (क्रियावादी को छोड़ कर) पाये जाते हैं। आयुष्य का अवन्ध होता है। समदृष्टि और चार ज्ञान में एक समवसरण (क्रियावादी) पाया जाता है। आयुष्य का अवन्ध होता है। बाकी २३ बोलों में चारों समवसरण पाये जाते हैं। आयुष्य का अवन्ध होता है।

ज्योतिषी, और पहले दूसरे देवलोक में ३१ बोल पाये जाते हैं (ओघिक में ३४ बोल कहे उनमें से मनयोग, वचन योग और मिश्रदृष्टि ये तीन बोल कम कर देने चाहिए)। कृष्णपाक्षिक, मिथ्या दृष्टि और चार अज्ञान में तीन समवसरण (क्रियावादी को छोड़कर) पाये जाते हैं। आयुष्य का अवन्ध होता है। समदृष्टि और चार ज्ञान में एक

थोकड़ा नं० १६८

श्री भगवतीजी सूत्र के ३१ वें शतक के २८ उद्देशों 'खुड्डागकडजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं —

१—अहो भगवान् !* खुड्डागजुम्मा (क्षुद्र युग्म—लघु युग्म) कितने कहे गये हैं ! हे गौतम ! चार कहे गये हैं । यथा—

×कडजुम्मा, तेओगा, दावरजुम्मा, कलियोगा ।

२—अहो भगवान् ! कडजुम्मा नारकी कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! पांच संज्ञी, पाँच असंज्ञी तिर्यञ्च और संख्यात वर्ष की आयु वाले मनुष्य इन ११ स्थानों से आकर उत्पन्न होते हैं। इस तरह सात ही

---

* लघु संख्यावाली राशि विशेष को खुड्डागजुम्मा कहते हैं आगे 'महाजुम्मा' बतलाये जावेंगे। उनकी अपेक्षा ये क्षुद्र (लघु—छोटे) जुम्मा हैं।

× जिस राशि में से चार चार बाकी निकालते हुए अन्त में शेष चार बच जाय उस राशि को खुड्डागकडजुम्मा कहते हैं। जैसे ४,८,१२,१६,२०, आदि। शेष तीन बच जाय उस राशि को खुड्डाग तेओगा कहते हैं, जैसे ७,११,१५ आदि। शेष दो बच जाय उस राशि को खुड्डाग दावर जुम्मा कहते हैं, जैसे ६,१०,१४ आदि। शेष एक बच जाय उस राशि को खुड्डाग कलियोगा कहते हैं, जैसे ५,९ १३ आदि।

नारकी में कह देना चाहिए। किन्तु आगति के स्थान इस प्रकार हैं—

१—रत्नप्रभा के आगति स्थान ११ हैं।

२—शर्कराप्रभा के आगति स्थान ६ हैं (असंज्ञी तिर्यञ्च कम हो गये।)

३—वालूका प्रभा के आगति स्थान ५ हैं। (भुजपरिसर्प कम हो गये)।

४—पंकप्रभा के आगति स्थान ४ हैं (खेचर कम हो गये)।

५—धूमप्रभा के आगति स्थान ३ हैं (स्थलचर कम हो गये)।

६—तमप्रभा के आगति स्थान २ हैं (उरपरिसर्प कम हो गये)।

७—तमतमाप्रभा के आगतिस्थान २ हैं (स्त्री नहीं जाती)।

३—अहो भगवान्! नारकी में एक समय में कितने जीव उत्पन्न होते हैं? हे गौतम! ४, ८, १२,१६, इस तरह चार चार बढ़ाते हुए यावत् संख्याता असंख्याता जीव नारकी में उत्पन्न होते हैं।

४—अहो भगवान्! वे जीव किस तरह से उत्पन्न

होते हैं ? हे गौतम ! जैसे कोई* कूदने वाला पुरुष साथी का साथ छुट जाने पर अध्यवसायपूर्वक (इच्छाजन्य-करण अर्थात् क्रियारूप साधन द्वारा) कूदता हुआ पूर्वस्थान को छोड़ता हुआ आगे के स्थान को ग्रहण करता जाता है, इसी प्रकार नारकी जीव कर्म रूप क्रिया के साधन द्वारा पूर्व भव को छोड़ कर नारकी में उत्पन्न होते हैं।

इसी तरह तेओगा भी कह देना चाहिये। किन्तु ३,७, ११,१५ संख्याता असंख्याता कहना चाहिये। इसी तरह दावर जुम्मा कह देना चाहिये किन्तु २,६,१०,१४ संख्याता असंख्याता कहना चाहिए। इसी तरह कलियोगा भी कह देना चाहिए किन्तु १,५,९,१३ संख्याता असंख्याता कहना चाहिए।

यह ओघसूत्र (सामान्यसूत्र) हुआ। अब विशेष कहा जाता है—

अहो भगवान् ! कृष्णलेशी खुड्डाग कडजुम्मा के नेरीया कितने स्थानों से आकर उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! तीन स्थानों से (संज्ञी तिर्यञ्च, असंज्ञी तिर्यञ्च और मनुष्य से) आकर उत्पन्न होते हैं। प्रमाण ४,८,१२,१६ यावत् संख्याता असंख्याता है। अहो भगवान् ! किस तरह से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! ओघ सूत्र में कहा उसी

* भगवती सूत्र के पच्चीसवें शतक के आठवें उद्देशे में जिस तरह कहा है, उसी तरह यहाँ भी कह देना चाहिए।

तरह से पूर्वस्थान को छोड़ कर अगले स्थान को ग्रहण करते हुए उत्पन्न होते हैं। पाँचवीं, छठी, सातवीं नारकी में कहना। जिस तरह कडजुम्मा कहा उसी तरह तेओगा दावरजुम्मा कलियोगा कह देना चाहिए किन्तु प्रमाण अपना अपना कहना चाहिए। इसी तरह नीललेशी का भी कह देना चाहिए किन्तु तीसरी, चौथी, पाँचवीं नरक में कहना चाहिए। इसी तरह कापोतलेशी का कह देना चाहिए किन्तु पहली दूसरी तीसरी नरक में कहना चाहिए।

एक समुच्चय का उद्देशा हुआ और तीन लेश्या के तीन उद्देशे हुए। इन चार उद्देशों को ओघ उद्देशा कहते हैं। इसी तरह भवी के चार उद्देशा, (एक ओघ उद्देशा, तीन लेश्या के साथ तीन उद्देशा) कह देने चाहिए। भवी की तरह अभवी के भी चार उद्देशा कह देने चाहिए। इसी तरह मिथ्यादृष्टि के भी चार उद्देशा कह देने चाहिए। इसी तरह समदृष्टि के भी चार उद्देशा कह देने चाहिए किन्तु सातवीं नरक में समदृष्टि नहीं कहना चाहिए क्योंकि समदृष्टि सातवीं नरक में उत्पन्न नहीं होता है और वहाँ से उवटता (निकलता) भी नहीं है। इसी तरह कृष्ण पाक्षिक और शुक्ल पाक्षिक के चार-चार उद्देशा कह देने चाहिए।

ये सब मिला कर २८ उद्देशा हुए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १६६

श्री भगवती सूत्र के ३२ वें शतक के २८ उद्देशों में 'उवटणा-उद्वर्तना' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! खुड्डाग कड़जुम्मा नैरयिक उवट कर (नरक से निकल कर) कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! पांच संज्ञी तिर्यञ्च में और संख्यात वर्ष की आयु वाले कर्मभूमि मनुष्य में, इन छह स्थानों में उत्पन्न होते हैं।

२—अहो भगवान् ! एक समय में कितने उवटते हैं ? हे गौतम ! चार आठ बारह सोलह यावत् संख्याता असंख्याता उवटते (निकलते) हैं।

३—अहो भगवान् ! वे कैसे उवटते हैं ? हे गौतम ! पहले की तरह अध्यवसाय के निमित्त से तथा योगों के कारण एवं स्वकर्म ऋद्धि और प्रयोग से उवटते हैं। इस तरह दूसरी से लेकर छठी नारकी तक के निकले हुए जीव पूर्वोक्त छह स्थानों में जाते हैं। सातवीं नरक से निकले हुए जीव पाँच संज्ञी तिर्यञ्च में जाते हैं, मनुष्य में नहीं जाते हैं। बाकी सारा अधिकार ३१ वें शतक की तरह जान लेना चाहिए। इसी तरह तेओगा, दावरजुम्मा, कलियोगा का परिमाण इकतीसवें शतक के अनुसार जान लेना चाहिए। यह ओघ उद्देशा हुआ। इसी तरह कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोत लेश्या के उद्देशे भी कह देने चाहिए किन्तु कृष्णलेशी पांचवीं छठी नरक से निकले हुए छह स्थानों (पाँच संज्ञी तिर्यंच और

मनुष्य) में जाते हैं और सातवीं से निकले हुए पांच स्थानों (पांच संज्ञी तिर्यच) में जाते हैं। ये चार ओघ उद्देशे हुए। बाकी २४ उद्देशे इकतीसवें शतक के अनुसार कह देने चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ उवटना (निकलना) कहना चाहिए। उवटन इस शतक के ओघ सूत्र के अनुसार कहना चाहिए।

॥ खुडाग जुम्मा सम्पूर्ण ॥
सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० २००

श्री भगवती सूत्र के ३३ वें शतक के १२ अन्तर शतकों में १२४ उद्देशे हैं।

भेद पगइ बंध वेद ओही भवीया भवीय
बारस अंतर सया उद्देशा सय चउवीसं।

इनमें 'एकेन्द्रिय शतक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! एकेन्द्रिय के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! बीस भेद हैं—पृथ्वीकाय आदि पांच सूक्ष्म और पांच बादर इन दस के पर्याप्त और अपर्याप्त, ये बीस भेद हुए।

२—अहो भगवान् ! एकेन्द्रिय के कितने कर्मों की सत्ता है ? हे गौतम ! आठ कर्मों की सत्ता है।

३—अहो भगवान् ! एकेन्द्रिय के कितने कर्मों का बन्ध होता है ? हे गौतम ! सात अथवा आठ कर्मों का बन्ध होता है।

४—अहो भगवान्! एकेन्द्रिय कितनी कर्म प्रकृतियों को वेदते हैं? हे गौतम! चौदह कर्म प्रकृतियों को वेदते हैं, वे ये हैं—ज्ञानावरणीयादि ८ कर्म, *श्रोत्रेन्द्रिय का आवरण, चक्षु इन्द्रिय का आवरण, घ्राणेन्द्रिय का आवरण, रसनेन्द्रिय का आवरण, पुरुषवेद का आवरण, स्त्री वेद का आवरण।

॥ प्रथम उद्देशा सम्पूर्ण ॥

अनन्तरोपपन्न, अनन्तरावगाढ, अनन्तराहारक, अनन्तर पर्याप्तक इन चार उद्देशों में एकेन्द्रिय के १० भेद अपर्याप्ता वे पाये जाते हैं। इनके ८ कर्मों की सत्ता होती है, ७ कर्मों का बन्ध होता है, १४ कर्म प्रकृतियों को वेदते हैं।

परम्परोपपन्न, परम्परावगाढ, परम्पराहारक, परम्पर पर्याप्तक, चरम और अचरम ये छह उद्देशा ओघिक की तरह कह देने चाहिए। इन ११ उद्देशों में से दूसरा, चौथा, छठा और आठवां, इन चार उद्देशों में ८ कर्मों की सत्ता होती है, ७ कर्मों का बन्ध होता है और १४ कर्म प्रकृतियाँ वेदते हैं। बाकी ७ उद्देशों में आठ कर्मों की सत्ता होती है, सात अथवा आठ कर्मों का बन्ध होता है। १४ कर्म प्रकृतियों को वेदते हैं। बाकी सारा अधिकार प्रथम उद्देशा के अनुसार कह देना चाहिए।

॥ इति तेतीसवें शतक का प्रथम अन्तर शतक ॥

---

* एकेन्द्रिय के ये चार इन्द्रियां, पुरुषवेद, स्त्री वेद ये नहीं होते हैं। इसलिए अध्यवसाय की अपेक्षा वे इनका दुःख वेदते हैं।

कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी इन तीन अन्तर शतकों के ११-११ उद्देशा कह देने चाहिए। इनमें से दूसरा, चौथा, छठा, आठवां इन चार उद्देशों में पृथ्वीकायादि के १०-१० भेद होते हैं। आठ कर्मों की सत्ता होती है, सात कर्मों का बन्ध होता है। १४ कर्म प्रकृतियों को वेदते हैं। बाकी ७ उद्देशों में पृथ्वीकायादि के २०-२० भेद होते हैं। आठ कर्मों की सत्ता होती है। सात अथवा आठ कर्मों का बन्ध होता है। १४ कर्म प्रकृतियों को वेदते हैं।

तेंतीसवें शतक के अन्दर लेश्या संयुक्त चार अन्तर शतक समुचय कहे गये हैं। इसी तरह लेश्या संयुक्त चार अन्तर शतक भवी जीवों के और चार अन्तर शतक अभवी जीवों के कह देने चाहिए किन्तु अभवीशतक के प्रत्येक शतक के ९-९ उद्देशे कहने चाहिए क्योंकि अभवी में चरम और अचरम ये दो उद्देशे नहीं होते हैं। इन १२ अन्तर शतकों के १२४ उद्देशे होते हैं जिनमें ४८ उद्देशे अनन्तर समय के होते हैं। जिनमें एकेन्द्रिय के दस-दस बोल अपर्याप्त होने से ४८० बोलों में (४८+१०=४८०) आठ कर्मों की सत्ता होती है। सात कर्मों का बन्ध होता है। और १४ कर्म प्रकृतियों को वेदते हैं। बाकी ७६ उद्देशों में एकेन्द्रिय के २०-२० भेद होने से १५२० बोल (७६+२०=१५२०) होते हैं। इन १५२० बोलों में आठ कर्मों की सत्ता होती है। सात

अथवा आठ कर्मों का बन्ध होता है। १४ कर्म प्रकृतियों को वेदते हैं। कुल २००० अलावा हुए।

॥ इति ३३वें शतक के १२ अन्तर शतक और उनके १२४ उद्देशे पूर्ण हुए॥

सेवं भंते! सेवं भंते!!

नोट—अनन्तरोपपन्न आदि दूसरा, चौथा, छठा और आठवाँ इन चार उद्देशों में १०-१० अलावा होने से ४० अलावा हुए। बाकी ७ उद्देशों में २०-२० अलावा होने से १४० अलावा (७ × २० = १४०) हुए। इस प्रकार ये १८० अलावा (४० + १४० =१८०) ओघिक के हुए। कृष्णलेशी के १८०, नीललेशी के १८०, कापोत लेशी के १८० अलावा हुए। ये सब मिलाकर ७२० अलावा हुए। इसीप्रकार भवी के ७२० अलावा हुए। अभवी में चरम और अचरम ये दो उद्देशे नहीं होते हैं। इस लिए इन दो उद्देशों के १६० अलावा नहीं होते हैं बाकी ५६० अलावा होते हैं। ये सब मिलाकर २००० अलावा (७२० + ७२०+५६० =२०००) हुए। अर्थात् चार उद्देशों के ४८० अलावा और ७ उद्देशों के १५२० अलावा हुए। सब मिलाकर २००० अलावा (४८० + १५२० =२०००) हुए।

थोकड़ा नं० २०१

श्री भगवती सूत्र के ३४ वें शतक के १२ अन्तर शतकों के १२४ उद्देशों में 'श्रेणी शतक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं-

भेद सेढ़ीय विग्गहो उववाए समुग्घाय संठाणे।
बंध वेद आगइ य तुल्ल ठिती ए कस्साय॥

भेद, श्रेणी, विग्रह गति, उपपात, समुद्घात, संस्थान, बंध, वेद, आगति और समस्थिति वाले कर्मों का बंध ये द्वार इस थोकड़े में चलते हैं।

१—अहो भगवान्! एकेन्द्रिय के कितने भेद हैं? हे गौतम! बीस भेद हैं—पृथ्वीकाय आदि पांच सूक्ष्म और पांच बादर, इन दश के पर्याप्त और अपर्याप्त, ये बीस भेद हुए।

रत्नप्रभा पृथ्वी के चारों ही दिशा के चरमान्त में १८-१८ बोल (बादर तेउकाय के पर्याप्त और अपर्याप्त को छोड़कर) पाये जाते हैं। बादर तेउकाय के पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो बोल तिर्च्छालोक में अर्थात् मनुष्य लोक में पाये जाते हैं।

२—अहो भगवान्! क्या रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त के १८ बोलों के जीव मरकर रत्नप्रभा पृथ्वी के पश्चिम चरमान्त में १८ ही बोलपणे उपजते हैं? हाँ गौतम! उपजते हैं। अहो भगवन्! कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं? हे गौतम! १, २, ३, समय की विग्रहगति से उपजते हैं।

३—अहो भगवान्! क्या तिर्च्छालोक के २ बोलों के जीव रत्नप्रभा पृथ्वी के पश्चिम चरमान्त के १८ बोलपणे उपजते हैं? हाँ गौतम! उपजते हैं। अहो भगवान्! कितने समय की विग्रह गति से उपजते हैं? हे गौतम! १, २, ३ समय की विग्रह गति से उपजते हैं।

४—अहो भगवान् ! क्या तिच्छालोक के २ बोलों के जीव तिच्छालोक में दो बोलपणे उपजते हैं ? हाँ गौतम । उपजते हैं । अहो भगवान् ! कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं ? हे गौतम ! १, २, ३, समय की विग्रह गति से उपजते हैं ।

५—अहो भगवान् ! क्या रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त के १८ बोलों के जीव तिच्छालोक में दो बोलपणे (बादर तेउकाय का पर्याप्ता और अपर्याप्ता) उपजते हैं ? हाँ गौतम । उपजते हैं । अहो भगवान् ! कितने समय की विग्रह गति से उपजते हैं ? हे गौतम ! १, २, ३ समय की विग्रहगति से उपजते हैं ।

ये सब मिलाकर ४०० अलावा (१८ × १८ = ३२४, १८ × २ = ३६, २ × २ = ४, १८ × २ = ३६, =४००) हुए ।

जिस तरह पूर्व के चरमान्त से पश्चिम के चरमान्त में तथा तिच्छालोक में कहने से ४०० अलावा हुए, इसी तरह पश्चिम के चरमान्त से पूर्व चरमान्त में तथा तिच्छालोक में कह कर ४०० अलावा कह देने चाहिए । इसी तरह उत्तर चरमान्त से ४०० अलावा और दक्षिण चरमान्त से ४०० अलावा कह देने चाहिए । इस तरह रत्नप्रभा पृथ्वी के चारों दिशा के १६०० अलावा हुए ।

इसी तरह दूसरी नरक से लेकर सातवीं नरक तक कह

देने चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि पूर्व चरमान्त के १८ बोलों के जीव तिर्च्छालोक में दो बोल पणे उपजते हैं और तिर्च्छालोक के दो बोलों के जीव पश्चिम चरमान्त के १८ बोलों के जीवों में उपजते हैं। इनकी विग्रहगति दो समय तीन समय की होती है। ये ७२ अलावा (३६+३६=७२) हुए। इसी तरह चारों दिशा में कह देना चाहिए। चारों दिशा के २८८ अलावा (७२×४=२८८ शर्कर प्रभा के) हुए। इसी तरह सातवीं नरक तक कह देने चाहिए। ये १७२८ अलावा (२८८×६=१७२८) अलावा हुए। ये दो समय तीन समय की विग्रहगति के हुए। और ७८७२ अलावा (१६०० में से २८८ बाकी निकालने से १३१२ रहे। इनको ६ से गुणा करने से ७८७२ अलावा) हुए ये १, २, ३ समय की विग्रहगति के हुए। ये सब मिला कर ११२०० अलावा (१६००+१७२८+७८७२=११२०० अलावा) हुए।

अहो भगवान् ! अधोलोक की स्थावर नाल से ऊर्ध्वलोक की स्थावरनाल में १८ बोलों के जीव १८ बोलपणे कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं ? हे गौतम ! ३, ४ समय की विग्रहगति से उपजते हैं।

अहो भगवान् ! अधोलोक की स्थावर नाल के १८ बोलों के जीव मर कर तिर्च्छालोक के दो बोलपणे उपजते हैं तो कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम !

समय की विग्रहगति क हैं। ये सब अलावा मिला क
१४३०४ (१२०००+२३०४=१४३०४) अलावा हुए।

अहो भगवान्। बीस प्रकार के एकेन्द्रिय जीवों
कितने कर्मों की सत्ता, बन्ध, वेदन और समुद्घात पाई जात
है ? हे गौतम ! आठ कर्मों की सत्ता पाई जाती है। सा
आठ कर्म बांधते हैं, १४ प्रकृतियों को वेदते हैं। ७
ठिकाणों से (४६ तिर्यञ्च के २५ देवता के ३ मनुष्य क
=७४) से आकर एकेन्द्रियों में उपजते हैं।

अहो भगवान्। बीस प्रकार के एकेन्द्रियों में समुद्घात
कितनी पाई जाती है ? हे गौतम। चार समुद्घात (वेदनीय
कषाय, मारणांतिक और वैक्रिय समुद्घात) पाई जाती है।

अहो भगवान्। एकेन्द्रिय जीव किस प्रकार कर्म बांधते
हैं ? हे गौतम ? कितनेक सम स्थिति वाले समविशेषाधिक
कर्म बांधते हैं, २ कितनेक मम स्थिति वाले विपम विशेषाधिक
कर्म बांधते हैं, ३ कितनेक विपम स्थिति वाले समविशेषाधिक
कर्म बांधते हैं, ४ कितनेक विपमस्थिति वाले विपम विशेषा-
धिक कर्म बांधते हैं।

अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम !
एकेन्द्रिय जीव चार प्रकार के हैं—१ समान आयुष्य वाले
साथ उत्पन्न हुए। २ समान आयुष्य वाले विपम (भिन्न
भिन्न समय में) उत्पन्न हुए, ३ विपम आयुष्य वाले साथ
उत्पन्न हुए, ४ विपम आयुष्य वाले विपम (भिन्न भिन्न

समय में) उत्पन्न हुए। इनमें से १ जो जीव *समान आयुष्य वाले साथ उत्पन्न हुए हैं वे सम स्थिति वाले हैं। और सम विशेपाधिक कर्म बाँधते हैं। २ जो जीव समान आयुष्य वाले हैं और विषम उत्पन्न हुए हैं, वे सम स्थिति वाले हैं और विपम विशेपाधिक कर्म बांधते हैं। ३ जो जीव विषम आयुष्य वाले हैं और सम उत्पन्न हुए हैं, वे विपम स्थिति

---

*१ जो जीव सामान आयुष्य वाले और साथ ही उत्पन्न हुए हैं। समान योग वाले होने से परस्पर सामान ही कर्म करते हैं यानो पूर्व बद्ध कर्म की अपेक्षा समान, हीन अथवा अधिक कर्म करते हैं। अधिक कर्म बंध भी पूर्व बद्ध कर्म की अपेक्षा असंख्यात भाग आदि से विशेप अधिक होता है। फिर भी परस्पर समान ही होता है। (२) जो जीव समान आयुवाले हैं किन्तु विपम कालमें उत्पन्न हुए हैं, इनमें योगों की विपमता—भिन्नता होने के कारण ये पूर्वबद्ध कर्म की अपेक्षा विपम विशेपाधिक कर्म बंध करते हैं यानी पूर्व बद्ध कर्म की अपेक्षा कोई संख्यात भाग अधिक, कोई असंख्यात भाग अधिक इस प्रकार भिन्न भिन्न रूप से विशेपाधिक कर्म बन्ध करते हैं। (३) जो विपम यानी भिन्न आयु वाले हैं, किन्तु साथ उत्पन्न हुए हैं वे सामान योग वाले होते हैं। इसलिये पहले भांगे की तरह पूर्व बद्ध कर्म की अपेक्षा परस्पर तुल्य विशेपाधिक कर्म बन्ध करते हैं। (४) जो विपम आयु वाले हैं और विपम यानी भिन्न-२ काल में ही उत्पन्न हुए हैं उनमें योगों की विपमता होती है। इसलिये ये दूसरे भांगे की तरह विपम विशेपाधिक कर्म बन्ध करते हैं।

समय की विग्रहगति क है। ये सब अलावा मिला क
१४३०४ (१२०००+२३०४=१४३०४) अलावा हुए।
अहो भगवान्। बीस प्रकार के एकेन्द्रिय जीवों
कितने कर्मों की सत्ता, बन्ध, वेदन और समुद्घात पाई जाती
है ? हे गौतम ! आठ कर्मों की सत्ता पाई जाती है। सा
आठ कर्म बांधते हैं, १४ प्रकृतियों को वेदते हैं। ७
ठिकाणों से (४६ तिर्यञ्च के २५ देवता के ३ मनुष्य
=७४) से आकर एकेन्द्रियों में उपजते हैं।
अहो भगवान्। बीस प्रकार के एकेन्द्रियों में समुद्घात
कितनी पाई जाती है ? हे गौतम। चार समुद्घात (वेदनीय,
कषाय, मारणांतिक और वैक्रिय समुद्घात) पाई जाती है।
अहो भगवान्। एकेन्द्रिय जीव किस प्रकार कर्म बांधते
हैं ? हे गौतम ! कितनेक सम स्थिति वाले समविशेषाधिक
कर्म बांधते हैं, २ कितनेक सम स्थिति वाले विषम विशेषाधिक
कर्म बांधते हैं, ३ कितनेक विषम स्थिति वाले समविशेषाधिक
कर्म बांधते हैं, ४ कितनेक विषमस्थिति वाले विषम विशेषा-
धिक कर्म बांधते हैं।

अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम !
एकेन्द्रिय जीव चार प्रकार के हैं—१ समान आयुष्य वाले
साथ उत्पन्न हुए। २ समान आयुष्य वाले विषम (भिन्न
भिन्न समय में) उत्पन्न हुए, ३ विषम आयुष्य वाले साथ
उत्पन्न हुए, ४ विषम आयुष्य वाले विषम (भिन्न भिन्न

समय में) उत्पन्न हुए। इनमें से १ जो जीव *समान आयुष्य वाले साथ उत्पन्न हुए हैं वे सम स्थिति वाले हैं। और सम विशेपाधिक कर्म बाँधते हैं। २ जो जीव समान आयुष्य वाले हैं और विपम उत्पन्न हुए हैं, वे सम स्थिति वाले हैं और विपम विशेपाधिक कर्म बांधते हैं। ३ जो जीव विपम आयुष्य वाले हैं और सम उत्पन्न हुए हैं, वे विपम स्थिति

---

*१ जो जीव सामान आयुष्य वाले और साथ ही उत्पन्न हुए हैं वे समान योग वाले होने से परस्पर सामान ही कर्म करते हैं यानो पूर्व बद्ध कर्म की अपेक्षा समान, हीन अथवा अधिक कर्म करते हैं। अधिक कर्म वंध भी पूर्व वद्ध कर्म की अपेक्षा असंख्यात भाग आदि से विशेप अधिक होता है। फिर भी परस्पर समान ही होता है। (२) जो जीव समान आयुवाले हैं किन्तु विपम कालमें उत्पन्न हुए हैं, इनमें योगों की विपमता—भिन्नता होने के कारण ये पूर्ववद्ध कर्म की अपेक्षा विपम विशेपाधिक कर्म वंध करते हैं यानो पूर्व वद्ध कर्म की अपेक्षा कोई संख्यात भाग अधिक, कोई असंख्यात भाग अधिक इस प्रकार भिन्न भिन्न रूप से विशेपाधिक कर्म वन्ध करते हैं। (३) जो विपम यानी भिन्न आयु वाले हैं, किन्तु साथ उत्पन्न हुए हैं वे सामान योग वाले होते हैं। इसलिये पहले भांगे की तरह पूर्व वद्ध कर्म की अपेक्षा परस्पर तुल्य विशेपाधिक कर्म वन्ध करते हैं। (४) जो विपम आयु वाले हैं और विपम यानी भिन्न २ काल में ही उत्पन्न हुए हैं उनमें योगों की विपमता होती है। इसलिये ये दूसरे भांगे की तरह विपम विशेपाधिक कर्म वन्ध करते हैं।

वाले हैं और समविशेषाधिक कर्म बांधते हैं ४—जो जी विषम आयुष्य वाले हैं और विषम उत्पन्न हुए हैं, वे विषम स्थितिवाले हैं और विषम विशेषाधिक कर्म बांधते हैं

"ओघिक उद्देशा सम्पूर्ण हुआ"

दूसरा उद्देशा अनन्तरोपपन्न, चौथा उद्देशा अनन्तराव-गाढ, छठा उद्देशा अनन्तराहारक, आठवाँ उद्देशा अनन्तर-पर्याप्तक, इन चार उद्देशों में एकेन्द्रिय के दश भेद (अपर्याप्त) पाये जाते हैं। इनमें आठ कर्मों की सत्ता होती है। सात कर्मों का बन्ध होता है। १४ कर्म प्रकृतियां वेदते हैं, ७४ ठिकाणों से आकर जीव उपजते हैं, दो समुद्घात (वेदनी कषाय) पाई जाती है। इन चारों उद्देशों में दो भांगे पा जाते हैं—१—सम स्थिति समविशेषाधिक कर्म बांधते है २—समस्थिति विषम विशेषाधिक कर्म बांधते हैं। क्योंकि ये जीव दो प्रकार के हैं—१ समान आयुष्य वाले साथ उत्पन्न हुए, २ समान आयुष्य वाले विषम उत्पन्न हुए। इनमें से जो समान आयुष्य वाले साथ उत्पन्न हुए हैं, ये समस्थिति वाले हैं और सम विशेषाधिक कर्म बांधते हैं। जो समान आयुष्य वाले हैं किन्तु विषम उत्पन्न हुए हैं, वे सम स्थिति वाले हैं और विषम विशेषाधिक कर्म बांधते हैं।

शेष तीसरा, पांचवां, सातवां, नवमा, दशवां और ग्यार-हवां उद्देशा ओघिक उद्देशे (पहले उद्देशे) की माफक कह देने चाहिए।

पहले १४३०४ अलावा हुए थे उनको ७ उद्देशों से गुणा करने से १४३०४×७=१००१२८ अलावा हुए।

दूसरा कृष्णलेशी ओघिक (समुच्चय) शतक, तीसरा नीललेशी ओघिक शतक, चौथा कापोतलेशी ओघिकशतक, पांचवां भवी ओघिक शतक, छठा भवी कृष्णलेशी शतक, सातवां भवी नीललेशी शतक, आठवां भवी कापोतलेशी, और ओघिक शतक, इन आठ शतकों में ११-११ उद्देशे हैं। एक एक शतक में १००१२८—१००१२८ अलावा हैं। कुल ८०१०२४ अलावा (१००१२८×८=८०१०२४ अलावा) हुए।

नवमां ओघिक अभवी शतक, दसवां कृष्णलेशी अभवी शतक, ग्यारहवां नीललेशी अभवी शतक, बारहवां कापोतलेशी अभवी शतक, इन चार शतकों में ९-९ उद्देशे हैं (चरम और अचरम के उद्देशे नहीं होते हैं)। इन ९ उद्देशों में से पाँच उद्देशों के * १४३०४ अलावों से गुणा करने से ७१५२० (५×१४३०४=७१५२०) अलावा एक शतक के हुए। इनको चार शतकों से गुणा करने से २८६०८० अलावा (७१५२०×४=२८६०८० अलावा) हुए। ये सब मिला कर १०८७१०४ अलावा (८०१०२४+२८६०८०= १०८७१०४ अलावा) श्रेणी शतक के हुए।

॥ सेवं भंते। सेवं भंते ॥

---

*चार उद्देशों में मरते नहीं हैं इसलिये उनके अलावा नहीं होते।

थोकड़ा नं० २०२

श्री भगवती जी सूत्र के ३५ वें शतक के १२ अंतर शतकों के १३२ उद्देशों में 'एकेन्द्रिय *महाजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं।—

इसके ३३ द्वार हैं—१ उपपात द्वार, २ परिमाण द्वार, ३ अपहार द्वार, ४ अवगाहना द्वार, ५ बन्ध द्वार, ६ वेदक द्वार, ७ उदय द्वार, ८ उदीरणा द्वार, ९ लेश्या द्वार, १० दृष्टि द्वार, ११ ज्ञान द्वार, १२ योग द्वार, १३ उपयोग द्वार, १४ वर्ण द्वार, १५ उच्छ्वास द्वार, १६ आहार द्वार, १७ विरति द्वार, १८ क्रिया द्वार, १९ बन्धक द्वार, २० संज्ञा द्वार, २१ कषाय द्वार, २२ वेद द्वार, २३ वेदबन्ध द्वार, २४ संज्ञी द्वार, २५ इन्द्रिय द्वार, २६ अनुबन्ध द्वार, २७ काय संवेध द्वार, २८ आहार द्वार, २९ स्थिति द्वार, ३० समुद्घात द्वार, ३१ समोहया असमोहया द्वार, ३२ चयवन द्वार, ३३ उपपात द्वार,

अहो भगवान् ! ×महाजुम्मा (महायुग्म) कितने प्रकार के हैं ? हे गोतम ! महाजुम्मा १६ प्रकार के हैं—जैसे कि—

---

* ३१ वें और ३२ वें शतक में 'खुड्डाग जुम्मा' कहे गये हैं। उनकी अपेक्षा ये 'महाजुम्मा' हैं।

× राशि विशेष को जुम्मा (युग्म) कहते हैं। इसके दो भेद हैं—खुड्डाग जुम्मा (क्षुद्रयुग्म-छोटा युग्म) और महाजुम्मा (महायुग्म-बड़ा युग्म) खुड्डाग जुम्मा तो इकतीसवें और बतीसवें शतक में कह दिये गये हैं। यहाँ महाजुम्मा बतलाये जायेंगे—जिस राशि में प्रति

(१) कडजुम्मा कडजुम्मा जैसे—१६, ३२, ४८, ६४ यावत् संख्याता असंख्याता अनन्ता ।

(२) कडजुम्मा तेओगा—जैसे—१६, ३५, ५१, ६७ यावत् संख्याता असंख्याता अनन्ता ।

(३) कडजुम्मा दावरजुम्मा—जैसे—१८, ३४, ५०, ६६ यावत् संख्याता असंख्याता अनन्ता ।

समय चार चार अपहरते हुए (निकालते हुए) पूर्ण चोकड़ आवे और अपहार समय (निकालने के समय) भी चार चार यानी कडजुम्मा हो उस राशिको 'कडजुम्मा कडजुम्मा कहते हैं क्योंकि अपहार किये जाने वाले द्रव्य की अपेक्षा से और अपहार समयों की अपेक्षा दोनों अपेक्षा से वह कडजुम्मा है । जैसे १६ की राशि जघन्य 'कडजुम्मा कडजुम्मा' राशि है क्योंकि इसमें चार का अपहार करने से अन्त में चार बच जाते हैं और अपहार समय भी चार हैं । इसी तरह कडजुम्मा तेओगा, कडजुम्मा दावरजुम्मा, कडजुम्मा कलियोगा भी जान लेना चाहिए अर्थात् जिस राशि में चार का अपहार करते हुए अन्त में तीन बाकी बच जावें और अपहार समय चार हों उस राशि को 'कडजुम्मातेओगा' कहते हैं । जैसे १६ की संख्या में चार का अपहार करने से अन्त में ३ बाकी बच जाते हैं और अपहार समय ४ होते हैं । इसलिए यह राशि अपहार द्रव्य की अपेक्षा तेओगा है और अपहार समय की अपेक्षा कडजुम्मा है । इसलिए इस राशि को 'कडजुम्मा तेओगा' कहते हैं । इसी तरह १८ की संख्या जघन्य कडजुम्मा दावरजुम्मा है और १७ की संख्या जघन्य 'कडजुम्मा-कलियोगा है ।

(४) कडजुम्मा कलियोगा—जैसे—१७, ३३, ४९, ६५ यावत् संख्याता असंख्याता अनन्ता।

(५) तेओगा कडजुम्मा—जैसे—१२, २८, ४४, ६० यावत् संख्याता असंख्याता अनंता।

(६) तेओगा तेओगा—जैसे—१५, ३१, ४७, ६३ यावत् संख्याता असंख्याता अनंता।

(७) तेओगा दावर जुम्मा—जैसे—१४, ३०, ४६, ६२ यावत् संख्याता असंख्याता अनंता।

(८) तेओगा कलियोगा—जैसे—१३, २९, ४५, ६१ यावत् संख्याता असंख्याता अनंता।

(९) दावर जुम्मा कडजुम्मा—जैसे—८, २४, ४०, ५६ यावत् संख्याता असंख्याता अनंता।

(१०) दावरजुम्मा तेओगा—जैसे—११, २७, ४३, ५९ यावत् संख्याता असंख्याता अनंता।

(११) दावरजुम्मा दावरजुम्मा—जैसे—१०, २६, ४२, ५८ यावत् संख्याता असंख्याता अनंता।

(१२) दावरजुम्मा कलियोगा—जैसे—९, २५, ४१, ५७ यावत् संख्याता असंख्याता अनंता।

(१३) कलियोगा कडजुम्मा—जैसे—४, २०, ३६, ५२ यावत् संख्याता असंख्याता अनन्ता।

(१४) कलियोगा तेओगा—जैसे—७, २३, ३९, ५५ यावत् संख्याता असंख्याता अनन्ता।

(१५) कलियोगा दावरजुम्मा—जैसे–६, २२, ३८, ५४
संख्याता असंख्याता अनन्ता।

(१६) कलियोगा कलियोगा—जैसे—५, २१, ३७, ५३ य
संख्याता असंख्याता अनन्ता।

१—अहो भगवान्! कडजुम्मा कडजुम्मा एकेन्द्रि
कहाँ से आकर उपजते हैं? हे गौतम! मनुष्य तिर्यञ्च औ
...ता इन तीन गति से आकर उपजते हैं। ७४ *ठिकाणों से
आकर उपजते हैं।

२—अहो भगवान्! कडजुम्मा कडजुम्मा एकेन्द्रिय जीव
एक समय में कितने उपजते हैं? हे गौतम! १६, ३२, ४८,
.४ यावत् संख्याता असंख्याता अनन्ता उपजते हैं।

३—अहो भगवान्! कडजुम्मा कडजुम्मा एकेन्द्रिय जीव
एक एक समय में अनन्ता अनन्ता अपहरे (निकाले) तो
कितने समय में निर्लेप होते हैं? (खाली होते हैं) हे गौतम!
अनन्त उत्सर्पिणी अवसर्पिणी पूर्ण होवे तो भी निर्लेप नहीं
होते हैं।

---

* ७४ ठिकाणे इस प्रकार हैं—यहाँ वनस्पति के सूक्ष्म, बादर
...र्याप्त अपर्याप्त ये ४ भेद किये गये हैं। इसलिए तिर्यञ्च के ४६ भेद
...ये गये हैं। मनुष्य के ३ भेद, भवनपति के १०, वाण व्यन्तर के
...ज्योतिषी के ५, और पहला दूसरा देवलोक। ये सब मिला कर
...हुए (४६+३+१०+८+५+२=७४)। इन ७४ ठिकाणों से
...र एकेन्द्रिय उपजते हैं।

४—अहो भगवान् ! उनकी अवगाहना कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट १००० योजन झाझेरी है।

५—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के बन्धक हैं ? हे गौतम ! वे सात कर्मों के बन्धक हैं अबन्धक नहीं और कितनेक जीव आयुष्य कर्म के बन्धक भी हैं और अबन्धक भी हैं।

६—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के वेदक हैं ? हे गौतम ! वे आठों कर्मों के वेदक हैं। साता वेदने वाले भी बहुत हैं और असाता वेदने वाले भी बहुत हैं।

७—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के उदय वाले हैं ? हे गौतम ! वे आठों कर्मों के उदय वाले हैं।

८—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों की उदीरणा वाले हैं ? हे गौतम ! वे छह कर्मों की उदीरणा वाले हैं। आयुष्य और वेदनीय कर्मों की उदीरणा वाले भी हैं और अनुदीरणा वाले भी हैं।

९—अहो भगवान् ! वे जीव कितनी लेश्या वाले हैं ? हे गौतम ! वे कृष्ण, नील, कापोत और तेजो ये ४ लेश्या वाले हैं।

१०—अहो भगवान् ! वे जीव मिथ्यादृष्टि हैं या समदृष्टि हैं ? हे गौतम ! वे मिथ्यादृष्टि हैं।

११—अहो भगवान् ! वे ज्ञानी हैं [illegible] हैं ? हे

१२—अहो भगवान् ! उन जीवों में योग कितने पाये जाते हैं ? हे गौतम ! उनमें एक काय योग पाया जाता है।

१३—अहो भगवान् ! उनमें उपयोग कितने पाये जाते हैं ? हे गौतम ! उनमें दो उपयोग पाये जाते हैं—साकार उपयोग, अनाकार उपयोग।

१४—अहो भगवान् ! क्या उनमें वर्णादि होते हैं ? हे गौतम ! जीव की अपेक्षा वर्णादि नहीं होते हैं, शरीर की अपेक्षा वर्णादि* होते हैं।

१५—अहो भगवान्! क्या वे उच्छ्वासक निःश्वासक हैं? हे गौतम ! वे उच्छ्वासक भी हैं, निःश्वासक भी हैं, नोउच्छ्वासक निःश्वासक भी हैं।

१६—अहो भगवान् ! क्या वे आहारक हैं ? हे गौतम ! वे आहारक भी हैं, अनाहारक भी हैं।

१७—अहो भगवान् ! क्या वे विरति वाले हैं ? हे गौतम ! वे विरति वाले (सर्व विरति वाले और देश विरति वाले) नहीं हैं किन्तु सब अविरति वाले हैं।

१८—अहो भगवान् ! क्या वे सक्रिय (क्रिया वाले) हैं ? हाँ, गौतम ! वे सक्रिय हैं, अक्रिय नहीं हैं।

---

* जीव की अपेक्षा उनमें वर्ण गन्ध रस स्पर्श नहीं होते। दो शरीर (औदारिक तैजस) की अपेक्षा ५ वर्ण २ गन्ध, ५ रस ८ स्पर्श पाये जाते हैं। कार्मण शरीर की अपेक्षा ५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श (शीत उष्ण स्निग्ध रूक्ष) होते हैं।

१९—अहो भगवान्! क्या वे बन्धक हैं? हाँ, गौतम! वे सात कर्म बांधने वाले बहुत हैं और आठ कर्म बांधने वाले भी बहुत हैं।

२०—अहो भगवान्! उनमें कितनी संज्ञा पाई जाती हैं? हे गौतम! उनमें चारों संज्ञा पाई जाती हैं।

२१—अहो भगवान्! उनमें कितने कषाय पाये जाते हैं? हे गौतम! उनमें चारों कषाय पाये जाते हैं।

२२—अहो भगवान्! उनमें कितने वेद पाये जाते हैं? हे गौतम! उनमें सिर्फ एक नपुंसक वेद पाया जाता है।

२३—अहो भगवान्! वे कितने वेद बांधते हैं? हे गौतम! वे तीनों वेद बांधते हैं।

२४—अहो भगवान्! क्या वे संज्ञी हैं या असंज्ञी हैं? हे गौतम! वे सब असंज्ञी हैं।

२५—अहो भगवान! क्या वे सइन्द्रिय हैं या अनिन्द्रिय हैं? हे गौतम! वे सब सइन्द्रिय हैं, अनिन्द्रिय नहीं हैं।

२६—अहो भगवान्! वे कितने काल तक रहते हैं? हे गौतम! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अन्त काल जाव वनस्पति कालो।

२७—अहो भगवान्! क्या उनमें कायसंवेध* होता है? हे गौतम! उनमें कायसंवेध नहीं होता है।

---

*अपनी काया को छोड़कर दूसरी काया में जाना और फिर वापिस उसी काया में आना कायसंवेध कहलाता है।

२८—अहो भगवान् ! वे कितनी दिशा का आहार लेते हैं ? हे गौतम ! व्याघात आसरी सिय तीन दिशा का, सिय चार दिशा का, सिय पांच दिशा का आहार लेते हैं । निर्व्याघात आसरी नियमा छहों दिशा का, २८८ बोलों × का आहार लेते हैं ।

२६—अहो भगवान् ! उनकी स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय उत्कृष्ट * बाईस हजार वर्षकी है ।

... उत्पाद विवक्षित है । उत्पल ... आकर फिर उत्पल में आकर उत्पन्न होते हैं, तब उनका कायसंवेध कहलाता है । किन्तु यहाँ तो कडजुम्मा कडजुम्मा राशि रूप एकेन्द्रियों का उत्पाद विवक्षित है और ये एकेन्द्रिय अनन्त उत्पन्न होते हैं । वे सब वहाँ से निकल कर सजातीय या विजातीय किसी भी काया में उत्पन्न होकर फिर एकेन्द्रियपणे उत्पन्न होवें तब कायसंवेध होता है । किन्तु उन सब एकेन्द्रिय जीवों का वहाँ से निकलना असंभव है । इसलिए सब एकेन्द्रिय जीवों का कायसंवेध नहीं होता है । कडजुम्मा कडजुम्मा राशि रूप एकेन्द्रियों का जो उत्पाद कहा है वह त्रसकाय से आकर उत्पन्न होने की अपेक्षा से कहा है । परन्तु वह वास्तविक उत्पाद नहीं है । क्योंकि एकेन्द्रियों में प्रति समय अनन्त जीवों का उत्पाद होता है । इसलिए यहाँ एकेन्द्रियों की अपेक्षा कायसंवेध असम्भव होने से नहीं कहा गया है । (टीका)

× २८८ बोलों का वर्णन पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के तृतीय भाग में पृष्ठ ६७ पर है ।

* यह स्थिति उनके कडजुम्माकडजुम्मा आदि महाजुम्मा रूप रहने की अपेक्षा से है ।

३०—अहो भगवान् ! उनमें कितनी समुद्घात पाई जाती हैं ? हे गौतम ! उनमें पहले की चार समुद्घात पाई जाती हैं ।

३१—अहो भगवान् ! वे समोहया मरण मरते हैं या असमोहया मरण मरते हैं ? हे गौतम ! वे समोहया और असमोहया दोनों मरण मरते हैं ।

३२—अहो भगवान् ! वे वहाँ से मरकर किस गति में उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! मनुष्य और तिर्यञ्च इन दो गतिओं में उत्पन्न होते हैं (मनुष्य के ३ और तिर्यञ्च के* ४६ इन ४९ ठिकानों में उत्पन्न होते हैं)।

३३—अहो भगवान् ! क्या सब प्राण भूत जीव सत्त्व पहले कडजुम्मा कडजुम्मा रूप से एकेन्द्रिय पणे उत्पन्न हो चुके हैं ? हाँ, गौतम ! अनेक वार अथवा अनन्त वार उत्पन्न हो चुके हैं ।

ये ३३ द्वार कडजुम्मा कडजुम्मा राशि पर कहे गये हैं। इसी तरह शेष १५ जुम्मा ... ... इतनी विशेषता है कि परिमा ... ... अनुसार कहना चाहिए ।

"पहला ओघिक उद्देशा सम्पूर्ण हुआ"

ग्यारह उद्देशों के नाम इस प्रकार हैं—१ ओघिक (समु-

* यहाँ वनस्पति के सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्त ये चार भेद ही किये गये हैं । इसलिए तिर्यञ्च के ४६ भेद कहे गये हैं।

(पढम), २ पढम (प्रथम), ३ अपढम (अप्रथम), ४ चरम, ५ अचरम, ६ पढमपढम (प्रथम प्रथम), ७ पढम अपढम (प्रथम अप्रथम); ८ पढ़म चरम, ९ पढ़म अचरम, १० चरम चरम, ११ चरम अचरम।

प्रथम समय के कडजुम्मा कडजुम्मा के प्रश्नोत्तर विषयक 'पढम उद्देशा' है। उसमें ओधिक उद्देशे के अनुसार ३३ द्वार कह देने चाहिए किन्तु प्रथम समय के उत्पन्न हुए जीवों में १० नाणत्ता (दश बातों में फर्क) हैं—१—उनकी अवगाहन

---

२ पढम—अर्थात् पहले समय के उत्पन्न हुए। ३ अपढम—पहले समय को छोड़कर शेष समय के। (४) चरम—अन्तिम समय के। (५) अचरम—अन्तिम समय को छोड़कर शेष समय के। (६) पढम पढम—एकेन्द्रिय उत्पन्न होने का पहला समय और कडजुम्मा बनने का भी पहला समय। (७) पढम अपढम—एकेन्द्रिय उत्पन्न होने का पहला समय और कडजुम्मा बनने के अपढम यानी पहले समय को छोड़कर शेष समय। (८) पढम चरम—एकेन्द्रिय उत्पन्न होने का पहला समय और कडजुम्मा के बिखरने का अन्तिम समय (९) पढम अचरम—एकेन्द्रिय उत्पन्न होने का पहला समय और कडजुम्मा के अचरम अर्थात् अन्तिम के सिवा शेष समय। (१०) चरम चरम—एकेन्द्रिय का अन्तिम यानी आखिरी मरने का समय और कडजुम्मा बिखरने का भी अन्तिम समय। (११) चरम अचरम—एकेन्द्रिय का अन्तिम मरने का समय और कडजुम्मा के अन्तिम के सिवा शेष समय। तत्त्व केवली गम्य।

जीव अभवी एकेन्द्रिय पणे उत्पन्न नहीं हुए" ऐसा कहना चाहिए।

"ये १२ अन्तर शतकों के १३२ उद्देशा पूर्ण हुए"

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० २०३

श्री भगवती सूत्र के ३६ वें शतक के १२ अन्तर शतकों के १३२ उद्देशों में 'बेइन्द्रिय महाजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं।—

अहो भगवान् ! कडजुम्मा कडजुम्मा बेइन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उपजते हैं ? हे गौतम ! मनुष्य और तिर्यञ्च, इन दो गतियों से आकर उपजते हैं। ४९ ठिकाणों से (४६ तिर्यंच के, ३ मनुष्य के =४९) आकर उपजते हैं।

२—अहो भगवान् ! कडजुम्मा कडजुम्मा बेइन्द्रिय जीव एक समय में कितने उपजते हैं ? हे गौतम ! १६, ३२, ४८ यावत् संख्याता, असंख्याता उपजते हैं।

३—अहो भगवान् ! कडजुम्मा कडजुम्मा बेइन्द्रिय जीव एक एक समय में संख्याता असंख्याता अपहरे (निकाले) तो कितने समय में निर्लेप होते हैं ? हे गौतम ! असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी पूर्ण होवे तो भी निर्लेप नहीं होते हैं।

४—अहो भगवान् ! उनकी अवगाहना कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट १२ योजन की होती है।

५—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के बंधक हैं ?
हे गौतम ! वे सात कर्मों के बंधक हैं और कितनेक जीव आयुष्य कर्म के बंधक भी हैं और अबंधक भी हैं।

६—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के वेदक हैं ?
हे गौतम ! वे आठों कर्मों के वेदक हैं। साता वेदक भी हैं और असाता वेदक भी हैं।

७—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के उदय वाले हैं ?
हे गौतम ! वे आठों कर्मों के उदय वाले हैं।

८—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों की उदीरणा वाले हैं ?
हे गौतम ! वे छह कर्मों की उदीरणा वाले हैं। (आयुष्य और वेदनीय कर्मों की उदीरणा वाले भी हैं और अनुदीरणा वाले भी हैं)।

९—अहो भगवान् ! उनमें कितनी लेश्या पाई जाती हैं ?
हे गौतम ! कृष्ण, नील, कापोत ये तीन लेश्या पाई जाती हैं।

१०—अहो भगवान् ! उनमें कितनी दृष्टि पाई जाती है ?
हे गौतम ! दो दृष्टि (समदृष्टि और मिथ्यादृष्टि) पाई जाती है।

११—अहो भगवान् ! उनमें ज्ञान कितने पाये जाते हैं ?
हे गौतम ! दो ज्ञान और दो अज्ञान पाये जाते हैं।

१२—अहो भगवान् ! उनमें योग कितने पाये जाते हैं ?
हे गौतम ! दो योग (काययोग, वचनयोग) पाये जाते हैं।

१३—अहो भगवान् ! उनमें उपयोग कितने पाये जाते हैं ?
हे गौतम ! उनमें दो उपयोग पाये जाते हैं—साकार उपयोग अनाकार उपयोग।

१४—अहो भगवान् ! क्या उनमें वर्णादि होते हैं ? गौतम ! जीव की अपेक्षा वर्णादि नहीं होते हैं, शरीर की अपेक्षा वर्णादि होते हैं एकेन्द्रिय के माफक।

१५—अहो भगवान् ! क्या वे उच्छ्वासक निःश्वासक हैं ? हे गौतम ! वे उच्छ्वासक भी हैं, निःश्वासक भी हैं, नो उच्छ्वासक निःश्वासक भी हैं।

१६—अहो भगवान् ! क्या वे आहारक हैं ? हे गौतम ! आहारक भी हैं, अनाहारक भी हैं।

१७—अहो भगवान् ! क्या वे विरति वाले हैं या अविरति वाले हैं ? हे गौतम ! वे विरतिवाले (सर्व विरति और देशविरति वाले) नहीं हैं किन्तु सब अविरति वाले हैं।

१८—अहो भगवान् ! क्या वे सक्रिय हैं ? हाँ, गौतम ! वे सक्रिय हैं, अक्रिय नहीं हैं।

१९—अहो भगवान् ! क्या वे वन्धक हैं ? हाँ, गौतम ! वे वन्धक हैं। सात कर्म बांधने वाले बहुत हैं और आठ कर्म बांधने वाले भी बहुत हैं।

२०—अहो भगवान् ! उनमें कितनी संज्ञाएं पाई जाती हैं ? हे गौतम ! उनमें चारों संज्ञाएं पाई जाती हैं।

२१—अहो भगवान् ! उनमें कितने कषाय पाये जाते हैं ? हे गौतम ! उनमें चारों कषाय पाये जाते हैं।

२२—अहो भगवान् ! उनमें कितने वेद पाये जाते हैं ? हे गौतम ! उनमें सिर्फ एक नपुंसक वेद पाया जाता है।

२३—अहो भगवान् ! वे कितने वेद बांधते हैं ? हे गौतम ! वे तीनों वेद बांधते हैं।

२४—अहो भगवान् ! क्या वे संज्ञी हैं या असंज्ञी हैं ? हे गौतम ! वे सब असंज्ञी हैं।

२५ अहो भगवान् ! क्या वे सइन्द्रिय हैं ? हे गौतम ! सइन्द्रिय हैं, अनिन्द्रिय नहीं हैं।

२६—अहो भगवान् ! वे कितने काल तक रहते हैं ? हे गौतम ! जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्यात काल तक रहते हैं।

२७—अहो भगवान् ! क्या उनमें कायसंवेध होता है ? हे गौतम ! कायसंवेध नहीं होता है।

२८—अहो भगवान् ! वे कितनी दिशा का आहार लेते ? हे गौतम ! वे नियमा छह दिशाका, २८८ बोलों का आहार लेते हैं।

२९—अहो भगवान् ! उनकी स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय की उत्कृष्ट*१२ वर्ष की है।

३०—अहो भगवान् ! उनमें कितनी समुद्घात पाई जाती है ? हे गौतम ! पहलेकी तीन समुद्घात पाई जाती हैं।

३१—अहो भगवान् ! वे समोहया मरण मरते हैं या

---

* यह स्थिति उनके कडजुम्मा कडजुम्मा आदि महाजुम्मा रूप ... की अपेक्षा से है।

असमोहया मरण मरते हैं ? हे गौतम ! वे समोहया अस
मोहया दोनों मरण मरते हैं।

३२—अहो ! भगवान् वे वहाँ से मर कर किस गति
उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! मनुष्य और तिर्यंच इन दे
गतियों में उत्पन्न होते हैं (मनुष्य के ३ और तिर्यंच के ४६
इन ४९ ठिकाने उत्पन्न होते हैं।)।

३३—अहो भगवान् ! क्या सब प्राण भूत जीव सत्त्व
बेइन्द्रिय कडजुम्मा कडजुम्मा रूप से पहले
हैं ? हाँ, गौतम ! अनेक वार अथवा अनन्त वार उत्पन्न हो
चुके हैं।

ये सब द्वार कडजुम्मा कडजुम्मा राशि पर कहे गये हैं।
इसी तरह शेष १५ जुम्मा पर भी कह देना चाहिए किन्तु
इतनी विशेषता है कि परिमाण द्वार अपने अपने परिमाण के
अनुसार कहना चाहिए।

॥ पहला ओघिक उद्देशा पूर्ण हुआ ॥

दूसरा उद्देशा पढम (प्रथम समय के उत्पन्न हुए) का
है। वह भी इसी तरह कह देना चाहिए किन्तु इसमें ११ बातों
का (बोलों का) नाणत्ता (फर्क) है। दस तो एकेन्द्रियके समान कह
देना चाहिए। ग्यारहवां नाणत्ता-वचन योग नहीं होता है।
१६ ही महाजुम्मा कह देना चाहिए।

॥ दूसरा उद्देशा सम्पूर्ण हुआ ॥

इन ११ उद्देशों में से पहला, तीसरा और पांचवां, ये तीन

...सरीखे हैं और बाकी ८ उद्देशे (दूसरा, चौथा, छठे से ग्यारहवें तक) सरीखे हैं। चौथा, छठा, आठवां, दसवां, इन चार उद्देशों में ज्ञान नहीं, समदृष्टि नहीं होते हैं।

॥ छत्तीसवें शतक के पहले अन्तरशतक के ११ उद्देशे सम्पूर्ण हुए ॥

इसी तरह दूसरा अन्तरशतक कृष्णलेशी का, तीसरा अन्तरशतक नीललेशी का और चौथा अन्तरशतक कापोतलेशी का कह देना चाहिए किन्तु लेश्या द्वार में लेश्या अपनी अपनी कहनी चाहिए। अनुबन्ध और स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की कहनी चाहिए।

॥ ये चार अन्तर शतक पूर्ण हुए ॥

इसी तरह भवी के चार अन्तर शतक और अभवी के चार अन्तरशतक कह देने चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि भवी के चार अन्तर शतकों में सब जीव पहले भवी रूप से तेइन्द्रियपणे उत्पन्न नहीं हुए ऐसा कहना और अभवी के चार अन्तर शतकों में—ज्ञान नहीं, समदृष्टि नहीं, सब जीव पहले भवी रूप से उत्पन्न हुए नहीं—इस तरह कहना चाहिए।

॥ छत्तीसवें शतकके १२ अन्तरशतकों के १३२ उद्देशे पूर्ण हुए ॥

॥ सेवं भंते। सेवं भंते ॥

थोकड़ा नं० २०४

श्री भगवती सूत्र के ३७ वें शतक के १२ अन्तरशतकों

के १३२ उद्देशों में 'तेइन्द्रिय महाजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—जिस प्रकार ३६ वें शतक के १२ अन्तरशतकों के १३२ उद्देशों में 'वेइन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कहा गया है उसी तरह यहाँ 'तेइन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि तेइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट तीन गाऊ की होती है। स्थिति-जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ४९ अहोरात्रि की होती है।

बाकी सारा अधिकार 'वेइन्द्रिय महाजुम्मा' के समान कह देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० २०५

श्री भगवती सूत्र के ३८ वें शतक के १२ अन्तरशतकों के १३२ उद्देशों में 'चौइन्द्रिय महाजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—जिस तरह ३६ वें शतक के १२ अन्तरशतकों के १३२ उद्देशों में 'वेइन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कहा गया है, उसी तरह यहाँ 'चौइन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि चौइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट

चार गाऊ की होती है। स्थिति—जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट छह महीने की होती है।

बाकी सारा अधिकार 'बेइन्द्रिय महाजुम्मा' के समान कह देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० २०६

श्री भगवती सूत्र के ३९ वें शतक के १२ अन्तरशतकों के १३२ उद्देशों में 'असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय महाजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—जिस प्रकार ३६ वें शतक के १२ अन्तरशतकों के १३२ उद्देशों में 'बेइन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कहा गया है, उसी तरह यहाँ 'असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि 'असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय' की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट १००० योजन की होती है। स्थिति—जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट करोड़पूर्व की होती है। अनुबन्ध जघन्य एक समय का उत्कृष्ट प्रत्येक करोड़ पूर्व का होता है।

अहो भगवान् ! असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय मर कर कहाँ जाता है ? हे गौतम ! चारों गति में जाता है, ठिकाणा (स्थान) आसरी ८७ ठिकाणे (स्थान) में जाता है (४६ तिर्यञ्च, ३ मनुष्य ये ४९ और १० भवनपति, ८ वाणव्यन्तर और पहली नारकी, इन १९ के पर्याप्ता अपर्याप्ता ये ३८ कुल मिला कर ८७ हुए)।

बाकी सारा अधिकार बेइन्द्रिय महाजुम्मा की तरह कह देना चाहिए।

॥ ३९ वें शतक के १२ अन्तरशतकों के १३२ उद्देशे पूर्ण हुए॥

॥ सेवं भंत्ते ! सेवं भंत्ते ॥

थोकड़ा नं० २०७

श्री भगवती सूत्र के ४० वें शतक के २१ अन्तर शतकों के २३१ उद्देशों में 'संज्ञी पंचेन्द्रिय महाजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

इसके ३३ द्वार हैं—१ उपपात द्वार, २ परिमाण द्वार ३ अपहार द्वार, ४ अवगाहना द्वार, ५ बन्ध द्वार, ६ वेदव द्वार, ७ उदय द्वार, ७ उदीरणा द्वार, ९ लेश्या द्वार, १० दृष्टि द्वार, ११ ज्ञान द्वार, १२ योग द्वार, १३ उपयोग द्वार, १४ वर्ण द्वार, १५ उच्छ्वास द्वार, १६ आहार द्वार, १७ विरति द्वार, १८ क्रिया द्वार, १९ बन्धक द्वार, २० संज्ञा द्वार, २१ कषाय द्वार, २२ वेद द्वार, २३ वेद बन्ध द्वार, २४ संज्ञी द्वार, २५ इन्द्रिय द्वार, २६ अनुबन्ध द्वार, २७ कायसंवेध द्वार, २८ आहार द्वार, २९ स्थिति द्वार, ३० समुद्घात द्वार, ३१ समोहया असमोहया द्वार, ३२—च्यवन द्वार (३३) उपपात द्वार।

१—अहो भगवान् ! कडजुम्मा कडजुम्मा संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उपजते हैं ? हे गौतम ! चारों ही गति

...अहो भगवान् ! कडजुम्मा कडजुम्मा संज्ञी प...
जीव, एक समय में कितने उपजते हैं ? हे गौतम ! १६,
१८ यावत् संख्याता असंख्याता उपजते हैं।

३—अहो भगवान् ! कडजुम्मा कडजुम्मा संज्ञी पञ्चे...
जाव एक एक समय में असंख्याता, असंख्याता अप...
(निकाले) तो कितने समय में निर्लेप होते हैं ? हे गौतम...
असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी पूर्ण होवे तो भी निर्ले...
नहीं होते हैं।

४—अहो भगवान् ! उनकी अवगाहना कितनी होती
? हे गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट
००० योजन की होती है।

५—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के बन्धक हैं ? हे
गौतम ! वे सात कर्मों के बन्धक भी बहुत हैं और अबन्धक
भी बहुत हैं। *वेदनीय कर्म के बन्धक ही होते हैं, अबन्धक
नहीं।

६—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के वेदक हैं ?

---

* यहाँ वेदनीय कर्म का बन्ध विशेषतः कहते हैं—उपशान्त
...दि जीव वेदनीय के सिवाय सात कर्मों के अबन्धक हैं।
...थासंभव बन्धक हैं।
...हवें गुणस्थान तक सभी जीव संज्ञी पञ्चेन्द्रिय कहलाते हैं।
...तक अवश्य ही वेदनीय कर्म के बन्धक ही होते हैं, अबन्धक
...हैं।

हे गौतम ! *मोहनीय कर्म के वेदक भी बहुत हैं और अवेदक भी बहुत हैं। बाकी सात कर्मों के वेदक हैं और अवेदक नहीं हैं। साता वेदनीय के वेदक भी बहुत हैं और असाता वेदनीय के वेदक भी बहुत हैं।

७—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के उदय वाले हैं ? हे गौतम ! वे सात कर्मों के उदय वाले बहुत हैं। †मोहनीय कर्म के उदय वाले भी बहुत हैं और अनुदय वाले भी बहुत हैं।

८—अहो भगवान् ! वे कितने कर्मों के उदीरक (उदीरणा

---

* सूक्ष्मसम्पराय गुणस्थान तक संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव मोहनीय कर्म के वेदक होते हैं और उपशान्त मोहादि अवेदक होते हैं। जो उपशान्त मोहादि संज्ञी पंचेन्द्रिय होते हैं वे मोहनीय कर्म के सिवाय सात कर्मों के वेदक होते हैं, परन्तु अवेदक नहीं होते हैं। केवलज्ञानी चार अघाती कर्मों के वेदक हैं, वे इन्द्रियों के द्वारा उपयोग नहीं लगाते हैं इसलिए उन्हें पञ्चेन्द्रिय नहीं कह कर अनिन्द्रिय कहा है।

† दसवें सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान तक मोहनीय कर्म के उदय वाले होते हैं। उपशान्त मोहादि गुणस्थान वाले अनुदय वाले होते हैं।

वेदकपणे में और उदय में इतना फर्क है कि अनुक्रम और उदीरणा करण से उदय में आये हुए (फलोन्मुख—फल देने के लिए सामने आये हुए) कर्म का अनुभव करना वेदकपना है और अनुक्रम से उदय में आये हुए कर्म का अनुभव करना 'उदय' कहलाता है।

करने वाले) हैं ? हे गौतम ! *नाम कर्म और गोत्र कर्म के उदीरक हैं। बाकी छह कर्मों के उदीरक भी हैं और अनुदीरक भी हैं।

९—अहो भगवान् ! उनमें कितनी लेश्या पाई जाती हैं ? हे गौतम ! छह लेश्या पाई जाती हैं।

१०—अहो भगवान् ! उनमें दृष्टि कितनी पाई जाती हैं ? हे गौतम ! तीन दृष्टि पाई जाती है।

---

* सभी संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव क्षीणमोहनीय गुणस्थान तक नाम कर्म और गोत्र कर्म के उदीरक हैं। बाकी छह कर्मों के यथासम्भव उदीरक भी हैं और अनुदीरक भी हैं। उदीरणा का क्रम इस प्रकार है—प्रमत्त संयत गुणस्थान तक सामान्य रूप से आठों कर्मों की उदीरणा होती है। जब आयुष्य कर्म आवलिका मात्र बाकी रह जाता है तब सात कर्मों की उदीरणा होती है। इतनी विशेषता है कि तीसरे गुणस्थान में आठ ही कर्मों की उदीरणा होती है क्योंकि तीसरे गुणस्थान में काल नहीं करता। अप्रमत्त आदि चार गुणस्थानों में वेदनीय और आयुष्य के सिवाय छह कर्मों की उदीरणा होती है। जब सूक्ष्म सम्पराय आवलिका मात्र बाकी रहती है तब मोहनीय, वेदनीय और आयुष्य के सिवाय पांच कर्मों की उदीरणा होती है। उपशान्तमोह गुणस्थान में पांच कर्मों की उदीरणा होती है। क्षीणमोह गुणस्थान का समय जब आवलिका मात्र बाकी रहता है तब नामकर्म और गोत्रकर्म की उदीरणा होती है। सयोगी केवली गुणस्थान में भी इन्हीं दो कर्मों की उदीरणा होती है। अयोगी केवली गुणस्थान में उदीरणा नहीं होती है।

१८—अहो भगवान्! क्या वे सक्रिय (क्रिया वाले) हाँ, गौतम! वे सक्रिय हैं, अक्रिय नहीं हैं।

१९—अहो भगवान्! क्या वे बन्धक हैं? हे गौतम! सात कर्मों के बन्धक हैं, आठ कर्मों के बन्धक हैं, छह कर्मों के बन्धक हैं, एक कर्म के बन्धक भी हैं। अबन्धक नहीं हैं।

२०—अहो भगवान्! वे कितनी संज्ञा वाले हैं? हे गौतम! वे चारों संज्ञा वाले भी हैं, नो संज्ञा वाले भी हैं।

२१—अहो भगवान्! उनमें कितनी कषाय होती हैं? हे गौतम! वे चारों कषाय वाले होते हैं, अकषायी भी होते हैं।

२२—अहो भगवान्! वे कितने वेद वाले होते हैं? हे गौतम! वे तीनों वेद वाले होते हैं और अवेदी भी होते हैं।

२३—अहो भगवान्! वे कितने वेद बान्धते हैं? हे गौतम! वे तीनों वेद बान्धते भी हैं और नहीं भी बांधते हैं।

२४—अहो भगवान्! क्या वे संज्ञी हैं या असंज्ञी हैं? गौतम! वे संज्ञी हैं, असंज्ञी नहीं हैं।

२५—अहो भगवान्! क्या वे सइन्द्रिय हैं या अनिन्द्रिय हैं? हे गौतम! वे सइन्द्रिय हैं, अनिन्द्रिय नहीं हैं।

२६—अहो भगवान्! वे कितने काल तक रहते हैं? अर्थात् उनका अनुबंध क्या है? हे गौतम! वे जघन्य एक समय उत्कृष्ट प्रत्येक सौ सागर झाझेरा (अधिक) काल तक रहते हैं।

११—अहो भगवान् ! वे ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ? हे गौतम ! वे ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी हैं (उनमें चार ज्ञान, तीन अज्ञान पाये जाते हैं)।

१२—अहो भगवान् ! उनमें योग कितने पाये जाते हैं ? हे गौतम ! तीन योग पाये जाते हैं।

१३—अहो भगवान् ! उनमें उपयोग कितने पाये जाते हैं ? हे गौतम ! दो उपयोग पाये जाते हैं—साकार उपयोग, अनाकार उपयोग।

१४—अहो भगवान् ! क्या उनमें वर्णादि होते हैं ? हे गौतम ! जीव की अपेक्षा वर्णादि नहीं होते हैं, शरीर की अपेक्षा वर्णादि होते हैं। औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस इन चार शरीर आसरी वर्णादि २० बोल पाये जाते हैं और कार्मण शरीर आसरी वर्णादि १६ बोल पाये जाते हैं।

१५—अहो भगवान् ! क्या वे उच्छ्वासक निःश्वासक हैं ? हे गौतम ! वे उच्छ्वासक भी हैं निःश्वासक भी हैं, नो उच्छ्वासक निःश्वासक भी हैं।

१६—अहो भगवान् ! क्या वे आहारक हैं ? हे गौतम ! वे आहारक भी हैं, अनाहारक भी हैं।

१७—अहो भगवान् ! क्या वे विरति वाले हैं ? हे गौतम ! वे विरति (सर्व विरति) वाले भी हैं, अविरति भी हैं और विरताविरति वाले भी हैं।

तम ! अनेक बार अथवा अनन्त वार उत्पन्न हो चुके
ये सब द्वार कडजुम्मा कडजुम्मा राशि पर कहे गये
तरह शेष १५ महाजुम्मा पर कह देना चाहिए
तनी विशेषता है कि परिमाण द्वार में अपने अपने परिमाण
नुसार कहना चाहिए।

"पहला ओघिक उद्देशा सम्पूर्ण हुआ"

दूसरा उद्देशा पढम (प्रथम समय के उत्पन्न हुए) संज्ञी
न्द्रिय का है। उसके भी ३३ द्वारों का कथन पहले
ओघिक उद्देशे के समान कह देना चाहिए किन्तु इसमें १६
तों का नाणत्ता (फर्क) है—
) इनकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग होती है।
सात कर्मों का बन्ध होता है।
(३) आठ कर्मों को वेदते हैं। सातावेदने वाले भी बहुत और
असातावेदने वाले भी बहुत हैं
(४) आठ कर्मों का उदय होता है।
) उदीरणा—आयुष्यकर्म के अनुदीरक हैं। वेदनीय कर्म के
उदीरक भी हैं और अनुदीरक भी हैं। शेष छह कर्मों
के उदीरक हैं।
दृष्टि—दृष्टि दो पाई जाती है—समदृष्टि या मिथ्यादृष्टि।
योग—एक काययोग पाया जाता है।
श्वासोच्छ्वास—नो उच्छ्वासक नो निःश्वासक होते हैं
उच्छ्वासक और निःश्वासक नहीं होते हैं)।

२७—अहो भगवान् ! क्या उनमें कायसंवेध होता
हे गौतम ! उनमें कायसंवेध नहीं होता है ।

२८—अहो भगवान् ! वे कितनी दिशा का आहार
हैं ? हे गौतम ! वे नियमा छह दिशा का, २८८ बोलों
आहार लेते हैं ।

२९—अहो भगवान् ! उनकी स्थिति कितनी है ?
गौतम ! जघन्य एक समय की उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की

३०—अहो भगवान् ! उनमें कितने समुद्घात
जाते हैं ? हे गौतम ! उनमें छह समुद्घात (केवली समुद्घ
को छोड़कर) पाए जाते हैं ।

३१—अहो भगवान् ! क्या वे समोहया मरण मरते
या असमोहया मरण मरते हैं ? हे गौतम ! वे समोहया अ
असमोहया दोनों मरण मरते हैं ।

३२—अहो भगवान् ! वे वहां से मरकर किस ग
में उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! वे चारों गतियों में (
ठिकाणों में*) जाते हैं ।

३३—अहो भगवान् ! क्या सब प्राण भूत जीव स
कडजुम्मा कडजुम्मा रूप से पहले उत्पन्न हो चुके हैं ? ह

---

* सात नारकी के पर्याप्ता और अपर्याप्ता ये १४ नारकी,
तिर्यञ्च, ३ मनुष्य और ९८ देवता (१० भवनपति, ८ वाणव्यन्त
५ ज्योतिषी, १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान कुल ४९
पर्याप्ता और अपर्याप्ता) कुल १६१ ठिकाणों में जाते हैं ।

है। बाकी आठ उद्देशे (दूसरा, चौथा, छठा, सातवाँ, आठवाँ, नववाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ) एक समान हैं। चौथा, छठा, आठवाँ, दसवां इन चार उद्देशों में ज्ञान नहीं, समदृष्टि नहीं होते हैं।

जिस तरह कडजुम्मा कडजुम्मा राशि का कहा गया है, उसी तरह बाकी १५ महाजुम्मा भी कह देना चाहिए किन्तु परिमाण द्वार में अपना अपना परिमाण कहना चाहिए।

॥ चालीसवें शतक के प्रथम अन्तरशतक के
११ उद्देशे पूर्ण हुए ॥

कृष्णलेशी कडजुम्मा कडजुम्मा पर ३३ द्वार कह देने चाहिए किन्तु इसमें १२ बातों का नाणत्ता (फर्क) है—१ बन्ध, २ वेदक, ३ उदय, ४ उदीरणा, ५ लेश्या, ६ बन्धक, ७ संज्ञा, ८ कषाय, ९ वेदबन्धक, इन नौ द्वारों का नाणत्ता एकेन्द्रिय के समान कह देना चाहिए।

(१०) वेद द्वार—तीनों वेद पाये जाते हैं, अवेदी नहीं होते हैं।

(११) अनुबन्ध—जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक का होता है।

(१२) स्थिति—जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ३३ सागर की होती है।

बाकी २१ द्वार संज्ञी पंचेन्द्रिय के ओघिक उद्देशा माफक कह देना चाहिए।

जिस तरह कडजुम्मा कडजुम्मा कहा गया है, उसी तरह

(९) विरति—अविरति वाले होते हैं। विरति और विरता विरति वाले नहीं होते हैं।

(१०) बन्धक—सात कर्मों के बन्धक होते हैं, आयुष्य कर्म के अबन्धक होते हैं।

(११) संज्ञा—चार संज्ञा वाले होते हैं, नोसंज्ञा वाले नहीं होते हैं।

(१२) कषाय—चार कषाय वाले होते हैं, अकषायी न होते हैं।

(१३) वेद—तीनों वेद वाले होते हैं, अवेदी नहीं होते हैं।

(१४) वेद बन्ध—तीनों वेद के बन्धक होते हैं, अबन्धक नहीं होते हैं।

(१५) अनुबन्ध—जघन्य और उत्कृष्ट एक समय का अनुबन्ध होता है।

(१६) स्थिति—स्थिति एक समय की होती है।

(१७) समुद्घात—वेदनीय समुद्घात और कषाय समुद्घात, ये दो समुद्घात पाये जाते हैं।

(१८) मरण—वे समोहया और असमोहया दोनों मरण नहीं मरते हैं।

(१९) च्यवन—उनका च्यवन (मरण) नहीं होता है।

बाकी सारा अधिकार पहले उद्देशे के समान जान लेना चाहिए।

पहला, तीसरा और पांचवां ये तीन उद्देशे एक समान

(९) अनुबन्ध—अनुबन्ध एक समय का होता है।

(१०) स्थिति—स्थिति एक समय की होती है।

(११) समुद्घात—वेदनीय समुद्घात और कषाय समुद्घात, ये दो समुद्घात पाए जाते हैं।

(१२) वे समोहया और असमोहया दोनों मरण नहीं मरते हैं।

(१३) च्यवन—च्यवन नहीं होता है।

इसी तरह बाकी १५ महाजुम्मा कह देना चाहिए किन्तु परिमाण द्वार में अपना अपना परिमाण कहना चाहिए।

पहला, तीसरा और पांचवां उद्देशा ये तीन उद्देशा एक समान हैं। बाकी आठ उद्देशा (दूसरा, चौथा, छठा, सातवां, आठवां, नववां, दसवां, ग्यारहवां) एक समान हैं।

॥ चालीसवें शतक के दूसरे अन्तरशतक के ११ उद्देशे पूर्ण हुए॥

जिस तरह कृष्णलेशी का कहा उसी तरह नीललेशी का तीसरा अन्तरशतक कह देना चाहिए किन्तु इसमें नील लेश्या कहनी चाहिए। अनुबन्ध जघन्य एक समय का उत्कृष्ट दस सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक होता है। इसी तरह 'स्थिति' भी कह देनी चाहिए।

॥ चालीसवें शतक के तीसरे अन्तरशतक के ग्यारह उद्देशे पूर्ण हुए॥

जिस तरह कृष्णलेशी का कहा उसी तरह कापोतलेशी चौथा अन्तरशतक कह देना चाहिए किन्तु इसमें कापोत

बाकी १५ महाजुम्मा भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि परिमाण द्वार में अपने अपने परिमाण के अनुसार कहना चाहिए।

॥ यह पहला कृष्णलेशी ओघिक उद्देशा संपूर्ण हुआ ॥

प्रथम कृष्णलेशी कडजुम्मा—कडजुम्मा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का उद्देशा कृष्णलेशी ओघिक उद्देशे की तरह कह देना चाहिए किन्तु इसमें १३ बातों का नाणत्ता है—

(१) अवगाहना—अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग होती है।

(२) बन्धक—वे सात कर्मों के बन्धक होते हैं, आयुष्य के अबन्धक होते हैं।

(३) उदीरणा—वे छह कर्मों के उदीरक होते हैं, वेदनीय कर्म के उदीरक भी होते हैं, और अनुदीरक भी होते हैं। आयुष्यकर्म के अनुदीरक होते हैं।

(४) दृष्टि—दृष्टि दो पाई जाती हैं—समदृष्टि और मिथ्यादृष्टि।

(५) योग—एक काय योग होता है।

(६) वे नो उच्छ्वासक निःश्वासक होते हैं, उच्छ्वासक नहीं होते, निःश्वासक भी नहीं होते हैं।

(७) वे अविरति वाले होते हैं, विरति और विरताविरति वाले नहीं होते हैं।

(८) बन्धक—वे सात कर्मों के बन्धक होते हैं, आयुष्य कर्म के अबन्धक होते हैं।

अनुबन्ध—अनुबन्ध एक समय का होता है।

(१०) स्थिति—स्थिति एक समय की होती है।

(११) समुद्घात—वेदनीय समुद्घात और कषाय समुद्घात; ये दो समुद्घात पाए जाते हैं।

(१२) वे मर... और असमोहया दोनों मरण नहीं मरते हैं।

...नहीं होता है।

...१५ महाजुम्मा कह देना चाहिए किन्तु परिमाण द्वार में अपना अपना परिमाण कहना चाहिए। ...पहला, तीसरा और पांचवां उद्देशा ये तीन उद्देशा एक समान हैं। बाकी आठ उद्देशा (दूसरा, चौथा, छठा, सातवां, आठवां, नववां, दसवां, ग्यारहवां) एक समान हैं।

॥ चालीसवें शतक के दूसरे अन्तरशतक के ११ उद्देशे पूर्ण हुए ॥

जिस तरह कृष्णलेशी का कहा उसी तरह नीललेशी का तीसरा अन्तरशतक कह देना चाहिए किन्तु इसमें नील लेश्या कहनी चाहिए। अनुबन्ध जघन्य एक समय का उत्कृष्ट दस सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक होता है। इसी तरह 'स्थिति' भी कह देनी चाहिए।

॥ चालीसवें शतक के तीसरे अन्तरशतक के ग्यारह उद्देशे पूर्ण हुए ॥

जिस तरह कृष्णलेशी का कहा उसी तरह कापोतलेशी का चौथा अन्तरशतक कह देना चाहिए किन्तु ...

लेश्या कहनी चाहिए। अनुबंध—जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक होता है। इसी तरह 'स्थिति' भी कह देनी चाहिए।

॥ चालीसवें शतक के चौथे अन्तरशतक द्वार के ग्यारह उद्देशे पूर्ण हुए ॥

जिस तरह कृष्णलेश्या का कहा उसी तरह तेजोलेश्या का पांचवां अन्तरशतक कह देना चाहिए किन्तु इसमें तेजोलेश्या कहनी चाहिए। अनुबंध—जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक का होता है। इसी तरह 'स्थिति' भी कह देनी चाहिए। पहले तीसरे और पांचवें उद्देशे में 'नोसंज्ञा' भी कहनी चाहिए क्योंकि तेजोलेश्या सातवें गुणस्थान में भी होती है, वहाँ पर 'संज्ञा' नहीं होती है। शेष पूर्ववत् कह देना चाहिए।

॥ चालीसवें शतक के पांचवें अंतरशतक के ग्यारह उद्देशे पूर्ण हुए ॥

जिस तरह तेजोलेश्या का कहा उसी तरह छठा अन्तरशतक पद्मलेश्या का कह देना चाहिए किन्तु इसमें पद्मलेश्या कहनी चाहिए। अनुबंध जघन्य एक समय का उत्कृष्ट दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक का होता है। स्थिति—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम की होती है।

॥ चालीसवें शतक के छठे अन्तरशतक के ग्यारह उद्देशे पूर्ण हुए ॥

जिस तरह संज्ञी पंचेन्द्रिय का ओघिक शतक कहा गया है, उसी तरह शुक्ललेश्या का सातवां अन्तरशतक कह देना चाहिए। किंतु इसमें शुक्ललेश्या कहनी चाहिए। अनुबन्ध जघन्य एक समय का उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अंतर्मुहूर्त अधिक होता है। स्थिति—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की होती है।

॥ चालीसवें शतक के सातवें अंतरशतक
के ११ उद्देशे पूर्ण हुए ॥

जिस तरह ओघिक और छह लेश्या ये सात अन्तरशतक कहे गये हैं उसी तरह से सात अन्तरशतक भवी जीवों की अपेक्षा कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि सब प्राण भूत जीव सत्त्व भवीपने उत्पन्न नहीं हुए हैं। ४०-१४-११ (शतक ४० वां अन्तरशतक ८ से १४ तक उद्देशा ११-११)

जिस तरह भवी जीव आसरी सात अन्तरशतक कहे गये हैं उसी तरह अभवी जीव के भी सात अन्तरशतक कह देने चाहिए। किन्तु इनमें इतनी बातों का नाणत्ता है—

(१) उपपात द्वार—पांच अनुत्तर विमान टल गये अर्थात् पांच अनुत्तर विमानों में अभवी जीव उत्पन्न नहीं होते हैं।

नोट—उत्पात द्वार और च्यवन द्वार में सब स्थानों के जीवों का उपपात और च्यवन कहा है। वह अपनी अपनी लेश्या के स्थान वाले नारकीय और देवता का समझना चाहिए। तात्पर्य यह है कि नारकी देवता में सब जगह अपनी अपनी लेश्या ही समझनी चाहिए।

(२) दृष्टि—उनमें एक मिथ्यादृष्टि पाई जाती है।

(३) ज्ञान द्वार—उनमें ज्ञान नहीं पाया जाता है किन्तु अज्ञान पाया जाता है।

(४) विरति-उनमें विरति नहीं होते हैं, सब अविरति होते हैं।

(५) अनुबन्ध—जघन्य 'एक समय' उत्कृष्ट प्रत्येक सौ सागर झाझेरा होता है।

(६) स्थिति—जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की होती है (नरक की अपेक्षा)।

(७) समुद्घात—पहले के पांच समुद्घात पाये जाते हैं।

(८) लेश्या—छहों लेश्याएं पाई जाती हैं।

(६) च्यवन—पांच अनुत्तर विमान वर्जकर च्यवन होता है।

सब प्राण भूत जीव सत्त्व अभवीपने उत्पन्न नहीं हुए हैं।

पहला, तीसरा, पांचवां, ये तीन उद्देशा एक समान हैं, बाकी आठ उद्देशा एक समान हैं॥ ४०-१५-११ ॥

अभवी कृष्णलेशी अन्तरशतक में ये तीन नाणत्ता हैं—

(१) लेश्या—एक कृष्णलेश्या पाई जाती है।

अभवी नीललेशी अन्तरशतक में तीन नाणत्ता है—

(१) लेश्या—एक नीललेश्या होती है।

(२) अनुबंध—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक होता है।

(३) स्थिति—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक होती है।

बाकी सारा अधिकार अभवी के ओघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ॥ ४०-१७-११ ॥

अभवी कापोत लेशी अन्तरशतक में तीन नाणत्ता है—

(१) लेश्या—एक कापोतलेश्या होती है।

(२) अनुबंध—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक होता है।

(३) स्थिति—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट—तीन सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक होती है।

बाकी सारा अधिकार अभवी के ओघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ॥ ४०-१८-११ ॥

अभवी तेजोलेशी अन्तरशतक में तीन नाणत्ता है—

(१) लेश्या—एक तेजोलेश्या होती है।

(२) अनुबन्ध—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक होता है।

(३) स्थिति—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दो सागरोपम

बाकी सारा अधिकार अभवी के ओघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ॥ ४०-१९-११ ॥

अभवी पद्मलेशी अन्तरशतक में तीन नाणत्ता है—

(१) लेश्या—एक पद्मलेश्या होती है।

(२) अनुबन्ध—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट-दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक होता है।

(३) स्थिति—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम की होती है।

बाकी सारा अधिकार अभवी के ओघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ॥ ४०-२०-११ ॥

अभवी शुक्ललेशी अन्तरशतक में तीन नाणत्ता है—

(१) लेश्या—एक शुक्ल लेश्या होती है।

(२) अनुबंध—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट २१ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक होता है।

(३)स्थिति—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट २१ सागरोपम की होती है।

बाकी सारा अधिकार अभवी के ओघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ॥ ४०-२१-११ ॥

॥ चालीसवें शतक के २१ अंतरशतकों के
२३१ उद्देशा पूर्ण हुए ॥ (महाजुम्मा सम्पूर्ण)

॥ सेवं भंते ! सेवं भंते ॥

श्री भगवती सूत्र के ४१ वें शतक के १९६ उद्देशों में 'राशिजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

अहो भगवान् ! राशिजुम्मा कितने कहे गये हैं ? हे गौतम ! चार कहे गये हैं—१ कडजुम्मा (कृतयुग्म), २ तेओगा (त्र्योज), ३ दावरजुम्मा (द्वापर युग्म), ४ कलियोगा (कल्योज)।

१—उपपातद्वार—अहो भगवान् ! राशि कडजुम्मा नैरयिक कहाँ से आकर उपजते हैं ? हे गौतम ! ग्यारह स्थानों से आकर उपजते हैं—पांच संज्ञी तिर्यञ्च, पांच असंज्ञी तिर्यञ्च, संख्यात वर्ष की आयुष्य वाला कर्म भूमिज मनुष्य, इन ग्यारह स्थानों से आकर उपजते हैं।

२—परिमाण द्वार—अहो भगवान् ! राशि कडजुम्मा एक समय में कितने उपजते हैं ? हे गौतम ! ४, ८, १२, १६ यावत् संख्याता असंख्याता उपजते हैं।

३—सयंतर निरंतर द्वार—अहो भगवान् ! वे सयंतर और निरंतर कितने उपजते हैं ? हे गौतम ! यदि सयंतर (सान्तर) उपजें तो जघन्य एक समय, उत्कृष्ट, असंख्यात समय के अन्तर से उपजते हैं। यदि निरंतर उपजें तो जघन्य दो समय, उत्कृष्ट असंख्यात समय तक उपजते हैं।

४—अहो भगवान् ! जिस समय वे जीव कडजुम्मा राशि रूप होते हैं क्या उस समय तेओगा राशि रूप होते हैं ? हे

गौतम ! जिस समय वे जीव कडजुम्मा राशि रूप होते हैं, उस समय वे तेओगा राशि रूप नहीं होते हैं। और जिस समय तेओगा राशि रूप होते हैं, उस समय कडजुम्मा राशि रूप नहीं होते हैं। इसी तरह दावरजुम्मा राशि और कलियोगा राशि के साथ भी कह देना चाहिए।

५—अहो भगवान् ! नरक में नेरीया किस तरह उपजता है ? हे गौतम ! जैसे कोई कूदने वाला पुरुष कूदता हुआ अध्यवसाय (इच्छा जन्य) और करण (क्रिया के साधन) द्वारा पूर्व स्थान को छोड़ कर अगले स्थान को अंगीकार करता है उसी तरह नेरीया नरक में उपजता है।

६—अहो भगवान् ! नरक में नेरीया उत्पन्न होता है सो क्या अपनी आत्मा के संयम से उत्पन्न होता है या असंयम से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! असंयम से उत्पन्न होता है, संयम से नहीं।

७—अहो भगवान् ! क्या नरक में नेरीया अपनी आत्मा के असंयम से जीता है या संयम से ? हे गौतम ! असंयम से जीता है, संयम से नहीं।

८—अहो भगवान् ! क्या नरक में नेरीया सलेशी (लेश्या वाला) है या अलेशी (लेश्या रहित) है ? हे गौतम ! सलेशी है, अलेशी नहीं है।

९—अहो भगवान् ! क्या नरक में नेरीया सक्रिय (क्रिया

वाला) है या अक्रिय (क्रिया रहित) है ? हे गौतम ! सक्रिय है, अक्रिय नहीं है ।

१०—अहो भगवान् ! क्या नेरीया उसी भव में मोक्ष जाता है ? हे गौतम ! नेरीया उसी भव में मोक्ष नहीं जाता है।

इसी तरह २४ ही दण्डक में प्रश्नोतर करने चाहिए। इसमें जो नाणत्ता (फर्क) है सो बतलाया जाता है—

१—वनस्पति में उपपात अनन्ता कहना चाहिए, विग्रह गति चार समय तक की होती है ।

२—आगति—श्री पन्नवणा सूत्र के* छठे वक्कंति पद के अनुसार आगति कह देनी चाहिए ।

३—मनुष्य गति में जीव अपनी आत्मा के असंयम से उत्पन्न होते हैं किन्तु जीते हैं सो आत्मा के संयम से भी जीते हैं और असंयम से भी जीते हैं। जो आत्मा के संयम से जीते हैं वे सलेशी और अलेशी दोनों प्रकार के होते हैं। जो अलेशी होते हैं वे नियमा (निश्चित रूप से) अक्रिय होते हैं। जो अक्रिय होते हैं वे नियमा उसी भव में मोक्ष जाते हैं। जो सलेशी होते हैं वे नियमा सक्रिय होते हैं। जो सक्रिय होते हैं उनमें से कितनेक तो उसी भव में मोक्ष चले जाते हैं और कितनेक उसी भव में मोक्ष नहीं जाते हैं।

जो अपनी आत्मा के असंयम से जीते हैं वे नियमा

---

* इसी सेठिया जैन ग्रन्थमाला द्वारा प्रकाशित श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के पहले भाग के पृष्ठ ८८ पर देखिये ।

सलेशी और सक्रिय होते हैं। वे उसी भव में मोक्ष नहीं जाते हैं।

॥ इकतालीसवें शतक का पहला उद्देशा पूर्ण हुआ ॥

जिस तरह कडजुम्मा राशि का कहा गया है, उसी तरह तेओगा राशि का भी एक उद्देशा कह देना चाहिए किन्तु परिमाण द्वार में ३, ७, ११, १५ यावत् संख्याता असंख्याता कहना चाहिए। इसी तरह दावरजुम्मा राशि का भी एक उद्देशा कह देना चाहिए किन्तु परिमाण में, २, ६, १०, १४ यावत् संख्याता असंख्याता कहना चाहिए। इसी तरह कलियोगा राशि का एक उद्देशा कह देना चाहिए किन्तु परिमाण में १, ५, ९, १३ यावत संख्याता असंख्याता कहना चाहिए।

॥ ये ओघिक चार उद्देशा पूर्ण हुए ॥

जिस तरह चार उद्देशा ओघिक के कहे गये हैं, उसी तरह कृष्णलेश्या के चार उद्देशा कह देना चाहिए किन्तु यहाँ पर ज्योतिषी और वैमानिक को छोड़ कर २२ दण्डक ही कहने चाहिए। नारकी में और देवता में जितने स्थानों में कृष्ण-लेश्या हो और जितनी आगति हो वह यथासंभव कह देनी चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य दण्डक में संयम, अलेशी, अक्रिय और तद्भव मोक्ष ये चार बोल नहीं कहने चाहिए क्योंकि* कृष्णलेश्या में चार बोलों का अभाव होता है। शेष सारा अधिकार ओघिक उद्देशे के समान कह देना चाहिए ॥ ४१-८ उद्देशा पूर्ण हुए।

* यहाँ पर भाव लेश्या की अपेक्षा से जानना चाहिए।

इसी तरह चार उद्देशा नीललेश्या के कह देना चाहिए
इसमें अपना स्थान और आगति यथासंभव कह देनी चाहिए
शेष सारा अधिकार कृष्णलेश्या के चार उद्देशों के अनुसार कह
ना चाहिए ॥ ४१-१२ ॥

इसी तरह चार उद्देशा कापोतलेश्या के कह देना चाहिए।
इसमें अपना स्थान और आगति यथासंभव कह देनी चाहिए।
शेष सारा अधिकार कृष्णलेश्या के चार उद्देशों के अनुसार कह
देना चाहिए ॥ ४१-१६ ॥

इसी तरह तेजोलेश्या के भी चार उद्देशा कह देना
चाहिए किन्तु इनमें १८ दण्डक ही कहने चाहिए क्योंकि
नारकी में तेजोलेश्या नहीं होती है और देवताओं में भी पहले
दूसरे देवलोक तक ही होती है। इनमें आगति यथासंभव कह
देनी चाहिए ॥ ४१-२० ॥

इसी तरह पद्मलेश्या के भी चार उद्देशा कह देना
चाहिए किन्तु इनमें तीन दण्डक (तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य और
तीसरे से पांचवें देवलोक तक वैमानिक देव) ही कहने चाहिए
॥ ४१-२४ ॥

इसी तरह शुक्ललेश्या के भी चार उद्देशा कह देने
चाहिए। परन्तु इनमें तीन ही दण्डक कहने चाहिए। जिस
तरह समुच्चय में संयम, सलेशी, अलेशी, सक्रिय, अक्रिय,
तद्भव (उसी भवमें) इत्यादि विस्तार कहा गया है वह सब
यहाँ भी कह देना चाहिए ॥ ४१-२८ ॥

इस तरह ओघिक के ४ उद्देशे और छह लेश्या के २४ उद्देशे, ये सब मिला कर २८ उद्देशे हुए।

२८ उद्देशा ओघिक (समुच्चय) लेश्या सहित।

२८ उद्देशा भवी जीवों के ओघिक के समान।

२८ उद्देशा अभवी जीवों के ओघिक के समान हैं। किन्तु सब जगह 'असंयम' कहना चाहिए।

२८ उद्देशा समदृष्टि जीवों के ओघिक के समान हैं।

२८ उद्देशा मिथ्यादृष्टि जीवों के अभवी के समान हैं।

२८ उद्देशा कृष्णपक्षी जीवों के अभवी के समान हैं।

२८ उद्देशा शुक्लपक्षी जीवों के ओघिक के समान हैं।

१९६.

इस तरह से ४१ वें शतक के १९६ उद्देशे हुए।

अथवा इस तरह से भी गिना जा सकता है—१ जीव और ६ लेश्या, ये ७ हुए। ७ भवी के, ७ अभवी के, ७ समदृष्टि के, ७ मिथ्यादृष्टि के, ७ कृष्णपक्षी के, ७ शुक्लपक्षी के, ये सब ४९ हुए। इनको राशि कडजुम्मा आदि चार से गुणा करने से १९६ उद्देशे हुए॥

सेवं भंते! सेवं भंते!!

॥ इति भगवती सूत्रं समाप्तम्॥

वर्तमान समय में ३२ आगम माने जाते हैं, जिनमें भी भगवती सूत्र पांचवां अंग सूत्र है। यह बड़ा महत्त्वशाली है।

इसमें श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के साथ जिन साधु-साध्वियों के प्रश्नोत्तर हुए, उनके नाम इस प्रकार हैं—

साधु-साध्वी

१. इन्द्रभूति, (गौतम स्वामी) २. अग्निभूति, ३. वायुभूति, ४. मंडितपुत्र, ५. रोह (रोहा अणगार), ६. कुरुदत्त पुत्र, ७. नारदपुत्र, ८. तिष्य, ९. निर्ग्रन्थीपुत्र, १०. सर्वानुभूति, ११. सुनक्षत्र, १२. सिंहमुनि, १३. शिवराजर्षि, १४. ऋषभदत्त, १५. जमाली, १६. स्कन्दक, १७. आनन्द रक्षित, १८. कालास्य वेषी पुत्र, १९. काश्यप, २०. मेदिल (मैथिल), २१. कालियपुत्र, २२. केशी स्वामी, २३. पिङ्गलक, २४. उदायन राजर्षि, २५. गांगेय अणगार, २६. आर्या देवानन्दा, २७. आर्या चन्दनबाला, २८. अइमुत्त (अतिमुक्तक)।

श्रावक और श्राविका

१. ऋषिभद्र, २. शंख, ३. पोक्खली, ४. चेडा राजा, ५. अभिचि कुमार (उदायन राजा का पुत्र), ६. अम्बड परिव्राजक, ७. श्रेणिक राजा, ८. रेवती श्राविका, ९. सुदर्शन, १०. प्रभावती, ११. उत्पला, १२. मृगावती, १३. जयन्ती, १४. चेलना, १५. कोणिक राजा, १६. सहस्रानीक, १७. शतानीक, १८. शिवभद्र, १९. बल, २०. धारिणी, २१. आनन्द, २२. कामदेव, २३. मंडुक, २४. आलम्भिया नगरी के श्रावक, २५. तुंगिया नगरी के श्रावक, २६. सुलसा, २७. शिवानन्दा आदि।

देव

१. शक्रेन्द्र, २. ईशानेन्द्र, ३. चमरेन्द्र, ४. सूर्याभ आदि।

अन्यतीर्थिक और तापस

१. अग्निवैश्यायन, २. अच्छिद्र, ३. अर्जुन गोमायु पुत्र, ४. अन्नपालक, ५. अयंपुल, ६. उदय, ७. कलन्द, ८. कर्णिकार, ९. कालोदायी, १०. गर्दभाल, ११. गोशालक, १२. नर्मोदय, १३. नामोदय, १४. पूरण, १५. वैश्यायन, १६. साण, १७. शैल पालक, १८. शैलोदायी, १९. शैवालोदायी, २०. सुहस्ती, २१. शंख पालक २२. हालाहला, २३. शि राज, २४. सोमिल ब्राह्मण आदि।

देश, नगरी और पर्वत आदि के नाम

१. कयंगला (कृताङ्गला), २. काकन्दी, ३. काशी, ४. कूर्मग्राम, ५. कौशाम्बी, ६. कोलाक सन्निवेश, ७. क्षत्रिय कुंडग्राम, ८. चम्पा, ८. ताम्रलिप्ती, १०. तुंगिया, ११. नालंदा, १२. विभेल सन्निवेश, १३. भारत, १४. मगध, १५. मलय, १६. माहण कुंडग्राम, १७. मिथिला, १८. मेंढिय ग्राम नगर, १९. मोया नगरी, २०. राजगृह, २१. लाढ़देश (लाटदेश), २२. वच्छ देश, २३. वज्र देश, २४. वंगदेश, २५. वाणारसी (वनारस) नगरी, २६. वाणिज्यग्राम, २७. विन्ध्य गिरि, २८. वीतभय, २९. वैशाली, ३०. वैभार पर्वत, ३१. शरवण सन्नि-

...देश, ३२. श्रावस्ती, ३३. सिद्धार्थग्राम, ३४. सिन्धुसौवीर देश, ३५. सुंसुमारपुर, ३६. हस्तिनापुर आदि।

चैत्य और उद्यान

१. अशोक वनखण्ड, २. कोष्ठक चैत्य, ३. गुणशिल, ४. नन्दन, ५. द्युतिपलाश, ६. पूर्णभद्र, ७. पुष्पवतिका, ८. ...दुशाल, ९. मणिभद्र, १०. मृगवन, ११. शंखवन, १२. ...हस्साम्रवन उद्यान, आदि।

उपरोक्त साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका, अन्यतीर्थिक आदि के द्वारा पूछे हुए प्रश्नों के उत्तर श्रमण भगवान् म... ...वीर स्वामी ने दिये हैं। ३६००० प्रश्न पूछे गये हैं। उनक... उत्तर भी विस्तार के साथ भगवान् ने फरमाया है।

इस शास्त्र रूपी समुद्र में से तत्त्व रूपी असूल्य रत्न ग्रहण करने की अभिलाषा वाले भव्य प्राणियों के लिए भगवान् ने चार अनुयोग द्वार फरमाये हैं—

१. द्रव्यानुयोग, २. गणितानुयोग, ३. चरणकरणानु-योग, ४. धर्मकथानुयोग।

१. द्रव्यानुयोग—जीवादि नव तत्त्व, कर्म, छह द्रव्य, सात नय, चार निक्षेप, सप्तभंगी, आठ पक्ष, उत्सर्ग, अपवाद, सामान्य विशेष, आविर्भाव तिरोभाव, कार्य कारणभाव, द्रव्य-गुण, पर्याय, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव इत्यादि वस्तु तत्त्व का जिसमें वर्णन किया जाय उसे द्रव्यानुयोग कहते...

२. गणितानुयोग—क्षेत्र की लम्बाई, चौड़ाई, नदी, द्र पर्वत आदि का परिमाण, देवलोक, विमान, नरक, नरकावासा, ज्योतिषी देवों की चाल, ग्रहनक्षत्र का उदय अस्त, सम, वक्र होना, वर्गमूल, घन आदि की फलावट का वर्णन जिसमें किया जाय उसे गणितानुयोग कहते हैं।

३. चरणकरणानुयोग—मुनि के पांच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति, दस प्रकार का यति धर्म, सतरह प्रकार का संयम, बारह प्रकार का तप, पचीस प्रकार की प्रतिलेखना, आहार के ४७ दोष, १२४ अतिचार तथा श्रावक के बारह व्रत, ग्यारह पडिमा, सामायिक पौषध आदि का वर्णन जिसमें किया जाय उसे चरणकरणानुयोग कहते हैं।

४. धर्मकथानुयोग—तीर्थङ्कर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, प्रतिवासुदेव आदि ६३ श्लाघ्य (प्रशंसा योग्य) पुरुषों का जीवन चरित्र तथा मांडलिक राजा, सामान्य राजा, सेठ, सेनापति आदि का जीवन चरित्र और न्याय नीति, हेतु, युक्ति अलंकार आदि का वर्णन जिसमें किया जाय उसे धर्मकथानुयोग कहते हैं।

इन चार अनुयोगों में द्रव्यानुयोग कार्य रूप है, शेष ती अनुयोग इसके कारण रूप हैं। यद्यपि इस भगवती सूत्र चारों अनुयोग द्वारों का समावेश है तथापि द्रव्यानुयोग क वर्णन विशेष रूप से है। इसीलिए पूर्व महर्षियों ने इस भगवती को द्रव्यानुयोग के महानिधि की उपमा दी है।

१. श्री भगवती सूत्र का मूल श्रुतस्कन्ध एक है।

२. भगवती सूत्र के मूल शतक ४१ हैं।

३. भगवती सूत्र के अन्तर शतक १३८ हैं। बत्तीसवें शतक तक एक एक शतक है।

तेतीसवें शतक से उनचालीसवें शतक तक बारह बारह अन्तरशतक हैं। चालीसवें शतक के २१ अन्तरशतक हैं। इकतालीसवें शतक में अन्तरशतक नहीं है। इस प्रकार कुल १३८ अन्तरशतक (३२+८४+२१+१=१३८) हैं।

४. भगवती सूत्र के १९ वर्ग हैं।

५. भगवती सूत्र के १९२४ उद्देशा हैं—

पहले शतक के १० उद्देशा, दूसरे शतक के १० उद्देशा, तीसरे शतक के १० उद्देशा, चौथे शतक के १० उद्देशा, पांचवें शतक के १० उद्देशा, छठे शतक के १० उद्देशा, सातवें शतक के १० उद्देशा, आठवें शतक के १० उद्देशा, नवमें शतक के ३४ उद्देशा, दसवें शतक के ३४ उद्देशा, ग्यारहवें शतक के १२ उद्देशा, बारहवें शतक के १० उद्देशा, तेरहवें शतक के १० उद्देशा, चौदहवें शतक के १० उद्देशा, पन्द्रहवां शतक १, सोलहवें शतक के १४ उद्देशा, सतरहवें शतक के १७ उद्देशा, अठारहवें शतक के १० उद्देशा, उन्नीसवें शतक के १० उद्देशा, बीसवें शतक के १० उद्देशा, इक्कीसवें शतक के ८० उद्देशा, बाईसवें शतक के ६० उद्देशा, तेईसवें शतक के ५० उद्देशा, चौबीसवें शतक के २४ उद्देशा, पचीसवें शतक के १२ उद्देशा, छब्बी-

सवें शतक के ११ उद्देशा, सत्ताईसवें शतक के ११ उद्देशा, अठाईसवें शतक के ११ उद्देशा, उनतीसवें शतक के ११ उद्देशा, तीसवें शतक के ११ उद्देशा, इकतीसवें शतक के २८ उद्देशा, बत्तीसवें शतक के २८ उद्देशा, तेतीसवें शतक के १२४ उद्देशा, चौतीसवें शतक के १२४ उद्देशा, पैंतीसवें शतक के १३२ उद्देशा, छत्तीसवें शतक के १३२ उद्देशा, सैंतीसवें शतक के १३२ उद्देशा, अड़तीसवें शतक के १३२ उद्देशा, उनचालीसवें शतक के १३२ उद्देशा, चालीसवें शतक के २३१ उद्देशा, इकतालीसवें शतक के १९६ उद्देशा।

कुल १९२४ उद्देशा हैं।

६. भगवती सूत्र वर्तमान समय में करीब १५७७५ श्लोक परिमाण का है।

७. भगवती सूत्र की टीका वर्तमान समय में १८००० श्लोक परिमाण की है।

८. भगवती सूत्र की वाचना ६७ दिन में दी जाती है। गोशालक के पन्द्रहवें शतक की वाचना दो दिन में देने से ६७ दिन लगते हैं और एक दिन में वाचना पूरी हो जाय तो ६६ दिन ही लगते हैं।

१६. पहले शतक से आठवें शतक तक प्रत्येक शतक दो दो दिन में वंचाया जाता है। इनके १६ दिन हुए।

१८. नवमें से चौदहवें शतक तक प्रत्येक शतक की वाचना तीन दिन में दी जाती है। इनके १८ दिन हुए।

१. पन्द्रहवें गोशालक के शतक की वाचना एक दि
दी जाती है। यदि एक दिन में पूरी न हो तो दू
दिन आयंबिल तप करके वाचना पूरी करनी चाहिए
१५. सोलहवें से बीसवें शतक तक प्रत्येक शतक क
वाचना तीन तीन दिन में दी जाती है। इनके १५
दिन हुए।
३. इक्कीसवां, बाईसवां, तेईसवां, इन तीन शतकों की
वाचना एक एक दिन में दी जाती है।
४. चौवीसवां, पचीसवां, इन दो शतकों की वाचना
दो दो दिन में दी जाती है।
१. छब्बीसवें शतक से तेतीसवें शतक तक इन आठ
शतकों की वाचना एक दिन में दी जाती है।
८. चौतीसवें शतक से इकतालीसवें शतक तक, इन
आठ शतकों की वाचना प्रत्येक की एक एक दिन
में दी जाती है। इनके आठ दिन हुए।
इस प्रकार अपने शिष्यों को भगवती सूत्र की वा[illegible]
७ दिन में देनी चाहिए। वाचना लेने वाले मुनियों [illegible]
ायम्बिल आदि तपश्चर्या करनी चाहिए।
भगवती सूत्र की निर्युक्ति श्री भद्रबाहु स्वामी ने बनाई है।
भगवती सूत्र की चूर्णि पूर्वधर आचार्यों ने बनाई है।
भगवती सूत्र की टीका जो वर्तमान में उपलब्ध है वह
श्री अभयदेव सूरि ने बनाई है।

१२. भगवती सूत्र के पाँच नाम हैं:—

१. भगवती सूत्र—यह लोकप्रसिद्ध नाम है।

२. पञ्चमाङ्ग—बारह अङ्ग सूत्रों में यह पांचवां अङ्ग सूत्र है इसलिए इसको पञ्चमाङ्ग कहा है।

३. विवाहपण्णत्ति—यह प्राकृत भाषा का नाम है। जिसका संस्कृत नाम होता है—'व्याख्या प्रज्ञप्ति' अर्थात् जिसमें विस्तार के साथ तत्त्वों की व्याख्या की गई है।

४. शिव शान्ति—यह शिव (मोक्ष) और शान्ति को देने वाला है इसलिए पूर्व महर्षियों ने इसका नाम 'शिव शान्ति' रखा है।

५. नवरंगी—नये नये प्रश्नोत्तर होने से इसे 'नवरंगी' कहा जाता है।

यह भगवती सूत्र महाप्रभावशाली है। इसका पठन, पाठन, मनन, चिन्तन करने से एवं भक्तिपूर्वक आराधना करने से जीवों को ज्ञान दर्शन चारित्र का लाभ होता है। तीर्थङ्कर भगवान् अनादि काल से इस भगवती सूत्र को फरमाते आये हैं। इसकी आराधना करने से भूतकाल में अनन्त जीव मोक्ष में गये हैं। वर्तमान काल में महाविदेह क्षेत्र में से मोक्ष जाते हैं और भविष्य काल में अनन्त जीव मोक्ष जावेंगे।

इस भगवती सूत्र के प्रत्येक शतक और उद्देशा के अन्त

में भगवान् गौतम स्वामी ने 'सेवं भंते ! सेवं भंते !!' ये शब्द कहे हैं। जिनका अर्थ है कि हे भगवन् ! जैसा आप तत्त्व फरमाते हैं वह वैसा ही है, यथार्थ है, सत्य है, भव्य प्राणियों के लिए कल्याणकारक है। ये शब्द कहकर गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी के प्रति अपनी अतिशय विनय भक्ति एवं पूज्य भाव प्रदर्शित किये हैं।

इसलिए यहाँ भी प्रत्येक थोकड़े के अन्त में "सेवं भंते ! सेवं भंते !!" ये शब्द रखे गये हैं ॥

"सेवं भंते ! सेवं भंते !!
तमेव सच्चं णीस्संकं जं जिणेहिं पवेइयम्"

श्री सेठिया ग्रन्थमाला के प्रकाशनों की सूची

श्री जैन सिद्धान्त बोल संग्रह
भाग १ से ७, प्रत्येक भाग का ३॥)
आचारांग सूत्र प्र० श्रु० सार्थ ३॥)
प्रश्न व्याकरण सूत्र सार्थ ३।=)
उत्तराध्ययन सूत्र सार्थ ५॥)
उत्तराध्ययन सूत्र अ० १ से ४ सार्थ १)
,, ,, ,, (श्लोक) ॥=)
दशवैकालिक सूत्र (श्लोक) ।)
नमिपवज्जा सार्थ ।)
आर्हत प्रवचन १।)
जैन सिद्धान्त कौमुदी १॥)
अर्द्ध मागधी धातुरूपावली ।=)
,, ,, शब्द रूपावली =)
पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों का भाग
१ से ३, प्रत्येक का ॥)
भगवती सूत्र के थोकड़ों का
भाग १ ॥)
भगवती सूत्र के थोकड़ों का भाग
२ से ५ तक प्रत्येक भाग का ॥=)
भगवती सूत्र के थोकड़ों का
भाग ६ ०) ८२ न० पै०
भगवती सूत्र के थोकड़ों का
भाग ७ ०) ६२ न० पै०
भगवती सूत्र के थोकड़ों का
भाग ८ ०) ८५ न० पै०
भगवती सूत्र के थोकड़ों का
भाग ९ ०) ६२ न० पै०
पर्याप्त बोल का थोकड़ा ०) १९ न० पै०

प्रकरण थोकड़ा संग्रह दूसरा भाग
प्रस्तार रत्नावली
सम्यक्त्व के ६७ बोल ०)
सरल बोध सार संग्रह
गणधरवाद भाग १, २, ३
सामायिक सूत्र सार्थ ०) १
सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र मूल ०)
प्रतिक्रमण सूत्र सार्थ ०) ३१
आनुपूर्वी ०) ५
कर्तव्य कौमुदी दूसरा भाग
सूक्ति संग्रह
उपदेश शतक
मुक्ति के पथ पर
अपरिचिता
हिन्दी बाल शिक्षा छठा भाग
शिक्षा संग्रह पहला भाग
शिक्षा सार संग्रह
संक्षिप्त कानून संग्रह
मांगलिक स्तवन संग्रह २ रा भाग
वृहदालोयणा
विनयचन्द चौबीसी ०)
जैन विविध ढाल संग्रह
अंजना सती का रास
अन्य जगह से छपे हुए—
सुख विपाक
जैनागम तत्त्व दीपिका
श्री लोक नाम माला
तुलसी का जैनी कोष